हिन्दुस्तानी किताबों का क्लासिक

ज्ञान
प्रगति
शान्ति

सफेद लहू

नानक सिंह

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

(प्रस्तावना)

हिंदुस्तान एक विशाल देश है, जो अगरचे (हालाँकि) तहजीबी हैसियत से एक है, मगर फिर भी उन रिश्तों को मजबूत बनाने की जरूरत है जिनसे वह एक वाहिद (एकल), ताकतवर और तरक्कीपसंद कौम बन सके।

हमारे मुल्क में इतनी भाषाएँ हैं जिनकी तादाद दुनिया के किसी भी मुल्क में बोली जाने वाली भाषाओं से ज्यादा है, मगर बदकिस्मती से हमें अपनी पड़ोसी भाषाओं से न तो दिलचस्पी है और न ही उनकी जानकारी, बल्कि अपनी भाषाओं से ज्यादा हम मग़रिब (पश्चिम) की भाषाओं जैसे अंग्रेजी, फ्रांसीसी, जर्मन आदि के सामाजिक और अदबी (साहित्यिक) परिदृश्य से वाकिफ हैं।

मुल्क के जज्बाती और तहजीबी इत्तेहाद (एकता) के लिए यह निहायत जरूरी है कि हमारे शहरी एक-दूसरे की भाषाओं की बेहतरीन तस्नीफात (रचनाओं) से परिचित हों, और इस तरह एक-दूसरे के तौर-तरीके और अदबी वसूलों को करीब से जानें और समझें।

मग़रिब में भी बहुत सी कौमें हैं, हर एक की अपनी अलग भाषा है, मगर वे लोग एक-दूसरे के अदब को बहुत अच्छी तरह जानते हैं। हमारे मुल्क में हालात इसके बिल्कुल उलट हैं। मग़रिबी भाषा में जब कोई अच्छी किताब छपती है तो वह तुरंत दूसरी भाषाओं में अनुवाद हो जाती है, लेकिन हिंदुस्तान में हम, एक कौम होते हुए भी, यह तक नहीं जानते कि हमारे पड़ोसी की भाषा में क्या लिखा जा रहा है। वैसे हालात बदल रहे हैं, मगर इस बदलाव की रफ्तार बहुत धीमी है।

इस सूरत-ए-हाल को मद्देनजर रखते हुए, हुकूमत ने एक स्कीम बनाई है कि हर भाषा की मौजूदा या लगभग मौजूदा दौर की चुनिंदा किताबें दूसरी भाषाओं में अनुवाद की जाएं। यह किताबें आम लोगों की दिलचस्पी की होंगी, मसलन: मुख्तसर अफसाने (लघुकथाएं), उपन्यास, दिलचस्प सफरनामे, या जीवनियां आदि। ऐसी लोकप्रिय रचनाओं का अनुवाद किया जाएगा जो किसी भी भाषाई क्षेत्र की जीवन शैली, सामाजिक और तहजीबी गतिविधियों, जज्बाती कैफियतों और अरमानों की झलक पेश कर सकें।

उम्मीद की जाती है कि यह प्रोजेक्ट हमारे मुल्क के विभिन्न भाषाई समाजों में आपसी समझ और जज्बाती एकता का काम करेगा और इस मकसद में काफी मदद देगा।

विभिन्न हिंदुस्तानी भाषाओं से उल्लेखनीय, उपयोगी और दिलचस्प किताबों का चुनाव और फिर अनुवाद करना आसान काम नहीं है। हम अपनी उन समितियों, अपने सलाहकारों और अनुवादकों के आभारी हैं, जिनकी रहनुमाई (मार्गदर्शन) और सहयोग के बिना इस किस्म का कोई भी प्लान अमली तौर पर (व्यावहारिक रूप से) मुमकिन नहीं हो सकता था।

बालकृष्ण केस्कर

भूमिका

साहित्य के इतिहास में पहले कविता की रचना हुई, उसके बाद गद्य । और गद्य में पहले धार्मिक शिक्षा और धार्मिक कहानियों ने जन्म लिया। फिर कहानियों ने जन्म लिया और उसके बाद शुद्ध साहित्य और उपन्यास। साहित्य में उस समय रचना होती है जब समाज में चेतना जागृत होती है और उसे अपने सभी अंगों को साथ लेकर चलने और उन्हें पूरा काम करने की आवश्यकता महसूस होती है।

पहले धार्मिक पेशवाओं की अनोखी और बेदाग जिंदगियां सभी मनुष्यों के लिए उदाहरण के तौर पर पेश की जाती हैं। उनका आंतरिक शक्तियों के बल पर सारे पापों से मुक्त होने का काम लिया जाता है। आम इंसान इन किताबों को शिक्षा और रोशनी प्राप्त करने के लिए पढ़ते हैं, साहित्य समझकर नहीं। यह हालत उपन्यास के पैदा होने से पहले की है। इसे हम धार्मिक कहानियों का दौर कह सकते हैं। पश्चिमी शिक्षा के फैलने से पहले पंजाबी साहित्य की यही हालत थी।

इसके बाद लेखक अधिक विचार-विमर्श के साथ ऐतिहासिक घटनाओं के साथ-साथ धार्मिक कहानियों को सम्मान के साथ लिखना शुरू करते हैं। मतलब वही है जो पहले था, यानी आदर्श जिंदगियां पेश करके समाज को ऊपर उठाना; 'गुरू नानक चमत्कार', 'कल्गीधर चमत्कार' आदि किताबें उसी युग की हैं।

बाद में ऐतिहासिक रूप वाली लेकिन काल्पनिक कहानियाँ शुरू होती हैं। यह उपन्यास की असली शुरुआत है क्योंकि इसमें कच्चा माल तो काल्पनिक होता है लेकिन इसका संबंध किसी ऐतिहासिक घटना या किसी ऐतिहासिक जीवन से जुड़ा होता है ताकि पढ़ने वाले उससे अधिक प्रभावित हों। इस हालत में भी उद्देश्य यही होता है कि आदर्श जीवन को पेश करके समाज के लिए सम्मान पैदा किया जाए। इसे भी उपन्यास की शुरुआत कहा जा सकता है क्योंकि इसमें आदर्श जिंदगियों और आदर्श बातों का ही जिक्र होता है। समाज की हूबहू हालत बयान नहीं की जाती है और न ही आम इंसानी जिंदगी के ढांचे को लेकर किसी चरित्र को उभरने ककई कोशिश होती है ।

पृष्ठ 7

'सुंदरी', 'बिजे सिंह' आदि किताबें इस दौर के नमूने हैं। ये किताबें सिख इतिहास के रंग में रंगी हुई हैं और सिख धर्म और पंथ में आस्था बढ़ाने के लिए बहुत कारगर हैं, लेकिन इनमें किसी पुरुष या महिला के चरित्र को हालातों के अनुसार नहीं दिखाया गया, बल्कि 'सुंदरी', 'बिजे सिंह' आदि के चरित्र को आदर्श ढांचे में ढाला गया है। उनके दिलों में कभी किसी प्रकार की बुराई नहीं आती, न ही कोई नैतिक द्वंद्व पैदा होता है। सिख, आदर्श सिख के रूप में और मुसलमान आमतौर पर सभी जालिम और ईसा के रूप में दिखाए गए हैं।

उपन्यास में हर चरित्र का अपना काम होता है और वह हालात और विशेषताओं के अनुसार होता है। किसी का काम दूसरे से नहीं मिलता। न ही सबको एक ही रस्सी में बांधा जा सकता है। मानवीय चरित्र एक मिली-जुली सी चीज है। इसमें अच्छे और बुरे दोनों गुण मिले होते हैं। अच्छे से अच्छे आदमी में भी कभी सुस्ती या कमजोरी आ जाती है और बुरे से बुरे आदमी पर भी कभी अच्छाई का साया पड़ जाता है। न तो कोई पूरी तरह से अच्छा है और न बुरा। चोर और डाकू भी कभी अपने बाल-बच्चों में बैठकर नेकी का जज्बा महसूस करते हैं और अपने दिल की मासूमियत के नशे में झूम उठते हैं। कभी-कभी बड़े गंभीर और उदार लोग किसी अनजान या मामूली सी शख्सियत के सवाल पर झिझला उठते हैं। बड़े-बड़े बहादुर योद्धा भी दर्द से रोते और चिल्लाते हैं!

जैसे-जैसे वक्त गुजरता जाता है, मानवीय चरित्र की बनावट में खोज बढ़ती जाती है। पहले लेखकों के सामने बड़े-बड़े मसले यही होते थे कि एक कौम दूसरी कौम के साथ ज्यादती करना चाहती है, या किसी पुरुष की कमजोरी से फायदा उठाकर किसी की अस्मत (इज्जत) लूटना चाहती है। और दूसरा शख्स महज नेकी के जज्बे के तहत उसकी हिफाजत के लिए अपनी जान की बाजी लगाने के लिए तैयार हो जाता है, लेकिन अब सामाजिक जिंदगी इतनी सादा नहीं रही। इसकी गुत्थियां आसानी से समझ में आने वाली नहीं हैं। अब तो शिक्षा और आपसी मेल-जोल के बढ़ने से कई तरह की बुराइयां घुल-मिल गई हैं और मानवीय चरित्र एक बहुत बड़ा पहेली बन गया है।

पृष्ठ 8

उपन्यासकार का काम महज कहानी बनाना ही नहीं, बल्कि जरूरत के अनुसार हर एक चरित्र को उभारना है। अगर समाज का चरित्र और उसके साथ आने वाले लोगों की निजी जिंदगी बहुत उलझ गई है, तो उपन्यासकार का काम भी बहुत मुश्किल हो गया है। एक अच्छे उपन्यासकार के लिए जरूरी है कि वह चरित्र को समझने की काबिलियत रखता हो। उसे सारे हिंदू, मुसलमान, जालिम और भले

और सारे सिख 'गोरख-धंधे' में न दिखाए। उसे पता हो कि हिंदुओं, मुसलमानों में भी अच्छे आदमी हो सकते हैं और सिखों में भी बुरे आदमी हो सकते हैं। दूसरे लेखकों के लिए मुमकिन है कि थोड़ी बहुत शिक्षा ही काफी हो, लेकिन उपन्यासकार के लिए जरूरी है कि उसे मजहब, दर्शन, विशेषकर मनोविज्ञान, इतिहास, भूगोल, विज्ञान, साहित्य, अपने समाज की जानकारी और अपने पड़ोसियों के प्रति हमदर्दी के जज्बे के साथ जानकारी हो।

ऐसी जानकारी जल्दी नहीं आती। इसीलिए उपन्यास, साहित्य की कई किस्मों के बाद पैदा होता है। इसके अलावा उपन्यास की रचना के लिए यह जरूरी है कि समाज की हालत किसी खास मुकाम तक पहुँच चुकी हो। जिस कौम में अभी सामाजिक हालत ही नहीं आई, उसमें उपन्यास कैसे पैदा होगा? सामाजिक हालत के लिए जरूरी है कि पुरुषों और महिलाओं का रिश्ता मालिक और गुलाम वाला न हो। उनके आपसी हक में कुछ बराबरी हो और जो कुछ कमियां रह गई हों, उनके सुधार की गुंजाइश हो। साथ ही एक कौम की दूसरी कौम पर ज्यादती हमेशा के लिए न रह सके। आजादी की गुंजाइश हो या कम-से-कम इसकी उम्मीद ही सही, समाज को बेदार रखे हुए हो।

यह हालत हमारे मुल्क में अभी तक नहीं थी। अब आहिस्ता-आहिस्ता आ रही है। इसलिए उपन्यास भी धीरे-धीरे बढ़ रहा है। सामाजिक कमियों के वक्त जो उपन्यास लिखे जाते हैं, वे सामाजिक सुधार के होते हैं, जैसे भाई वीर सिंह जी का उपन्यास 'सुभाग जी दा सुधार'। इसमें औरत की मुसीबतें पेश की गई हैं। बाबा नौध सिंह का चरित्र महज आदर्श चरित्र ही नहीं, उसमें एक खास बराबरी और आम हमदर्दी दिखाई गई है कि बाबा सब का दुख बांटने लगता है। उसकी शख्सियत में ऐसे अनोखे गुण हैं जो उसे दूसरे चरित्रों में विशिष्ट करते हैं। इसीलिए यह उपन्यास भाई साहिब (वीर सिंह) के पिछले दूसरे उपन्यासों से बेहतर और सही मायनों में उपन्यास है!

भाई नानक सिंह के उपन्यास भी सुधार वाले हैं। उन्होंने इससे पहले 'मिठ्ठा महुरा', 'प्रेम संगीत', 'काल चक्र' आदि उपन्यास लिखे हैं और वे पंजाबी साहित्य के पाठकों में अच्छी तरह पहचाने जाते हैं।

पृष्ठ 9

लेकिन जो कमाल उन्होंने 'सफेद खून' (उपन्यास) लिखने में दिखाया है, वह पहले नहीं दिखाया था। पहले तो वह समाज की कोई एक-दो कमियों को ही उपन्यास के लिए लिखते थे, लेकिन इस बार तो सारे समाज को मजबूत हाथ से झकझोरा है और हर तरफ से वह चोटें लगाई हैं कि इस उपन्यास को

मुल्क के कोने-कोने तक पहुँचाया जाए तो बड़े सुधार की उम्मीद की जा सकती है। जहालत, छूत-छात, नशीली दवाओं का इस्तेमाल, ब्याह-शादी से संबंधित बुरी रस्में, औरत की जाति, खासकर विधवा, गुरुद्वारों की तरफ से लापरवाही, बात-बात पर झगड़े, सट्टेबाजी आदि की बीमारियों और भीड़-चाल, यह सब इस खूबसूरती से इस उपन्यास में गूंथे हैं कि पढ़ने वाले के दिल पर बहुत गहरा असर पड़ता है। इसमें 'हीरो', 'हीरोइन' और दूसरे चरित्रों की चरित्र-चित्रण (Characterization), बड़ी बुद्धिमानी, अनुभव और फन (कला) का तरीका इस्तेमाल किया गया है।

'सुंदरी' एक कलंदर की पाल्तू बेटी, 'गुरमुखी ' की शिक्षा लेकर और बचपन की संगत में रहकर बहुत ऊंची शख्सियत में ढल जाती है। लेकिन कलंदर और बंदरों का साथ उसे बार-बार पीछे की ओर खींचता रहता है। बचपन के संस्कार का असर उसे समाज के लिए तैयार करना है, लेकिन उसके पुराने तौर-तरीके और समाज के जुल्मों की याद उसे बार-बार बदलने के लिए मजबूर करती है। यह अच्छे और बुरे जज्बात की अंदरूनी कशमकश (द्वंद्व) बहुत खूबसूरत है।

पंडित 'राधे किशन' की तस्वीर बहुत ही बुद्धि-पूर्ण (دانشمندی) और मजाक बनाने वाली बनाई गई है। वह दूसरे लोगों पर एक बार है, क्योंकि वह उनसे ही खाना खाता है। लोगों के सामने छूत-छात मानने वाला है लेकिन अंदर बैठकर मुसलमानों की रकाबियों (प्लेटों) में खाने से कभी परहेज नहीं करता। गांव में जो भी धोखे का काम होता है, या चोरी-चकारी की नौबत आती है, सब काम उसके मशविरे से होते हैं, और फिर भी वह चौधरी का चौधरी बना रहता है।

'दसौंधा सिंह' की शारीरिक बनावट, उसकी कमजोरी और मूर्खता बड़े मजे-मजे में बयान की गई है।

सबसे ज्यादा हमदर्दी बूढ़े कलंदर रोडू के साथ दिखाई है। वह इस कदर प्यार का नमूना है जो नीची जाति वालों में ज्यादा होता है, कभी-वक़्त था जब वो लोगों को बच्चों से प्यार करते

पृष्ठ 10 का अनुवाद (सफेद खून - भाग):

देखकर हंसता था या मजाक करता था। लेकिन जब उसे एक मासूम बच्ची झाड़ी में पड़ी हुई मिली, तो वह कितनी जल्दी उसे प्यार से उठा लेता है और आखिर उसे प्यार में जज्ब (लीन) हो जाता है। उपन्यासकार ने बहुत खूबसूरती से जाहिर किया है कि कैसे इस प्यार ने उसकी काया ही पलट दी और उसे हैवानियत की जगह ऊंचे जज्बात और जिम्मेदारियों का एहसास दे दिया। यही खूबी उपन्यासकार ने दूसरे चरित्रों के उभारने में भी दिखाई है।

उपन्यास में दृश्यांकन (मनोरंजन/चित्रण) भी बड़ी खूबसूरती से किया गया है। मुल्क के आदिम (अतीत) हालत, कलंदर के मासूम 'सुंदरी' के लिए तरसने और लोरियां, पाल सिंह की टोली का नशा घोटना, जाटों का गुरुद्वारे में छोटी-सी बात पर आपस में धींगा मस्ती पर उतर आना, अनवर का

मुजरा, और खास कर सुंदरी का अनवर के पास जाकर सिर्फ दो लफ्ज 'मां जी, मां जी' बोलकर उसकी जिंदगी का रुख पलट देना; यह दृश्य ऐसे खूबसूरत अंदाज से खींचे हैं कि अब तक पंजाबी साहित्य में पढ़ने को नहीं मिले थे।

भाषा और लिखने का ढंग भी इसी ऊंचे हुनर के मुताबिक है। उपन्यास की शुरुआत अजीब तरीके से की गई है। हंसी के मौकों पर तहरीर (लेखन) हल्की-फुल्की और इठलाती हुई सी मालूम होती है। दुख और दर्द के बयान के वक्त बड़ी संजीदा (गंभीर) और पुरजोश और दर्द भरी हो जाती है। अगर पंडितों की भाषा लिखने में कमाल कर दिखाया है तो जाटों किसानों की घरेलू भाषा लिखने में भी कोई कमी नहीं रही। हां, कहीं-कहीं पोठोहारी, रावलपिंडी के इलाके की भाषा; शैली बयान इस तरह स्पष्ट हो गया है कि मालूम हो जाता है कि लेखक का वतन कौन सा है?

नानक सिंह के लेखन के अंदाज की एक खूबी और भी है जो लेखन के फन (कला) को शिखर तक पहुंचाने की निशानी है। वह है 'ड्रामेटिक आयरनी' (DRAMATIC IRONY) या ढके-छिपे व्यंग्य (तंज) का इस्तेमाल। उससे यह बात ज्यादा असरदार हो जाती है। देखिए: 'राधे किशन' छूत-छात मानने वाले पंडित मुसलमानों के हाथों से, उनके बावर्ची के हाथ से तैयार की हुई चीजें खा रहे हैं, उनके जूठे गिलास में शराब पी रहे हैं, लेकिन अपनी ही बेटी विधवा हो जाए तो उसके लिए घर में कोई जगह नहीं, समाज में कोई इज्जत नहीं, लेकिन जब मुसलमान रंडी बनकर शादी में मुजरा करने आए तो पंडित जी जैसे समाज के लीडर उसकी दहलीज पर जाकर माथा टेकते हैं। अछूत आदमी के माथा टेकने से गुरुद्वारे में रखा, कड़ा प्रसाद खाने के काबिल नहीं रहता लेकिन अंदर आने में...।

पृष्ठ 11

और झोली में बैठ जाने से भी कुछ नहीं बिगड़ता। 'पाला सिंह', 'बचन सिंह' की मुखालफत (विरोध) इसलिए करता है और दूसरों से करवाता है कि वह एक अछूत लड़की (सुंदरी) से संबंध रखे है । लेकिन जब वह 'सुंदरी' को घर में बीवी बनाकर डालना चाहता है, तो दलील देता है- 'अछूत ? ये सब बेकार की बातें'। सिखों को क्या लेना ऐसे वहमों से!

यह उपन्यास एक त्रासदी है जिसे पढ़ने से दिल पर गहरा असर पड़ता है। कहते हैं कि डिकेंस (Dickens) के उपन्यासों ने सुधार के इतने काम किए हैं जो पार्लियामेंट के बनाए हुए कानूनों ने नहीं

किए। देखिए, यह उपन्यास हमारे समाज के 'सफेद खून' को साफ करता है और उसमें स्वास्थ्य का संचार करता है!

18 जुलाई 1932, **तेजा सिंह (प्रिंसिपल)**

सफ़ेद लहू

पृष्ठ 12

अधूरा अध्याय

"संतरी, इस बदमाश को खड़ा रख।"

यह कहते हुए बाबू दूसरे यात्रियों के टिकट देखने में व्यस्त हो गया। शाम के सात बजे का वक्त था। लोग टिकट देकर फाटक से गुजरते जा रहे थे। सिपाही ने मुसाफिर को बाजू से पकड़कर एक जोर का झटका देते हुए एक तरफ खड़ा कर दिया। उस वक्त मुसाफिर के लंबे मैले कोट की जेब में से लिपटे हुए कागजों का एक पुलिंदा नीचे गिर पड़ा, जिसे उसने फौरन उठाकर हाथ में पकड़ लिया।

नौजवान मुसाफिर के पास कोई सामान नहीं था। देखने में वह सिख मालूम होता था। उम्र उसकी अठारह साल के लगभग होगी। अभी उसकी दाढ़ी के रोएं भी नहीं निकले थे। उसका कुर्ता गले के पास से थोड़ा फटा हुआ था। और उसने जो काला कोट पहना हुआ था, उसकी भी यही हालत थी। कई जगहों पर पैबंद (टुकड़े) लगे हुए थे। काजों के छेद फटते-फटते खुले हो गए थे। मालूम होता था, उन्हें मोटे सफेद धागे से कई बार सिला गया है। कोट पर कोई बटन नहीं था। सर्दी से बचने के लिए काजों और बटन लगाने वाली जगहों में धागे पर काम चलाया हुआ था। कोट की एक जेब बिल्कुल फटी हुई थी। लेकिन दूसरी ठीक ठाक थी। मुसाफिर के सुडौल गोरे जिस्म का अंग-अंग गरीबी, नाउम्मीदी और शर्मिंदगी की तस्वीर बना हुआ था।

सिपाही का हाथ छूते ही मुसाफिर सिर से पांव तक कांप गया। उसके सामने से सैकड़ों मुसाफिर गुजर गए, लेकिन बाबू ने किसी की तरफ ऐसी भयानक नजर से नहीं देखा था जैसे उसकी तरफ। वह लोगों की नजरों से बचने की खातिर, दो कदम बढ़कर फाटक की तरफ पीठ करके खड़ा हो गया। सिपाही ने शायद उस ख्याल से कि मुसाफिर भागने के लिए दांव-पेच खेल रहा है, क्रोधित नजरों से उसकी तरफ देखा और धमकी दी-

"ओए, कहां जा रहा है? यहीं जगह पर खड़ा रह। नहीं तो मार-मारकर चमड़ी उधेड़ दूंगा।"

मुसाफिर, चू-चपड़ किए बिना, दोबारा उसी जगह पर खड़ा हो गया।

पृष्ठ 13

करीब पौन घंटे बाद जब सारे मुसाफिर चले गए, तो बाबू ने उसकी तरफ ध्यान दिया और कड़कती आवाज में बोला:

"लाओ, एक रुपये दस आने!" बाबू के कुछ कहने से पहले ही मुसाफिर ने कोट की जेब में हाथ डालकर किसी चीज को टटोला। उसके पास मोटे-मोटे किनारों वाला सफेद तांबे का एक सिक्का था। उस वक्त उसकी हालत एक ऐसे आदमी की सी थी, जिसे प्यास के मारे दम निकल रहा हो और उसके सामने पानी की एक छोटी सी कटोरी रखी हो, और वह भी खारे पानी की। उसकी जेब में एक खोटी चवन्नी थी।

मुसाफिर ने बड़ी नम्र आवाज में डरते-डरते जवाब दिया: "बाबूजी! मुझ पर रहम कीजिए। मैं बहुत गरीब हूं। काफी कोशिश के बावजूद किराये के लिए पैसे जमा नहीं कर सका। यही वजह है कि मुझे बिना टिकट सफर करना पड़ा।"

बाबू ने तंज और नफरत भरे लहजे में हंसते हुए कहा: "ठीक है, किराये के लिए पैसे नहीं थे। और गाड़ी तुम्हारे बाप की है, जो मुफ्त सफर करने से पहले जेल की दाल-रोटी की याद नहीं आती थी?"

पास वाला सिपाही बोला: "बाबूजी! तो आप क्या ख्याल करते हैं। इसके पास किराया नहीं है? मेरा ख्याल है, इसकी तलाशी ली जाए, तो आपको पता चले कि यह गरीब है या चालबाज।"

सिपाही की ताईद करते हुए बाबू ने कहा: "तो क्या यह बात मुझ से भूली हुई है? इन लोगों ने तो बस यही पेशा ही बना लिया है। गाड़ी में मुफ्त सफर करते फिरते हैं। जहां कोई अक़्ल का अंधा और गांठ का पूरा मिले ठग लिया और अपना रास्ता नापा।"

फिर वह मुसाफिर की तरफ देखकर बोला: "किराया देते हो या मेमू काटूँ ? ?"

मुसाफिर के जिस्म का खून जम चुका था। चेहरे पर एक रंग आता था, एक जाता था। वह कुछ कहते-कहते रुक गया। आखिर उसने हिम्मत करके कहा: "बाबूजी! मैं चोर या उच्चका नहीं हूं। एक मुसीबतजदा गरीब हूं। मुफ्त सफर करने का मुजरिम जरूर हूं। ले चलिए, जहां आपका दिल चाहे। लेकिन खुदा के वास्ते इस तरह के बोल बोलकर मेरे कलेजे पर छुरियां न चलाइए।" यह कहते हुए मुसाफिर की आंखों से आंसू छलक पड़े।

बिना टिकट मुसाफिरों की इस तरह की बातें सुनने के लिए बाबू और सिपाही के कान आदी हो चुके थे। यही वजह है कि उन्होंने बड़ी बेपरवाही से मुसाफिर की बातें सुनीं, लेकिन जैसे ही बाबू की नजर

उसकी आंखों पर पड़ी, तो वह हैरान रह गया। मुसाफिर की मोटी आंखों से जैसे खून टपक रहा था। गुस्से और नफरत से उसके होंठ कांप रहे थे। और उसके गोरे चेहरे पर लाली दौड़ रही थी। सिपाही शायद दिल का ज्यादा कड़ा था। इसलिए उसने इस बात की तरफ कोई ध्यान नहीं दिया। लेकिन बाबू को उस दुखी आदमी के चार लफ्जों ने जैसे तड़पा दिया। वह पछता रहा था कि उसने क्यों एक...

पृष्ठ 15

दुखी दिल को ठेस पहुंचाई। वह काफी देर तक मुसाफिर की आंखों की तरफ देखता रहा। यह आंखें उसके दिल पर न मालूम किस तरह असर डाल रही थीं। हाथ वाले कागजों के पुलिंदे को मुसाफिर कभी बाजू के नीचे दबा लेता, कभी कोट की जेब में डाल लेता। और फिर यह सोचकर कि कहीं दूसरी जेब की तरह यह भी फट न जाए, कागजों के पुलिंदे को निकाल कर बड़े ध्यान से दोनों हाथों में पकड़ लेता।

"मेरे साथ आओ।" यह कहते हुए और अपने काम का चार्ज एक और बाबू को सौंपते हुए, वह स्टेशन के बाहर की तरफ चल पड़ा।

शायद उसकी ड्यूटी खत्म हो गई थी। मुसाफिर भी उसके पीछे-पीछे चल पड़ा। मुसाफिर को अब इस बात की फिक्र नहीं थी कि बाबू उसे स्टेशन मास्टर के पास ले जाएगा या पुलिस अफसर के पास। लेकिन वह हैरान रह गया जब उसने देखा कि बाबू स्टेशन से बाहर निकल कर एक ग्राउंड में पहुंचकर हरी घास पर बैठ गया। उसने मुसाफिर को भी बैठने का इशारा किया।

बाबू ने एक नजर भर मुसाफिर की तरफ देखा और फिर पूछा: "यह तुम कहां से आ रहे हो?"

"जी, लाहौर से।"

"घर कहां है?"

"यहीं अमृतसर में।"

"बड़ी हैरानी की बात है। अमृतसर में तुम्हारा घर हो और जेब में दस आने के पैसे भी न हों। तुम क्या काम करते हो?"

मुसाफिर के लिए इस बात का जवाब देना काफी मुश्किल था। वह कुछ देर सोचता रहा और फिर बोला: "जी, कुछ नहीं।"

बाबू ने हैरानी से पूछा: "कुछ नहीं? तो खाते कहां से हो?"

उसके साथ ही बाबू ने एक बार फिर उसकी तरफ देखा। लेकिन वहां शक की कोई गुंजाइश नहीं थी। सिर्फ मुसाफिर की आंखों में कोई पोशीदा (छिपी) कोशिश थी, जो बाबू की तवज्जो को बिना सोचे ही खींच रही थी। और उसके सोए हुए जज्बों में हल्की सी हरकत पैदा कर रही थी।

मुसाफिर बोला: "जी, क्या बताऊं, कहां से खाता हूं।" (कुछ देर रुक कर) "असल में बाबूजी! मौत बहुत बुरी चीज है। मरने से आदमी किस कदर डरता है। सब कुछ तबाह हो जाने के बावजूद भी बेइज्जती और जुल्म का शिकार होते हुए भी मैं जिंदा रहना चाहता हूं। लानत है मुझ पर और मेरे जीने पर।" यह कहते हुए मुसाफिर का...

पृष्ठ 16

गला भर आया। उसकी आखिरी दो बातें बाबू के दिल पर गहरा असर कर गईं। उसने मुसाफिर को दिलासा देते हुए कहा: "सरदार, हौसला रख। मैं समझता हूं कि तू किसी भारी मुसीबत में घिरा हुआ है। मुझसे जहां तक हो सकेगा, मैं तेरी मदद करने की कोशिश करूंगा"।

मुसाफिर किसी गहरी सोच में डूबा था। बाबू की बात पर तवज्जो दिए बिना ही एक ठंडी सांस भरकर बोला: "जनाब, यह मेरे हक में अच्छा नहीं हुआ। आपको चाहिए था कि मुझे पुलिस के हवाले कर देते। शाम से पहले-पहले मैं खुद को हवालात की कोठरी में पाता... यह मेरे हक में ज्यादा अच्छा होता..."।

बाबू ने उसकी बातों का मतलब समझने के लिए एक बार फिर उसके चेहरे की तरफ देखा। एक मिनट उसके दिल में ख्याल आया कि मुसाफिर शायद पागल है, उसका दिमाग चल गया है। उसने फिर पूछा: "यह तेरे हक में अच्छा होता- इसका मतलब?"

मुसाफिर ने हाथ में पकड़े हुए कागजों के पुलिंदे की तरफ देखते हुए कहा: "मेरे उपन्यास का अधूरा अध्याय पूरा हो जाता "।

बाबू ने पूछा: "भई इस बात के मायने खोलकर बता, मेरी समझ में कुछ नहीं आया"।

मुसाफिर बोला: "जनाब, मैं इस शहर में भग्ताँ वाले दरवाजे के अंदर एक टूटी-फूटी कोठरी में रहता हूं, जिसका किराया सिर्फ आठ आने महीना है, लेकिन मेरे लिए ये आठ रुपये हैं। मैं एक अदना (छोटा) सा लेखक हूं। इसके अलावा कोई दूसरा पेशा नहीं है और यह भी कोई जियादा पुराना नहीं है। कुछ ही दिनों से मुझे लिखने-लिखाने का शौक हुआ है। इससे पहले भी मैं कुछ किताबें लिख चुका हूं और वे

छप भी चुकी हैं। इसके अलावा कभी मेरी कुछ मुख्तसर (छोटी) कहानियां रसालों में छपी हैं। बेशक लोगों ने उनकी काफी तारीफ की है, लेकिन मैं महज तारीफ को क्या करूं, जबकि किसी ने भी चंद रुपयों से ज्यादा मेरी कभी हौसला-अफजाई नहीं की, और जो कुछ मिलता है, वह मेरी जरूरत से कहीं कम होता है"।

थोड़ी देर ठहरकर मुसाफिर बोला: "बाबूजी, कुछ दिन पहले मैं इस (हाथ वाले मसौदे) को लिख रहा था। आज की तरह ही मैं गरीब था। मेरे पास छोटी कोठरी भी नहीं थी। कोई उधार भी नहीं देता था। परसों की बात है, जब मेरे कागज खत्म हो गए तो मेरे होश उड़ने लगे। मुझे इस उपन्यास का आखिरी अध्याय अभी लिखना था। मैं पेट से भूखा और जिस्म से नंगा गुजर कर सकता हूं, लेकिन कागजों के बिना गुजारा कैसे चल सकता है? मैं सारा दिन सर पटकता रहा, लेकिन मुझे एक कौड़ी उधार नहीं मिली और न ही कागज!"

पृष्ठ 17

"मैं बहुत नाउम्मीद हो गया। उस वक्त में मर जाने की बात सोची। लेकिन पता नहीं इस ख्याल से कि किताब अधूरी रह जाएगी या शायद किसी चीज की मोहब्बत की वजह से मैं भी न सका"।

"मैं बाजार में चला जा रहा था कि कूड़े के एक ढेर पर कुछ मैले-कुचैले कागज दिखाई दिए। शायद किसी स्कूल के बच्चे ने रद्दी कापी फेंक दी थी। मैंने जब उन्हें उठाकर देखा तो सब का कागज गीले-गीले से थे। उन कागजों के एक तरफ स्कूल की तहरीर थी। दूसरी तरफ से खाली थे, लेकिन स्याही के फैल जाने की वजह से वे धब्बेदार मालूम होते थे"।

"मैंने सारे कागज उठा लिए और अपनी कोठरी में जाकर आग की सींक से उन्हें सुखा लिया। मेरे लिए यह भी गनीमत था"।

"उन कागजों पर मैं लगातार छह-सात घंटे लिखता रहा। दूसरे दिन मेरे लिखने के लिए कोई कागज नहीं बचा था। उस वक्त तक मेरा उपन्यास करीब-करीब खत्म हो चुका था और उसका आखिरी अध्याय भी तकरीबन आधा लिखा जा चुका था। मुझे इसे बेचने की बड़ी जल्दी थी। मैं चाहता था कि जल्द-से-जल्द मुझे इसके बदले बहुत सा रुपया मिल जाए और मैं अपने फर्ज को पूरा कर दूं। यह फर्ज क्या है? यह मैं नहीं बता सकता। इतनी हिम्मत मुझमें नहीं है"।

"मेरा ख्याल था, मेरी यह तखलीक (रचना) मेरी पिछली किताबों से बेहतर है और मैं इसे लाहौर के किसी अच्छे पब्लिशर को जाकर दूंगा, लेकिन पैसों के बिना लाहौर जाना भी मेरे लिए कलकत्ते जाने के बराबर था"।

"कल मैंने किसी न किसी तरह एक रुपये का बंदोबस्त कर ही लिया। लेकिन जिस आदमी ने मुझे रुपया दिया था, वह साहूकार था। उसने मुझसे दो रुपये की रसीद लिखवा ली"।

"मैं आज सुबह पेट से भूखा ही यह अधूरे अध्याय वाला उपन्यास लेकर लाहौर की तरफ चल पड़ा। मेरा ख्याल था कि मैं किसी से सौदा पटा लूंगा तो उस कागज से आखिरी अध्याय का बाकी हिस्सा और वहीं किसी बाग में बैठकर पूरा कर दूंगा और और रोटी भी खा लूंगा"।

"रेल का टिकट लेकर मैं लाहौर पहुंचा। वहां जाकर कई नाशिरीन (प्रकाशकों) के पास गया। मेरा ख्याल था कि मैं यह उपन्यास एक बार में ही शुरू से आखिर तक सुना दूंगा ताकि पब्लिशर के दिल पर गहरा असर पड़े और मुझे अच्छे पैसे मिलें। लेकिन वो मेरे कूड़े का पुलिंदा देखकर ही घबरा जाते और ज्यादा से ज्यादा दस-पंद्रह रुपये का मुआवजा देने की बात करते, और मेरी जरूरत इतने से पूरी नहीं हो सकती थी"।

"मतलब यह कि मैं सारा दिन फिरता रहा, लेकिन मेरी मेहनत की कहीं कीमत न मिली। तब मुझे अमृतसर लौटने..."

पृष्ठ 18

की फिक्र हुई। भूख के मारे मेरी जान निकल रही थी। उस वक्त मेरे पास एक खोटी चवन्नी थी। मैंने एक तंदूर पर जाकर दो आने की रोटी खाई। जब पैसे देने लगा तो मेरा रंग फीका हो गया। खोटी चवन्नी तंदूर के मालिक ने पलट कर मेरे मुंह पर दे मारी। उसके तंदूर पर और कई आदमी रोटी खा रहे थे। मेरी हालत पर तरस खाने की बजाय वे मेरी तरफ देखते हुए मजाक करते और तरह-तरह की आवाजों से हंस रहे थे।

"झीओर ने मुझे दो-चार सख्त बातें सुनाईं। मेरे लिए और कोई चारा नहीं था। मेरी जेब में एक रेशमी रुमाल था। यह मेरे लिए कितनी कीमती चीज थी? इसका हाल मैं आपको क्या बताऊं।" यह कहते हुए मुसाफिर का गला भर आया। यह मेरी जिंदगी की पहली कमाई का बचा-खुचा हिस्सा था। कलेजे पर पत्थर रखकर मैंने दो आने में वह रुमाल झीओर के हवाले कर दिया। रुमाल हाथ से छोड़ते हुए मेरी आंखों के सामने एक प्यारी सी सूरत घूम गई। मुझे यूं महसूस होता था जैसे कोई आंसू भरकर कह रहा हो- ओ जालिम! तेरा लहू भी सफेद हो गया?

"मैं दोनों हाथों से कलेजे थामे वहां से सीधा स्टेशन पर आया और बिना टिकट गाड़ी में चढ़ गया। गाड़ी में बैठकर मैंने अखबारों के कुछ रद्दी कागजों पर अपने अधूरे अध्याय का बाकी हिस्सा लिखना शुरू किया। लेकिन अभी यह पूरा नहीं हो सका और जब मैं यहां पहुंचा तो आप के हाथ पड़ गया।"

"जनाब इसी लिए मैंने आप से कहा है कि मुझे जेल में भेज देते तो मेरे इस नावल (उपन्यास) का अधूरा अध्याय बड़ी खूबसूरती से खत्म होता। क्योंकि नावल का नाम है 'सफेद खून'। इसमें जितने किरदारों का जिक्र आया है, उनमें से एक-दो को छोड़कर सबका लहू सफेद ही जाहिर किया गया है। अगर आपका भी... एक जो मेरे नावल का आखिरी किरदार है, सफेद लहू होता तो यह एक बड़ा मियारी (उल्लेखनीय) अलमिया (त्रासदी) बन जाता। इसके अंत में अब एक और भारी कमी रह जाएगी और यह बना-बनाया अफसाना छोड़कर मुझे कोई और प्लॉट तलाश करना पड़ेगा।"

मुसाफिर के नावल का आखिरी अध्याय ही जब इस कदर दर्द भरा है, तो बाकी हिस्सा कैसा होगा? इस ख्याल से और दूसरे उसकी आपबीती सुन कर बाबू का दिल बैठ गया। उसने बड़े एहतराम, हमदर्दी और प्यार भरी नजर से एक बार फिर उसके सिर से पांव तक देखा। उसका हाथ पकड़ कर चूमा और एहतराम से बोला:

"सरदार जी, माफ कीजिए। मुझे मालूम नहीं था कि आप इतनी बड़ी हस्ती हैं। आइए आज की रात इस गरीब की झोपड़ी में गुजारिए। और अगर आप को कोई एतराज न हो, तो यह नावल भी सुनाने की मेहरबानी कीजिए। मुझे भी नावल पढ़ने का बड़ा शौक है। शायद मैं इसे छपवाने का कोई इंतजाम करवा दूं। यहां के कई नाशिरीन (प्रकाशकों) से मैं वाकिफ हूं।"

पृष्ठ 19

थोड़ी देर बाद वे बाबू के मकान पर पहुंचे। जाते ही बाबू ने सबसे पहले कह कर उसके लिए रोटी का इंतजाम किया। क्योंकि वह घर में अकेला ही रहता था, रोटी खाने के बाद जब दोनों सोने के कमरे में पहुंचे तो बाबू ने उसे एक बिस्तर पर बैठने का इशारा करते हुए कहा:

"लीजिए सरदार साहब! तशरीफ रखिए और सब से पहले अपना नावल सुनाइए।"

रात के नौ बज चुके थे। मुसाफिर ने बैठकर पुलिंदे के ऊपर एक मैला सा चीथड़ा बंधा हुआ था, खोला। पुलिंदा खोलते ही उसके छोटे-छोटे बेतरतीब से कागज उसके हाथों से फिसल कर फर्श पर बिखर गए। वह थोड़ी देर उन्हें इकट्ठा करके क्रम देता रहा। जब सारे पन्ने तरतीबवार हो गए तो सबसे पहले ऊपर का वर्क उठाकर उसने सामने तिपाई पर रख दिया। इस पर जैसे ही बाबू की नजर पड़ी, वह इस तरह खौफजदा (भयभीत) सा कुर्सी से उठकर खड़ा हो गया जैसे अचानक किसी अफसर के आने पर अदब से खड़ा हो जाता था। सर्द वर्क पर ज्यादा कुछ नहीं, सिर्फ इतना ही लिखा हुआ था...

"सफेद खून,

लेखक गुप्तेश्वर"

यह गुप्तेश्वर वह नाम था जो बाबू के रगरेशे में बसा हुआ था। वह गुप्तेश्वर की किताबों को कितनी अकीदत, कितने प्यार और कितनी उमंग से पढ़ा करता था। उनमें उसे कितनी सुख और कितनी तस्कीन (तसल्ली) मिलती थी। गुप्तेश्वर की किताबें वह मजहबी किताबों की तरह रुमाल में बांध कर रखा करता था।

क्या यही गुप्तेश्वर है? क्या वह सचमुच आज उसी हस्ती के दर्शन कर रहा है, जिसका एक-एक जुमला उस के लिए आसमानी आवाज से कम नहीं। और इतनी बड़ी हस्ती का यह हाल? इस किस्म के कितने ही सवाल उसके जहन (दिमाग) में उठ रहे थे।

वह कुर्सी से उठा और जमीन पर बैठकर मुसाफिर के पैरों को छूते हुए बोला:

"क्या आप ही गुप्तेश्वर हैं? जो अजीम हस्ती मेरी नस-नस में बसी हुई है। क्या वे आप ही हैं?"

यह कहते ही उसने जल्दी से अलमारी से रुमाल में बंधा हुआ एक बस्ता उठाया और उसे उसके सामने खोलते हुए बोला: "ये सब आप की ही रचनाएं हैं?"

पृष्ठ 20

ये गुप्तेश्वर की अब तक लिखी हुई रचनाएं थीं। कुछ किताबें और कुछ रसालों (पत्रिकाओं) से काटे गए टुकड़े।

मुसाफिर के दिल पर इस तारीफ का भी असर हुआ जो आमतौर पर लेखकों पर होता है। उसने गंभीरता से सिर हिलाते हुए कहा: "जी हां, यह सब उस परमात्मा की ही कृपा है"।

बाबू शाम दास अपने सम्मान के जज्बे के साथ इसे और बढ़ाना चाहता था। वह गदगद होकर बोला: "ऐ मेरे प्यारे गुप्तेश्वर साहब, सचमुच मैं बहुत भाग्यशाली हूं, जिसे आज वह चीज मिल गई है, जिसके नाम की मैं हमेशा माला फेरा करता था। मेरे पर कृपा करें। मैं क्या बताऊं कि आपने मुझ पर कितने उपकार किए हैं। आज से कुछ साल पहले मेरी जिंदगी ऐसी थी। दुनिया की सारी बुराइयां मुझमें थीं और मैं छाती तान कर उन पर गर्व भी किया करता था। लेकिन जब से मैंने आपकी रचनाएं पढ़नी शुरू कीं, मेरी जिंदगी में खुद-ब-खुद बदलाव आने लगा। मैंने ढूंढ-ढूंढ कर आपकी रचनाएं इकट्ठी कीं। जिन रसालों में आपके लेख और कहानियां छपती थीं, उन्हें अपने नाम जारी करवा लिया। उनमें इतनी रूहानियत, इतना दर्द और इतनी नसीहतें होती हैं कि उन्होंने मेरी जिंदगी को बदलकर रख दिया है, मैं बता नहीं सकता। कई बार आपके दर्शन पाने के लिए बहुत दौड़-धूप की, लेकिन आपका पता न चल

सका। हर किसी से यही जवाब मिलता कि थोड़े ही दिनों में प्रसिद्ध हो जाने वाले इस गुमनाम लेखक को किसी ने नहीं देखा"।

"गुप्तेश्वर साहब! इसी बैठक में आज से कुछ अरसे पहले शराबियों, जुआरियों और कई तरह के बुरे आदमियों का जमावड़ा होता था और मैं उन सबका सरदार था। यहां ऐसे-ऐसे गुनाह और बुरे काम किए जाते थे, जिन्हें याद करते हुए..."।

गुप्तेश्वर साहब को उसकी हालत पर बहुत दया आई। और फिर यह देखकर कि इतना बड़ा गुनाहगार खुद को इतनी जल्दी सही रास्ते पर ले आया है, उसके दिल में शाम दास के लिए मोहब्बत और हमदर्दी पैदा हो गई। उसने प्यार से बाजू पकड़कर उसे कुर्सी पर बिठाते हुए कहा:

"मेरे बुजुर्ग! मैं आपसे भी ज्यादा खुशकिस्मत इंसान को देखकर बहुत खुश हुआ हूं कि आपने खुद को गुनाहों के उन गड्ढों से निकाल लिया है, जहां से निकलना नामुमकिन होता है। शुक्र है परमात्मा का जिस पर आपने इतनी कृपा की है"।

बाबू शाम दास का दिल खुशी से छलक रहा था। लेकिन फिर उसे याद आया कि अभी-अभी उसने इस नेक इंसान की कितनी बेइज्जती की थी और वह शर्म के मारे पानी-पानी हो गया। गुप्तेश्वर के पैर पकड़कर बोला:

पृष्ठ 21

"मुझे क्षमा कीजिए। मुझे आज कभी न बख्शे जाने वाला अपराध हो गया है"।

अपने पैर उससे छुड़ाते हुए गुप्तेश्वर बोला:

"मेरे बुजुर्ग, इस तरह आप मुझे दोषी न बनाइए। आप उम्र में मेरे पिता के बराबर हैं"।

बाबू बोला: "यह ठीक है, लेकिन अकल बड़ी है।"

इसके बाद उसने बाकी बातों को समय और वक्त के लिए छोड़ दिया और सब से पहले गुप्तेश्वर से नावल (उपन्यास) सुनाने की गुजारिश की।

गुप्तेश्वर ने कहा: "मैं सुनाता हूं। लेकिन यह कहानी बहुत बड़ी किताब है। मेरा ख्याल है आप इसे सुनते-सुनते सो जाएंगे"।

"क्या कहा? मैं सो जाऊंगा? नहीं, आप सुनाएं तो सो जाऊं, मेरे लिए तो पानी पीना हराम है, जब तक मैं सारी की सारी किताब न सुन लूं"।

"तब तो आज की रात आपको जागते रहना पड़ेगा। बेशक मैं इसे काफी तेजी से पढ़ लूंगा, तब भी आठ-दस घंटे तो पढ़ने में लगेंगे"।

"आप चाहे दस दिन सुनाते रहें, मैं पलक नहीं झपकाऊंगा"।

"अच्छा, तो सुनिए फिर।"

बाबू ने बिजली का बल्ब उसके सामने लाकर जला दिया और फिर बोला: "हां जी, कीजिए शुरू।" गुप्तेश्वर ने टेबल लैंप उठाकर सामने तिपाई पर रख दिया और नावल सुनाना शुरू किया।----------

(1)

पतझड़ के मौसम में जिस तरह जंगल की खामोशी में पेड़ का सूखा पत्ता खड़खड़ा कर गिरता है और फिर घास की आवाज उसी खामोशी में डूब जाती है, उसी तरह आधी रात के वक्त घास के ढेर की एक छोटी झोपड़ी में बैठी हुई एक दुखियारी जवान लड़की, जब कभी वक्त ठंडी सांसें भरती है, तो उस अंधेरी और डरावनी झोपड़ी में उसकी गर्म सांस में लिपटी हुई आवाज़ एक हल्की सी गूंज पैदा कर के कहीं खो जाती है।

एक तो घोर अंधेरा और फिर गांव से बाहर वह मुसीबतजदा अकेली ही थी।

पृष्ठ 22

उस के आस-पास कोई नहीं था। ऐसा लग रहा था कि यह पास के कुएं के आराई **(**एक तरह के लोग जो ज़्यादातर सब्ज़ी खाकर गुज़ारा करते हैं**)** की झोपड़ी है**,** जिसमें वे दिन में बैठकर हुक्का पीते हैं। लड़की की उम्र अठारह साल से ज़्यादा नहीं थी। जैसे धुएँ वाली रसोई में रखने पर चावल का चमकदार बर्तन

काला पड़ जाता है, वैसे ही बेहद खूबसूरत होने के बावजूद उसकी खूबसूरती पर दुख का साया था। उसकी आँखों के चारों ओर काले घेरे थे। उसके उलझे हुए बाल और फटे-पुराने कपड़े देखकर साफ़ पता चल रहा था कि समय के चक्र ने जवानी में ही उसके सिर पर दुख का पहाड़ लाद दिया था।

दसवीं और माघ महीने की अंधेरी, अंधेरी रात, हवा की कड़वी आवाज़ और सूखे पेड़, सब मिलकर उसके दुखी दिल पर कयामत का साया डाल रहे थे। और ठंड के ज़ोर ने उसके शरीर को तोड़ दिया था, लेकिन उसके दिल में आग कोयले की आग नहीं थी, जिसे कुदरत की इस ठंड से बुझाया जा सके। -

रात धीरे-धीरे बीत गई थी, सुखों की याद की तरह, लेकिन भविष्य के दुख के विचार की तरह, ठंड और अंधेरा हर पल बढ़ रहा था।

जब उसका शरीर पूरी तरह सुन्न हो गया और उसके होश जवाब दे गए, तो वह गोबर, धूल और गीली ज़मीन पर मुँह के बल गिर पड़ी और गिरते ही बेहोश हो गई। उसकी असहनीय हालत देखकर आसमान में टिमटिमाते तारों ने भी अपनी आँखें बंद कर लीं, और बादल, जो दुख में डूबे हुए थे, उसके दुख में आँसू बहा रहे थे। -

बारिश और हवा तूफ़ान में बदल गई। दुखिया वैसे ही बेहोश पड़ी थी। तभी हवा का एक तेज़ झोंका टूटी हुई झोपड़ी को उसके सिर के ऊपर से उड़ा कर उसकी किस्मत की तरह ही उससे दूर फेंक दिया । कुछ तिनके और घास के टुकड़े उस बदनसीब लड़की के सिर को सहारा देने के लिए खड़े थे, लेकिन मुसीबत के समय दोस्तों की तरह, वे भी थोड़ी देर बाद उड़ते हुए दिखे।

अब उस दुखी सिर के ऊपर विशाल आकाश के अलावा कुछ भी नहीं था।

ठंडी हवा उसके बेजान शरीर पर बारिश की मोटी बूंदों के साथ हमला कर रही थी। उसके लंबे, घुंघराले बाल पानी से भीग गए थे और पापी के दिल की तरह सख्त हो गए थे, जिससे उसे दर्द से राहत महसूस हो रही थी।

वे उसके शरीर पर कोड़ों की तरह पड़ रहे थे। - आधी मरी हुई अबला अब खुले मैदान में थी!

पृष्ठ 23

(2)

उसकी बेहोशी दूर होनी शुरू हो गई। जिस्म में कुछ गर्मी महसूस होने लगी और अब वह अपने वजूद में कुछ ताकत महसूस कर रही थी। उसकी पलकें हिलें और आहिस्ता-आहिस्ता उसने आंखें खोलीं। अपने इर्द-गिर्द उसने जो कुछ देखा, उसे ऐसा लगता था जैसे हर चीज धुंध में घूम रही है। उसकी नजर किसी चीज पर नहीं ठहर रही थी। उसका हाथ अपने ही सिर के पिछली तरफ चला गया और उसकी उंगलियां उस जगह को टटोलने लगीं। जहां उसे दर्द महसूस हो रहा था और यह भी पता था कि बाल हुए चिपके हुए हैं और सिर के इर्द-गिर्द पट्टी बंधी हुई है।

आहिस्ता-आहिस्ता उसके हवास और बेदार हुए। अब वह अपनी असली हालत को अच्छी तरह महसूस कर सकती थी, और उसके साथ ही उसे किसी हालिया वाकये की याद भी आने लगी। उस वक्त उसके मुंह से हाय निकली और वह फिर बेहोश हो गई। लेकिन इस बार बेहोशी ज्यादा देर न रही। वह दोबारा होश में आई तो जल्दी से उठने के लिए चारपाई की पट्टी टटोलने लगी।

बड़ी नरम और कोमल आवाज के साथ किसी ने उसके दोनों हाथ पकड़ कर प्यार और हमदर्दी भरे लहजे में कहा: "मेरी अच्छी बेटी! अभी न उठना।"

उसने इन अल्फाज को कहने वाली औरत की तरफ देखा और फिर उसे पहचानने की कोशिश करने लगी। लेकिन उसे कुछ याद न आया कि उसने उस औरत को कभी देखा है। उसी वक्त फिर आवाज आई "खुदा का शुक्र है, जिसने तुझे नई जिंदगी बख्शी है। मुझे तो बड़ी फिक्र हो रही थी, अल्लाह जाने क्या होगा।"

बीमार उसके कहे हुए अल्फाज को अच्छी तरह समझ रही थी। लेकिन 'खुदा का शुक्र' और 'अल्लाह' के अल्फाज तो लाउडस्पीकर की तरह अपनी असली आवाज से ज्यादा होकर उसके कानों में गूंज रहे थे। क्या मैं मुसलमानों के घर में हूं? यह सोचकर उसकी घबराहट अपने चरम पर पहुंच गई। शायद वह फिर बेहोश हो जाती, लेकिन जल्दी ही उसे पता चला कि वह औरत उसके सिरहाने बैठी रो रही है और उसकी आंखों से आंसुओं की लड़ी बह रही है। बीमार का सिर अपनी गोद में लेकर वह बार-बार उसके माथे को चूमती हुई कह रही थी

"मेरी बच्ची! डर नहीं। मैं तेरे सदके। दिल में रत्ती भर भी फिक्र न कर। अब तो ठीक हो रही है।"

मरीज को एक पुराना वाकया याद आ गया। एक बार बचपन में वह मलेरिया बुखार में तड़प रही थी, उस वक्त उसकी मां जो कहीं बाहर गई हुई थी, आकर बेटी के सिरहाने बैठ गई और प्यार से उसका सिर अपनी गोद में रख लिया, फिर उसका माथा चूम कर कुछ ऐसे ही जुमले बोले थे। उसके बाद फौरन ही उसका बुखार उतर गया था।

पृष्ठ 24

उसकी होश की आड़ में बेहोशी काम कर गई। उसे ये दीवारें और हर एक सामान अपने घर जैसा ही महसूस होने लगा। जैसे वह आठ बरस की उम्र से ही रह रही है, और उस की मां की तरह उसे सिरहाने बैठी ममता भरी नजर से उसकी तरफ देख रही है। मां की भूली हुई मोहब्बत, उसके दिल में फिर ताजा हो गई। वह सारे दुख और बेहाल हो गई और उसका दिल मां के प्यार से लबरेज हो गया।

उसने लेटे-लेटे ही सिर पीछे करके सिरहाने बैठी औरत की तरफ देखा। फिर दोनों हाथ पीछे ले जाकर आंखों में आंसू भर कर बोली "मां, तुम मुझे छोड़ कर कहां चली गई थीं। मुझे अपने साथ ले चलो। मां तुम तो मर गई थीं। लोग कहते थे कि तुम मर गई हो। (कुछ सोचकर) हां! मैंने खुद बापूजी को तुम्हें आग लगाते हुए देखा था, तुम मुझे भी..."। यहां आकर उसकी मोहब्बत से गला भर गया और वह हिचकियां लेने लगी।

सिरहाने बैठी औरत से बर्दाश्त न हो सका। उसने मरीज को उठाकर गले से लगा लिया और रोते हुए बोली "मेरी बच्ची, मैं हमेशा के लिए तेरे पास रहूंगी। खुदा... अब कोशिश कर कि तू तंदुरुस्त हो जाए।"

मरीज अब पूरी तरह होश में थी। इसके साथ ही उसने देखा कि इस घर की हर चीज और फिर उस औरत का, जिसे वह मां समझ रही थी, हुलिया बदल कर और हो गया। उसे पता चला कि जिस घर को वह मां का घर समझ रही थी, वह असल में किसी मुसलमान का घर था। अपने उल-जुलूल बोलने पर वह शर्मिंदा सी हो गई और हैरान होकर बोली

"मैं कहां हूं?" और गला सूखने की वजह से उसने पानी मांगा।

बूढ़ी ने आहिस्ता से उसे चारपाई पर लिटा दिया और खुद "ले बेटी, मैं पानी लाई " कहती हुई कमरे से बाहर चली गई।

मरीज अब होश में आ चुकी थी। वह सोचने लगी "यह तो मुसलमान है। मैं इसके हाथ का पानी कैसे पी सकती हूं। मैं कभी नहीं पियूंगी।"

इतने में औरत अंदर आई। और उसके साथ एक हिंदू लड़का था। जिसके हाथ में पानी का गिलास था। पानी पीकर उसके सोचने की ताकत पूरी तरह लौट आई और उसने पूछा "मैं यहां कैसे आई... तो..."

बीच में ही उस औरत ने टोकते हुए कहा "बीबी (सयानी) बेटी, मेरी बेटी, मैं बताती हूं। लेकिन तू कोई फिक्र न कर। इस घर को अपना ही घर समझ। हम बेशक मुसलमान हैं। लेकिन तेरे मजहब को कोई भी दफा नहीं पहुंचेगा।"

औरत ने बताया " मैं और मेरा लड़का तो आज ही अंबाले से आ रहे थे । मेरा बड़ा लड़का वहां चौकीदारी का काम करता है। सुबह चार बजे हम गाड़ी से उतरे और तांगे पर यहां से करीब डेढ़ मील के करीब आए होंगे --

पृष्ठ 25

"कि गांव के बाहर तुम्हें बेहोश पड़े देखा। पहले तो हमने तुम्हें मृत ही समझा। लेकिन मेरे बेटे की थोड़ी सूझ-बूझ रही। उसने देख कर कहा कि अम्मां इसके सीने पर हाथ रख कर इसके दिल की धड़कन देखो। मैंने जब हाथ लगाया तो मुझे हल्की सी धड़कन महसूस हुई।

मेरा बेटा कहने लगा- 'चल अम्मां! इसे गांव वालों के हवाले कर आएं। कहीं ऐसा न हो कि बेचारी यहीं मर जाए।'

हमने इधर-उधर बहुत देखा लेकिन कहीं कोई आदमी दिखाई नहीं दिया। फिर सोचा घर चलते हैं, गांव में खबर कर देंगे। लेकिन फिर यह ख्याल आया कि पता नहीं इस कड़ाके की सर्दी में कोई घर से निकले या नहीं। और फिर ऐसे मौकों पर लोग पुलिस के डर के मारे भी आगे नहीं बढ़ते। और तेरी हालत भी खराब थी। आखिर बेटे के मशवरे पर मैंने तुम्हें उठा कर तांगे में डाल लिया और घर ले आई। घर आकर पहले डॉक्टर को बुलवाया। तुम्हारे गीले कपड़े बदलवाए। आग की गर्मी पहुंचाई। इतने में डॉक्टर भी आ गया। भला हो, उसने लगातार दो घंटे तुम्हारे सिरहाने बैठ कर दवा-दारू की। तुम्हारे सिर के पिछले हिस्से में घाव था और लहु से तुम्हारे सारे बाल चिपके थे। उसने जख्म साफ कर मरहम पट्टी की। इसके बाद डॉक्टर शहर चला गया। तुम सारा दिन बेहोश रहीं और अब कहीं खुदा के फजल (कृपा) से होश आया है।"

थोड़ी देर ठहरने के बाद बूढ़ी ने फिर कहा, "बेटी! अब तो अपनी आपबीती सुना, और सबसे पहले बता तेरा नाम क्या है। मैं किस नाम से पुकारूं?"

मरीज लेटी लेटी उसकी बातें सुन रही थी। और उसके चेहरे पर विभिन्न उतार-चढ़ाव आ रहे थे। कभी वह गुस्से में तिलमिला उठती, कभी नफरत और जलन से उसके माथे पर बल पड़ जाते, और कभी उस औरत के एहसानों के ख्याल से उसकी आंखों में एहसानमंदी और प्यार से चमक उठती।

औरत की बात का उसने कोई जवाब न दिया। औरत ने फिर पूछा, "बेटी, फिक्र न कर, मुसीबत तो अच्छे-अच्छों पर आती है। किस्मत के आगे किसी का जोर नहीं। हां, तो मैंने पूछा था, तेरा नाम क्या है?"

उसने पलकों से पोंछते हुए जवाब दिया, "गुरदेई।"

औरत ने फिर कहा, "अच्छा, बेटी! अब तुम अपना हाल सुनाओ और साथ ही अपने घर का पता बताओ। गफूर बहुत बेचैन हो रहा है, वह कहता है। जल्द से जल्द इसका पता ठिकाना मालूम हो जाए तो इसको जाकर पहुंचा आएं। बेटी, जमाना बहुत खराब है। हंसाने का नाम नहीं होता- रुलाने पर लोग फौरन उंगली उठाना शुरू कर देते हैं।"

गुरदेई ने एक ठंडी सांस भरी और फिर बोली, "मां जी, आपने मुझ पर बहुत एहसान किया है।"

पृष्ठ 26

"लेकिन अगर आप मुझ पर यह कर्म न करतीं तो बहुत अच्छा होता। मैं सारे दुखों से छूट जाती। लेकिन बदकिस्मत आदमियों से मौत को भी डर लगता है। पता नहीं अभी मेरी किस्मत में कौन-कौन सी मुसीबतें लिखी हैं।" यह कहते हुए आंसुओं से उसका चेहरा भीग गया।

इस मुसीबतजदा की बातें सुन कर औरत का कलेजा फटा जाता था। वह उसके सिर को बांहों में समेट कर तसल्ली देने लगी। दिल का गुबार निकल जाने पर गुरदेई का दिल कुछ हल्का हुआ और फिर वह बोली,

"मेरा माइका गाँव वेरोवाल में है। मैं दस बरस की थी जब मेरी मां मर गई थी। और मेरा कोई भाई-बहन नहीं था। सिर्फ एक बाप की जात थी लेकिन वह भी न होने के बराबर। बुरी आदतों में पड़ कर वह किसी काम का नहीं रहा था। जब तक मां जिंदा रही, घर में आठों पहर लड़ाई-झगड़ा होता था। अगर वह शराब पीने से मना करती तो वह उसे रुई की तरह धुन कर रख देता था। बेचारी इन मुसीबतों की मारी दुनिया से चली गई।"

"उसके मरने की देर थी कि बाप को जैसे आजादी मिल गई। उसे रोकने वाला कोई न रहा। दिन-रात शराब का दौर चलता था। उसके यार-दोस्तों को जब तक खाने को मिलता रहा, वे साये की तरह उसके साथ लगे रहे, लेकिन जब सब कुछ खाकर बाप धूएं का मलिंग हो गया तो सब अपना रास्ता नाप गए।"

"और इधर उसके दरवाजे पर हाथी बन कर झूल रही थी। लेकिन इस को चढ़ी उतरी की जरा भीफिक्र नहीं थी। मुझे पंद्रहवां बरस लग गया था।"

बूढ़ी बोली, "और इतनी उम्र तक तेरी मंगनी क्यों न हुई?"

"मंगनी तो मेरी मां ने कर दी थी। लेकिन बाप ने उसे तोड़ दिया था।"

"क्यों?"

"क्या बताऊं। जितने मुंह, उतनी बातें। मां के जिंदा रहते तो कोई बात नहीं निकली। लेकिन उसकी आंखें बंद होने की देर थी कि तरह-तरह की अफवाहें उड़ने लगीं। कोई कहता था कि लड़के वालों ने लड़की के अनपढ़े होने की वजह से मंगनी तोड़ दी है। कोई कहता- बाप ने उनसे कुछ रुपया मांगा था।"

बूढ़ी बोली, "लेकिन बेटा, तुम्हें उन्होंने पढ़ाया क्यों नहीं? क्या आप हिंदुओं में तो लड़कियों को पैदा होते ही स्कूल नहीं भेजते हैं?"

"लेकिन मेरा बाप इन लोगों में से नहीं था। मैं पढ़ना चाहती थी। लेकिन उसने एक ही 'न' पकड़ी हुई थी। वह कहता था- लड़कियां पढ़-लिख कर बिगड़ जाती हैं। और यह भी कहकर कि हमारी सात पुश्तों में कोई पढ़ा नहीं है तो हम क्यों अपने खानदान को दाग लगाएं।"

पृष्ठ 27

"अच्छा फिर?"

"फिर क्या, पहले रिश्ता छूट गया। बाप की चंडाल चौकड़ी उसके आगे-पीछे घूमने लगी और पास से पैसे खर्च करके उसे शराब पिलाने लगी।"

"इसका मतलब?"

"इसका मतलब यह है कि वे बाप से कह कर मेरा रिश्ता एक ऐसी जगह करना चाहते थे जहां बाप न मानता हो। लेकिन किस्मत पर किसका जोर चलता है। उन्होंने बाप को रजामंद कर लिया और मेरे एवज (बदले) मेरे बाप ने मेरे ससुराल वालों से दो हजार की थैलियां रखवा लीं।"

"कुछ दिनों के बाद मेरी शादी हो गई। मेरे दुखों की कहानी यहीं से शुरू होती है। मैं ससुराल आई। शौहर (पति) की उम्र मेरे बाप से भी ज्यादा थी। अभी पिछले साल ही उनके पोते का मुंडन संस्कार हुआ था। खांसी और दमे ने उनकी सेहत बिगाड़ रखी थी। घर में बहुएं, बेटे और पोते-पोतियां मौजूद थे। दौलत का कोई हिसाब नहीं था। उन्होंने काफी रुपया कमाया था।"

बूढ़ी बोली, "लेकिन बेटी , तेरे बाप ने तो भूल की ही थी, लेकिन क्या जात-बिरादरी वालों ने भी न पूछा कि ऊंट के गले में घंटी क्यों बांधी जा रही है। बेटी बेचकर पैसे खरे कर लिए और वह भी एक जगह से रिश्ता छुड़ाकर!"

"मां जी, बिरादरी की बात क्या पूछती हैं। बिरादरी का ही तो यह सब किया धरा था। जिस चंडाल चौकड़ी के साथ रोटी-बोटी एक थी, वही तो बिरादरी के कर्ता-धर्ता थे। इस बिरादरी के काटे हुए सांस नहीं ले सकते। मां जी, ये बड़े लंबे किस्से हैं। बिरादरी की एक बात सुनाऊं तो पहरों (घंटों) में खत्म न हो। अगर जात-बिरादरी वाले मेरी नाव में पत्थर न डालते तो आज मैं इस हालत को क्यों पहुंचती?"

जमीन को छूकर, कानों को हाथ लगाती हुई बूढ़ी बोली, "तौबा! अच्छा, फिर क्या हुआ?"

"फिर वही हुआ, जिसकी उम्मीद थी। शादी की पहली सालगिरह भी अभी नहीं हुई थी कि सारा तमाशा उजड़ गया। उनको महीने , दूसरे महीने दमे का दौरा पड़ता था। आखिरी दौरा ऐसा पड़ा कि आठ पहरों में ले गया और मैं बदनसीबी को रोती रह गई।"

"काश, बदकिस्मती मेरा पीछा यहीं छोड़ देती। मुझे इसी हालत में पड़ा रहने देती, तब भी मैं और मुसीबतों की तरह अपनी जिंदगी काट लेती। लेकिन ऐसे नसीब भी कहां थे। दोनों सौतेले बेटों में से छोटा कुंवारा था और स्कूल में पढ़ता था। वह तो मेरी किसी बात में कम ही दखल देता था, लेकिन बड़ा बेटा और उसकी बीवी तो..."

पृष्ठ 28

"जैसे जी में आए, मुझे सताते रहते। वे मनमाने ढंग से मुझे सताने लगे। उस पर भी हद यह कि वे बड़ी और शर्मिंदगी की बात बोलती थीं। जब तक एक की चार न सुना लेतीं, दिल को चैन न पड़ता। अगर पेट में इल्म (ज्ञान) के चार लफ्ज होते तो अपना पीछा छुड़ा लेती। लेकिन हाय रे बदकिस्मती...!"

"घर में हर वक्त बुराइयों का जिक्र चलता रहता और मुझ पर तरह-तरह के इल्जाम थोपे जाते। कोई मेरे साथ सीधे मुंह बात नहीं करता था। पहले तो गाली-गलौज देकर ही अपना गुस्सा ठंडा कर लेते थे, लेकिन अब बड़ा बेटा जब बीवी के सिखाए-पढ़ाए ज्यादा गुस्से में आ जाता तो मुझे मारने-पीटने भी लगता था।"

"मैं गुस्से की मारी कई बार रोटियां नहीं खाती थी, लेकिन वहां मनाने वाला कौन था। आखिर खुद ही झुक कर पेट की आग को ठंडा करना पड़ता था।"

"इस तरह दुख की घड़ियां गिनते कुछ दिन बीत गए। एक दिन मेरे बाप की बीमारी की जानकारी मिली, तो मैं मायके जाने के लिए तैयार हो गई।"

"मैं जाने की तैयारी कर ही रही थी कि उस वक्त बड़ा बेटा करमचंद मेरे पास आया और उसने बड़ी मोहब्बत से बाप की बीमारी के बारे में पूछा। फिर कहने लगा- 'मेरा ख्याल है, घर में रोज की लड़ाई अच्छी नहीं। अगर तेरी सलाह हो तो हम चार भाई-बंधुओं को बुलाकर बंटवारा कर लें'।"

"मैं रजामंद (सहमत) हो गई। उसने थोड़ी देर ठहर कर पांच-चार आदमी इकट्ठे किए, जिनमें उस गांव का पंडित भी था। एक कागज लिखकर उन्होंने अंगूठा लगाने के लिए कागज मेरे सामने रखा, जिसका विषय उन्होंने मुझे इस तरह पढ़कर सुनाया:"

""घर की कुल जायदाद और नकदी मिलाकर साठ हजार की लिस्ट तैयार की गई है, जिसमें से बीस हजार गुरदेई को दिया। बीस हजार करमचंद और बाकी बीस हजार छोटे लड़के के लिए अमानत रख दिया जाए। इसके अलावा गुरदेई और करमचंद की बीवी का जेवर है, उसकी कीमत छोटे के हिस्से से दी जाए। दो हिस्से इन दोनों को दिए जाएं और तीसरा हिस्सा छोटे की शादी के लिए जमा किया जाए'।"

"इसके नीचे उन्होंने मेरा अंगूठा लगवा लिया और कई गवाह भी डाल दिए। फिर उनके कहने पर मैंने यह जेवर (आभूषण) रखकर बाकी तमाम जेवर उनको दे दिए। उन्होंने मुझसे कहा कि तू मायके से लौट आ, तेरे आने तक जेवरों की कीमत भी लग जाएगी और साथ ही जायदाद का हिस्सा भी तेरी झोली में डाल दिया जाएगा।"

पृष्ठ 29

"मैं उसी दिन शाम को मायके चली गई। वहां जाकर देखा कि बाप की हालत बहुत खराब थी। उसके पास एक फूटी कौड़ी भी नहीं थी। सब कुछ उसके मुफ्तखोर दोस्तों ने हजम कर लिया था। मेरे जाने के दूसरे दिन ही उसके लिए मौत का पैगाम आ गया। मैं उसके क्रिया-कर्म से फुर्सत पाकर ससुराल लौट आई, क्योंकि मुझे अपना हिस्सा लेने की जल्दी थी।"

"कल शाम को मैं घर में दाखिल हुई। उस वक्त धीमा-धीमा पानी बरस रहा था और तूफान सिर पर खड़ा था। मैं सर्दी के मारे कांप रही थी। घर पहुंचकर मैंने सबकी बदली हुई नीयतें देखीं। मेरे कमरे का ताला तोड़कर उन्होंने सारा सामान निकाल लिया था। यह देखकर मेरी सांस वहीं रुक गई। पूछने पर उन्होंने बहुत ही बदतमीजी से जवाब दिया- 'इन चीजों से अब तेरा क्या वास्ता, जहां से आई है, वहीं वापस चली जा'।"

"मेरे पैरों के नीचे से जमीन जैसे निकल गई। मैंने रोना-पीटना और शोर मचाना शुरू किया। सारा अड़ोस-पड़ोस इकट्ठा हो गया और उनके साथ कई चौधरी भी आ गए।"

"मैंने जहां तक हो सका, उन्हें सारा मामला सुनाया। मैंने संदूक में से वही अंगूठे वाला कागज सबके सामने फेंक दिया।

उनमें से एक ने पढ़ा, 'मैं अपने शौहर की जायदाद का तीसरा हिस्सा लेकर जा रही हूं। अब मेरा इस घर से कोई वास्ता नहीं है'।"

"यह देख कर मेरे बदन में आग लग गई। लेकिन वहां मेरी कौन सुनता था। घर के आदमी और बाहर वाले सब ही मुझे गालियां देने लगे और कुछ देर बाद सब अपने-अपने घर चले गए। मैंने गाली-गलौज और दुत्कार से छत सिर पर उठा ली। घर के तीनों आदमी खून के प्यासे होकर मेरी तरफ झपटे।"

"आखिर जब मैंने यह धमकी दी कि मैं यहीं लेट रहूंगी और अपना हिस्सा लेकर छोड़ूंगी, तो सब का गुस्सा और भी भड़क उठा। फिर उन्होंने पंचों की भी समर्थन हासिल कर ली। उन्होंने मुझे घूसों, लातों से मारना शुरू किया। इस मार-पिटाई में उन्होंने मेरे सिर पर दे मारा और मैं लहूलुहान होकर गिर पड़ी। अब उनकी और हिम्मत बढ़ी। इसके बाद उन्होंने मुझे कपड़े से बांधकर और टांगों और बाजुओं से घसीट कर घर से दूर एक झाड़ी में फेंक दिया।"

"उस वक्त बारिश बहुत जोर की हो रही थी। मुझे जब होश आया तो मैंने देखा कि मेरे कपड़े लहू से तर थे और जो बच गए थे वो बारिशसे भीग गए थे। मैं गिरती-पड़ती उठी। दो-तीन पड़ोसियों के दरवाजे खटखटाए लेकिन किसी ने दरवाजा न खोला।"

"उस वक्त मुझे ख्याल आया कि अब जी कर क्या करूंगी। कुएं में छलांग लगा कर मर जाना ही मेरे लिए सबसे आसान रास्ता रह गया था। मैं गांव के बाहर वाले कुएं की तरफ चल पड़ी। रात अंधेरी थी। पल-पल बादल गरजते और बिजली कड़कती थी। बारिश हर कदम पर तेज होती जा रही थी। कुआं काफी दूर था। आंधी के थपेड़ों से धक्के खाती और बारिश से छनती जा रही थी और मेरी मांगें और मेरे होश जवाब दे रहे थे। इसलिए एक कदम भी आगे बढ़ाना मेरे लिए दुश्वार था। अंधेरा भी इतना था कि मुझे पता ही नहीं चल रहा था कि कुआं किस तरफ है। कभी-कभी जब बिजली चमक जाती तो मैं रास्ते का अंदाजा लगाकर उस तरफ चल देती। बदकिस्मती से जिधर में जा रही थी उधर से ही हवा और बारिश इतने जोर से आ रही थी कि मैं अगर एक कदम आगे बढ़ती थी तो उससे चार कदम पीछे धकेल दी जाती थी।"

पृष्ठ 30

"आह! आखिर उस झोपड़ी में जा गिरी और बेहोश हो गई। फिर जब होश आया तो मैंने खुद को यहां पाया।"

गुरदेई की दर्द भरी कहानी सुनकर बुढ़िया का दिल भर आया।

(3)

पंडित राधेश्याम जी को इस गांव का बच्चा-बच्चा जानता है। खास कर यहां के भोले और मनमौजी नौजवान तो उन्हें दीवानों की तरह पूजते हैं। उनमें से कोई तो उन्हें 'हातिम ताई' और कोई 'राजा विक्रमादित्य' का अवतार कहता है। नेकी करने की तो जैसे उन्हें आदत सी पड़ी हुई है। जब भी किसी पर कोई मुसीबत आए या मुकदमे की नौबत आ जाए या किसी के घर में कोई झगड़ा हो जाए, तो लोग ऐसे मौकों पर खुद पंडित जी की तरफ भागे आते हैं। लेकिन अगर कोई बदकिस्मत ऐसे वक्त में उनकी खिदमत में हाजिर न हो तो वह खुद सात काम छोड़ कर उसके पास चले जाते हैं और हर मामले में दिलचस्पी लेकर उसे सुलझाने और निपटाने की कोशिश करते हैं।

एक बार एक किसान का बैल लाला भाने शाह के खेत में चला गया था। किसान बहुत बेवकूफ था। पंडित जी की शान और हैसियत न समझ कर टांग अड़ा बैठा। इस गुस्ताखी के कारण पंडित जी की ऐसी बद्दुआ लगी कि वह पनप न सका। इस बात को अब छह साल हो रहे हैं। अभी तक वह कर्ज नहीं उतार सका बल्कि उसमें एक और लफड़ा अटक गया, लेकिन भाने शाह के रुपये जैसे के तैसे बने रहे।

आप के चाहने वालों ने इस तरह की हजारों करामतों का जिक्र कर लोगों को यकीन दिला दिया है कि पंडित जी पूरे ज्ञानी हैं। आप की सबसे बड़ी करामत यह है कि न तो खुद कोई काम काज करते हैं और न ही कभी पोथी

पृष्ठ 31

खोलने की आपको जरूरत पड़ती है, लेकिन फिर भी घर में सोना बरसता है। पंडितानी जी को आपने जवानी में ही इस लिए घर से बाहर निकाल दिया था कि वह उनके ख्याल में कम जात और चंडाल थी, क्योंकि घर का आधा अनाज वह गरीबों में बांट देती थी और पंडित होते हुए भी ब्राह्मणों पर रोब जमाकर उनसे कुछ वसूल नहीं कर सकती थी, बल्कि इसके ठीक उलट उसके सारे तरीके भी नीच किस्म के थे। किसी को ज़रा तकलीफ होती तो वह फौरन नीची जात की औरतों की तरह उनकी खिदमत के लिए छोटे से छोटा काम करने को तैयार हो जाती थी। आखिर जब पंडित जी को एक दिन ज्ञान हुआ कि यह पिछले जन्म से 'शूद्र' है, उस दिन से ही उन्होंने उसके साथ मिलना-जुलना बंद कर दिया और फिर कभी उसे मुंह नहीं लगाया।

शास्त्रों में वह खुद को बहुत माहिर समझते हैं। लोग उम्र भर तक किताबों के कीड़े बने रहने पर भी जो ज्ञान हासिल नहीं कर सकते, आपने बिना अलिफ-बे पढ़े और किसी किताब को छुए ही उसे हासिल कर लिया है। क्या मजाल जो शास्त्रार्थ में आपसे कोई जीत सके। अज्ञानता और मूर्खता की वजह से जिन्हें लोग भूल बैठे थे, उन्हें आपसे उठकर लोगों को पढ़ाना पड़ता था। शिव जी महाराज की नजरों में बताकर भांग पीने की सीख देना, शराब को देवताओं का 'पदार्थ' और रस्मों-रिवाजों का सार बताकर उससे आनंद लेना और पंडितों का दिल बहलाने के लिए उनसे मनोरंजन करने हेतु जनता का ध्यान आकर्षित करना आदि इस तरह के कई नेक काम आपने इसी जन्म में कर डाले हैं।

शहर के रईसजादों और नौजवानों की महफिल आपके घर में जमती थी, घर जिसे मदरसे की हैसियत सी मिलती थी और जहां आप चौधरी के रूप में विराजमान होकर शास्त्र और राजनीतिक विषयों पर भाषण शुरू करते तो सुनने वाले दंग रह जाते थे।

आज हम अपने पाठकों को पंडित जी की महफिल में ले चलते हैं। रात के आठ बज चुके थे। सर्दी निस्संदेह बहुत थी, लेकिन पंडित जी की महफिल की गर्मी के सामने इसकी कोई दाल नहीं गल रही थी। मौसम का इसमें कोई दखल नहीं हो सकता क्योंकि वहां कोयलों की अंगीठी के साथ आग जल रही थी। वहां आपके कुछ खादिम मछली और मुर्गे के स्वादिष्ट व्यंजन पकाने में व्यस्त थे। और आपके पुजारियों के दिलों-दिमाग तक सर्दी का पहुंचना ही नामुमकिन था क्योंकि शराब का असर था।

नौ बजते-बजते सब अपने-अपने स्थानों पर विराजमान हो गए और उसके बाद पंडित जी अपनी गद्दी पर विराजमान हुए। उस वक्त सारे उपस्थित लोगों में पंडित जी का ही दबदबा था और फौरन ही एक खादिम ने बोतल का कॉर्क खोलकर खाने के साथ पीने का सामान इकट्ठा करके उसे परोसने के लिए पंडित जी की इजाजत चाही।

पंडित जी ने बड़े गौर से सब पर नजर दौड़ाई और फिर बोले: "दोस्तों! अभी ठहर जाओ। अभी हमारी महफिल की रौनक ख्वाजा साहब तशरीफ नहीं लाए हैं। मालूम होता है उन्हें आज की महफिल के लिए संदेश नहीं भेजा गया।"

बीच में ही कोई बोल पड़ा: "नहीं जी, मैं खुद दो बार उनके घर हो आया हूं। वह बिल्कुल तैयार थे लेकिन कुछ अजनबी गांव वालों के आने की वजह से रुक गए। इसीलिए वे दोबारा बैठ गए। मेरा ख्याल है कि उनसे बातचीत करने में देर हो गई होगी। नहीं तो वे भला कहीं ठहरने वाले हैं।"

उसी वक्त बाहर से जूतों की आहट की आवाज आई और पंडित जी "वह आ गए" कहते हुए कुर्सी से उठे और खुशामदीद कहने के लिए दरवाजे की चौखट पर जाकर खड़े हो गए।

ख्वाजा शेर खां साहब इंस्पेक्टर पुलिस पिछले तीन साल से इस इलाके की इज्जत दुगनी कर रहे थे। आते ही पंडित जी से बड़े गर्मजोशी से मिले और फिर दोनों एक गद्दी पर विराजमान हो गए। पंडित जी बोले:

"सुनाइए ख्वाजा साहब! इतनी देर से पहुंचना भला? इंतजार में आंखें भी थक गई हैं। अगर दो पल और न आते तो आज की महफिल ही रद्द हो जाती। भला जनरल के बगैर फौज भी अच्छी लगती है?"

अपनी तारीफ पर खिलखिलाकर ख्वाजा साहब ने पगड़ी का सिरा संवारते हुए कहा: "वाह पंडित जी, माशाअल्लाह आपकी मौजूदगी में भला किसी बात की कमी रह सकती है। मैं तो अब तक कब का आ गया होता लेकिन काम ही ऐसा आ पड़ा जिसकी वजह से कुछ देर हो गई।"

पंडित जी ने कुछ खिसककर ख्वाजा साहब के नजदीक हो गए और उनके कान के पास मुंह लगाकर बोले: "क्यों कोई नई मुर्गी...?"

सिर से पगड़ी उतारकर एक खादिम को पकड़ा कर अपने सिर पर हाथ फेरते हुए ख्वाजा साहब बोले: "हां खुदा ने भेज ही दिया है एक आदमी।"

"तो सुनाइए, क्या कुछ गर्म मामला था?"

"मामला तो बस मामूली सा था।"

"अरे अच्छा! मैंने समझा कोई खून का मुकदमा आया होगा।"

"तौबा-तौबा पंडित जी! ऐसी किस्मत कहां? वह तो छह महीने बाद ही कोई मुर्गी फंसती है। अगर इस तरह रोज-रोज खून के मुकदमे आने लगे तो हम तो झूलों में न झूलने लगें?"

पृष्ठ 33

"तो भी कोई चार-पांच सौ?"

"नहीं, नहीं, सिर्फ दो सौ।"

"मामला क्या था?"

"मामूली मामला था। साथ वाले गांव सुल्तानपुर के कुछ किसानों का चोरी करने का प्रोग्राम था।"

पंडित जी मूंछों को संवारते हुए बोले: "अच्छा तो अभी खैर से मुराद मांग कर गए हैं। अगर मुराद पूरी हो गई, तो फिर उम्मीद है अच्छा हाथ गर्म कमाएंगे।"

"हां, उम्मीद तो है। चौथे हिस्से का फैसला हुआ है।"

"शुक्र है। परमात्मा इसी तरह दे जाता है किसी न किसी बहाने ख्वाजा साहब। वे बड़ा मेहरबान है, पत्थरों में कीड़ों को भी रोजी पहुंचाता है।"

करमचंद की तरफ देखकर और फिर ख्वाजा साहब की तरफ देखकर, "हां सच, आप को आज की महफिल का सबब तो मालूम ही होगा। हमारे चेले ने आज का सब खर्च अपने जिम्मे ले लिया है। ख्वाजा साहब, ये बहुत शरीफ आदमी हैं। इनके स्वर्गवासी पिता के साथ तो हमारे बहुत अच्छे ताल्लुकात थे। ये भी बड़े कद्रदान हैं।" (डकार मारते हुए) "हरी-ओम..."

ख्वाजा साहब ने मुस्कुराते हुए करमचंद की तरफ देखा तो वह फौरन हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। हाथ से उसे बैठने का इशारा करते हुए बोले: "अच्छा, ये उस औरत वाले मामले की बात है। हां पंडित जी, मुझे मालूम है। बड़ा अच्छा हुआ जो उसे दफा कर दिया, लेकिन उसका कुछ पता-ठिकाना कहां गई?"

पंडित जी गिलास आगे बढ़ाते हुए बोले: "जी पक्का पता तो अभी नहीं, लेकिन दोपहर को एक राहगीर ने सुना था कि बुरके वाली औरत उसे तांगे में डाल कर ले जा रही थी। उसके साथ एक नौजवान भी था।"

गिलास गटक कर उसे एक तरफ रखते हुए ख्वाजा साहब बोले:

"क्या कहा? मुसलमान के साथ?"

"जी हां।"

इतने में गांव का नंबरदार जोगा सिंह बोल उठा: "हां खां साहब! हमारे खेत के पास से गुजरा था। मैंने अपनी आंखों से देखा था।"

दूसरा गिलास चढ़ाने के बाद ख्वाजा साहब को सुरूर आना शुरू हो गया और सिर पर हाथ फेरते हुए बोले: "चलो दफा करो अब इन बातों को। जो हो गया, अच्छा हो गया। अब महफिल का मजा लो।" उनके कहने की देर थी कि बोतलें खुलने लगीं और गिलास खाली होने लगे।

पृष्ठ 34

पंडित जी मछली के एक टुकड़े को निगलते हुए बोले: "ख्वाजा साहब, आप का बावर्ची तो बड़ा कारगर मालूम होता है। मछली बनाने में कमाल कर देता है। मुंह से हटाए नहीं हटती।"

"जी हां, ये हमारे यहां पांच साल से काम कर रहा है। इसका बाप, खुदा उसे जन्नत नसीब करे, इससे भी ज्यादा कारगर था। असल में गोश्त बनाने में इसकी महारत है, इसीलिए और भी ज्यादा हो गई है कि इसने मेजर ब्रटन साहब के बावर्चीखाने में चार साल गुजारे हैं।"

इस वक्त तक शराब आहिस्ता-आहिस्ता सब पर अपना असर दिखा चुकी थी और इसके सुरूर में सब अपनी-अपनी बातें करने लगे थे। पंडित जी ने झूमते हुए सब की तरफ ध्यान देते हुए कहा: "दोस्तों, क्या खुशकिस्मती का वक्त है। कैसी एकता और आपसी मोहब्बत का राज है। सचमुच, जब मैं हिंदुओं और मुसलमानों को एक साथ खाते-पीते देखता हूं, तो मेरा दिल खुशी से झूम उठता है। परमात्मा करे, सारे भारत में दोस्ती का ऐसा ही जज्बा पैदा हो।"

ख्वाजा साहब बोले: "पंडित जी, खुदा की कसम! ये सब इसी जाम-ए-जहर की बरकतें हैं। कुछ लोग ठीक ही कहते हैं कि शराब खुदा की नेमतों में से एक है। फिर इससे मोहब्बत में किस कदर इजाफा होता है। और जो इसे बुरा कहते हैं, वे कमबख्त हैं।"

पंडित जी: "ख्वाजा साहब, इन लोगों को पता ही नहीं कि दोस्ती के क्या मायने हैं। हां सच ख्वाजा साहब, आप कई मर्तबा ख्वाहिश भी जाहिर कर चुके हैं। इसलिए आज आपको एक नई सौगात पेश की जाती है।"

"क्या?"

"वही घर की खींची शराब।" और फिर प्यारा सिंह की तरफ देखकर बोले, "लाओ रे नंबरदार, रोज कहा करता था, ख्वाजा साहब को पिलानी है। ला जल्दी कर।"

दबी आवाज में, "सत बचन जी " कहकर प्यारा सिंह पास बैठे अपने भाई धन्ना सिंह का कंधा हिलाते हुए कहने लगा,

"जाओ रे धनिया, मौसी अपनी को कहना। रसोई के कमरे का दरवाजा खोल कर पश्चिम की तरफ चारपाई के नीचे से छोटी डिब्बी निकाल लाए। उस पर कटोरी उल्टी रख कर आटा चिपकाया हुआ है। ध्यान रहे, कहीं ठोकर न लग जाए। जा मेरा बेटा शेर-, -शबाश! जल्दी-जल्दी, बस यहां है, किवहां है।"

पृष्ठ 35

लड़का थोड़ी देर बाद डिब्बी उठा लाया और लाकर ख्वाजा साहब के आगे रख दी। वे पहले ही नशे से चूर हो रहे थे। इस नई सौगात को देख कर खुशी से उछल पड़े। पहले तो उंगली से चख कर मजा लिया।

जब अच्छी लगी तो चुल्लू भर कर पीने लगे। फिर होंठ चाटते हुए बोले,

"आहा! पंडित जी, ये तो बहुत स्वादिष्ट चीज है।"

"मैंने आप से झूठ थोड़ी कहा था?"

"और ये आप ने पहले कभी क्यों नहीं मंगवाई?"

"पहले ज़रा आप से डरते थे। नहीं तो..."

"वाह पंडित जी, मुझसे डर! आप तो ईमान से मेरे भाई हैं। बस-बस, --यही कह कर, गिलास से कई घूंट भरे,-- ऐसे ही पिलाया कीजिए।" और वही गिलास दोबारा पंडित जी को देते हुए--

"वल्लाह! बड़ी अच्छी चीज है।"

रात के बारह बजे तक यह महफिल गर्म रही। आखिर महफिल खत्म हुई। उस वक्त कौन किस हालत में था और किस तरह अपने घर पहुंचा, इसका पता नहीं।

(4)

शाम का अंधेरा हर तरफ फैल चुका था। उस वक्त एक तांगा सामने सड़क से आकर गाड़ी के अड्डे पर रुका। उसमें से एक मुसलमान नौजवान ने उतर कर एक राहगीर से पूछा,

"क्यों जी! पंडित राधेश्याम साहब का घर किधर है?"

"वो सामने वाली हवेली है।" राहगीर ने पूछा, "क्यों क्या काम है?"

"एक जरूरी काम से उनसे मिलना है।"

तांगे में बैठी हुई औरत की तरफ देख कर नौजवान ने जवाब दिया और तांगे के पास जाकर बोला, "आइए बहन जी, मैं आपको घर पहुंचा आऊं।"

औरत कोई जवाब दिए बिना तांगे से उतर कर उसके पीछे हो ली और कुछ देर बाद दोनों पंडित राधेश्याम के मकान के आगे जा पहुंचे। नौजवान के दरवाजे खटखटाने पर अंदर से एक पतला सा लड़का निकल कर पूछने लगा,

"क्या बात है?" नौजवान ने जवाब दिया, "पंडित जी घर में हैं? उनसे काम था।"

पृष्ठ 36

"हां, वे घर पर ही हैं। लेकिन इस वक्त मिल नहीं सकते। उनका पूजा-पाठ का वक्त है।"

"कोई बात नहीं। हम थोड़ा इंतज़ार कर लेते हैं। कितनी देर तक वे फुर्सत पाएंगे?"

"एक घंटे तक।"

"अच्छा, जब फुर्सत पाएं तो उन्हें हमारी आमद की खबर दे देना।"

"अच्छा," कह कर लड़का अंदर चला गया।

तकरीबन पौन घंटे के बाद पंडित जी बाहर आए और नौजवान ने उठ कर उन्हें सलाम किया। आते ही पंडित जी ने दरवाजे से कुछ दूरी पर खड़े होकर पूछा,

"जानते नहीं कि ये ब्राह्मण का घर है?"

नौजवान अपनी गलती पर शर्मिंदा होकर बोला, "माफ़ कीजिए, मुझसे वाकई बहुत बड़ी गलती हो गई है।"

नौजवान ने औरत की तरफ देख कर, "ये बीबी जी कल सुबह इस गांव के बाहर बेहोश पड़ी हुई थीं। ये देख कर मेरी और मेरी वालिदा ने इन्हें अपने गांव ले गए क्योंकि उस वक्त आस-पास कोई नहीं था और इनकी हालत बहुत खराब थी। अब तो अल्लाह के फज़ल से इनकी तबीयत ठीक हो गई है। उन्होंने बताया कि ये लाला मिठामल की विधवा हैं। अब बाकी हाल आप खुद इनसे दरियाफ्त कर लीजिए और जिस तरह हो सके इन्हें घर पहुंचा कर इनके रिश्तेदारों से समझौता कर दीजिए। आपकी बड़ी मेहरबानी होगी।" (औरत से) "बहन जी, आप खुद आकर पंडित जी को अपनी कहानी सुना दीजिए।"

बात सुनते-सुनते पंडित जी के चेहरे पर गुस्से की लाली छा गई और उन्होंने डांटते हुए नौजवान से कहा,

"नौजवान! पोशाक तो तुम्हारी पढ़े-लिखे लोगों जैसी है। लेकिन मालूम होता है कि कोई अनपढ़ आदमी है।"

नौजवान हैरान होकर बोला, "बंद-ए-नवाज़, आप जैसे बुजुर्ग के सामने वाकई मैं अनपढ़ हूं। वैसे मैं ऐब से पाक हूं। अगर कोई गुस्ताखी का लफ़्ज़ मुझसे निकल गया हो तो माफ़ी का ख़्वास्तगार हूं।"

"बस मैं समझ गया!" कह कर हंसते हुए पंडित जी बोले, "इस अँग्रेज़ी ने तो भारत वर्ष का बेड़ा-गर्क कर दिया है। अगर अँग्रेज़ी न पढ़े होते तो एक हिंदू लड़की को बहन कहने की गलती न करते। अपने साथ तांगे में बिठा कर और अपने घर ले जाकर कभी इस बेचारी का धर्म भ्रष्ट न करते।"

नौजवान पंडित जी का ये जुमला सुनकर हिचकिचा गया और सोचने लगा, "मैं इनका क्या जवाब दूं।" आख़िर सोच-समझ कर कहा, "खैर, मैं अपनी गलती के लिए माफ़ी माँगना चाहता हूँ और आप अब इस बेचारी मुसीबतज़दा को इसके घर पहुँचाने की मेहरबानी कर दीजिए। इसकी ज़ुबानी तो कुछ हाल हम सुन चुके हैं, इससे तो पता चलता है..."

पृष्ठ 37

" कि उसके साथ बहुत जुल्म हुआ है!" पंडित जी तेजी से बोले: "नहीं, यह अब हिंदू मजहब से गिर चुकी है। इसे किसी तरह भी..." (फिर कुछ सोचकर और दांतों में अंगुली दबाकर) "वैसे तो मुझे इसकी हालत पर बड़ी दया आ रही है। मैंने तो कल जिस वक्त से सुना है कि इसको उसके सौतेले बेटों ने घर से निकाल दिया है, तब से अब तक खाना भी नहीं खाया। लेकिन गुरदेई! बेटी... परंतु तो अंदर चल कर बैठ। मैं उन जालिमों को बुलाकर अभी राह पर लाता हूं। तू कोई फिक्र न कर।" (डकार लेते हुए) "हरी-ओम..."

एक बार ही पंडित जी को गुस्से के आलम से निकल कर रहम की हालत में आते देख कर नौजवान की आंखों में खुशी के आंसू आ गए और वह बस हो कर पंडित जी के चरणों में झुकते हुए बोला,

"आप तो साक्षात् फरिश्ते हैं। मैं..." उसके कुछ और कहने से पहले ही पंडित जी तीन कदम पीछे हटते हुए बोले: "देखो, देखो मेरे पैर न छूना, वरना मुझे स्नान करना पड़ेगा।"

नौजवान को अपनी जल्दबाजी पर शर्म आई और वह दूर से ही हाथ जोड़ कर सलाम करके वापस लौटा। और जाने से पहले उसने औरत की तरफ देख कर कहा,

"अच्छा और..."। फौरन ही उसे अपनी पहली गलती की याद आई और वह कुछ कहे बिना तांगे में जा बैठा। कोचवान ने घोड़े को चाबुक लगाई और तांगा सड़क पर दौड़ाने लगा। जब तक तांगा आंखों से ओझल नहीं हो गया, गुरदेई शुक्रगुजार नजरों से उसकी तरफ देखती रही।

गुरदेई अंदर चली गई।

सामने कमरे के बाएं तरफ पंडित जी का पूजा-स्थान था। वह पूजा के लिए उस तरफ जाते हुए उससे कह गए,

"ये बेटी सामने वाली पीढ़ी पर बैठ जा। मैं अभी पूजा-पाठ से फुर्सत पाकर आता हूं... हरी-ओम..."

वह सिमट कर एक कोने में जमीन पर ही बैठ गई और पंडित जी पूजा-पाठ में व्यस्त हो गए। पहले तो सुबह का पाठ करते रहे। फिर काफी देर माला फेरते रहे। इसके बाद उनकी समाधि खुली और वह उठ कर आहिस्ता-आहिस्ता मंत्र का जाप करते हुए गुरदेई के पास आकर चारपाई पर बैठ गए। फिर बोले:

"हां बेटी, कहो क्या कहना चाहती हो?"

गुरदेई कुछ देर खामोश रहने के बाद जमीन पर लकीरें खींचने लगी और सिर नीचे किए हुए आहिस्ता से बोली,

"जी, आप से क्या छिपा है?"

पंडित जी एक डकार की लंबी आवाज के साथ 'हरी-ओम' कहते हुए पेट पर हाथ फेरते हुए बोले:

पृष्ठ 38

"हां, मुझे राजाराम (नौकर) ने रात को बताया कि करमचंद ने तुझे मारपीट कर घर से बाहर निकाल दिया है। मुझे पूजा-पाठ की व्यस्तता की वजह से उनसे पूछने का वक्त ही नहीं मिला।" (डकार लेते हुए) "हरी-ओम..."

गुरदेई शरमाते हुए बोली: "जी, आप को याद नहीं रहा होगा। उस वक्त आप वहीं खड़े थे और आप करमचंद के कान में कुछ कह रहे थे।"

हाथ की अंगुली से कनपटी बजाते हुए... जैसे किसी भूली बात को याद करके पंडित जी बोले:

"ओह, ठीक है, याद आ गया। ये दिमाग कितना कमजोर हो गया है, रात की खायी रोटी की भी याद नहीं रहती। ठीक है, मैं उस वक्त पूजा-पाठ की सामग्री ला रहा था। जब तुम्हारे घर के सामने से गुजरा तो शोर की आवाज आई। ठीक है... मैंने ही उसके कान में कहा था कि इस अबला पर इतना जुल्म न करो और इसका हिस्सा इसे हवाले कर दो। लेकिन वह जालिम तो किसी तरह मानता ही नहीं था। फिर उसके बाद क्या हुआ?"

गुरदेई ने उस वक्त से लेकर अब तक की सारी आपबीती सुनाई। अब्दुल गफूर और उसकी मां की मेहरबानी और नेकी का जिक्र सुनकर पंडित जी गुस्से से होंठ काटते हुए बोले:

"बेटी! अभी इन लोगों की चालों को नहीं समझ सकती। उन्होंने तेरा न केवल बिगाड़ ही दिया और अभी न पता नहीं क्या-क्या शैतानी करते हैं। मुझे कल जिस वक्त पता चला कि उस गांव का कोई मुसलमान तुझे बेहोशी की हालत में उठा ले गया है, तब तो मुझे सदमा ही आ गया। एक हिंदू लड़की पर मुसलमानों का इतना जुल्म! मैंने उसी वक्त अपने एक खादिम को दौड़ाया कि उनसे कह दे कि

लड़की को अभी मेरे मकान पर पहुंचाएं, नहीं तो सारे गांव के साथ सख्ती से बरता जाएगा। बस उसी का नतीजा है कि वे डरते-छिपते तुझे चुपचाप छोड़ गए।" (डकार लेते हुए) "हरी-ओम..."

गुरदेई बात सुनकर जरा जोश में आ गई। वह कुछ बोलती-बोलती रुक गई और अपनी जुबान पर काबू पाती हुई बोली:

"जी, उन से तो मैंने ही कहा था।"

"क्या?"

"ये कि मुझे अपने घर न भेजें बल्कि पंडित जी के घर पहुंचा आएं। मैंने सोचा जब आप करमचंद को समझाएंगे तो वे मान जाएंगे।"

"ठीक है। तुम ने भी कहा और मैंने भी पैगाम भेजा। फिर तो वे खुद ही ऐसा करते जो हुआ। अब बताओ तुम क्या चाहती हो?"

"जी, मुझे मेरा हिस्सा दिला दीजिए।"

"लेकिन अगर पहले की तरह ही रहती हो तो क्या हर्ज है?"

पृष्ठ 39

"जी वे मुझे एक घड़ी भी रहने देंगे।"

कुछ सोचकर पंडित जी फिर बोले: "अच्छा, तुम जाकर ऊपर वाली बैठक में बैठो। मैं अभी उन्हें बुलाता हूं।"

गुरदेई सीढ़ियां चढ़कर ऊपर चली गई और पंडित जी राम नामी गमछा कंधे पर डाल, खड़ाऊं पहन कर बाहर निकल गए।

(5)

थोड़ी देर बाद लाला करमचंद की ड्योढ़ी में पंचायत के पंचों की एक सभा हो रही थी, जिसके कर्ता-धर्ता पंडित जी महाराज ही थे।

चौधरी साहब ने दित्ता मल ने घुमाकर हुक्का खींचते हुए कहा:

"हां भाई करमचंद! क्या बना फिर इस मामले का?"

करमचंद ने ऊपर से सिर खुजलाते हुए बोला: "चौधरी जी! सारा मामला तो आप के सामने ही हुआ था। आज पंडित जी लाए हैं नई खबर, सो यह भी सुन लीजिए।"

इतने में पंडित जी डकार लेकर 'हरी-ओम' का लंबा स्वर निकालते हुए बोले:

"चौधरी जी, क्या बताएं? बात कोई बताने वाली रह गई है? अब तो कयामत आ गई है। हम तो दोनों वक्त हाथ जोड़ते हैं कि इतनी उम्र आराम से धर्म का पालन करते गुजर गई। ईश्वर, परमात्मा इस तरह की शैतानी देखने से पहले ही इस जमीन से उठा लेता तो अच्छा था। लेकिन पता नहीं किस्मत में क्या लिखा है।" (डकार लेते हुए) 'हरी-ओम'

सारे आदमी इस नई खबर को सुनने के लिए बेचैन थे।

और 'हां महाराज, बताइए-बताइए' का शोर मच गया।"

पंडित जी गुस्से में आकर बोले: "अरे भाई, बताएं क्या? यह सब तुम लोगों की नीच फितरत का नतीजा है। ईमान, धर्म से दिन-ब-दिन पीछे हटते जाना, पूजा-पाठ, स्नान ध्यान से मन को हटाकर बुरे कामों में फंसते रहना। फिर भला जमीन पर क्या न हो और क्या हो?" (थोड़ी देर खामोश रहकर) "अरे भाई, शरीफ आदमी! हमने एक बार नहीं, हजार बार तुझसे कहा है कि तू इस कमीनी को सिर पर न चढ़ाये जा और इसका कोई इंतजाम कर। आखिर वही कुछ हो रहा था, जिसकी उम्मीद थी। वह बदकार जा रही है मुसलमानों के घर। जिस वक्त से यह बात सुनी है, मेरा तो खून खोल रहा है।"

पृष्ठ 40

"हमारी जिंदगी में ही अनर्थ होने लगे, तो क्या करें?" (डकार लेकर) 'हरी-ओम'।

समाज के लिए पंडित जी की ऐसी उदारता और मोहब्बत के जज्बे को देखकर सब एक आवाज होकर चिल्लाए: "धन्न हो! धन्न हो!"

फिर पंडित जी ने करमचंद और सोहनलाल की तरफ देखकर कहा: "आजकल के लड़कों की तो बिल्कुल ही अक्ल मारी गई है। कोई बात हो, बस मनमानी ही करेंगे। अरे! अगर तुम पहले से पूछते तो यह ब्राह्मण कोई तुम्हारा दुश्मन तो नहीं था, तुम्हारे बुजुर्गों के ही टुकड़े खाकर पले हैं। अगर कोई अच्छी राय न देता, तो बुरी भी देने वाला नहीं था। लेकिन अच्छा भाई, अब इस झगड़ों से मोज लो। जो जी में आए करो। अब क्यों पंचायत में मांग उठाएं?" यह कहते-कहते पंडित जी ने हाथों को पीछे की तरफ रखा और उठने के लिए तैयार हो गए।

यह देखकर सब को चिंता हो गई और वे 'ना महाराज, बैठिए महाराज, आप बात तो सुनिए, गुस्से क्यों हो गए?' वगैरह कहकर पंडित जी को घेर लिया।

किसी ने उनके पांव पर सिर रख दिया। किसी ने उनके हाथ की छड़ी पकड़ ली और कोई रास्ता रोक कर खड़ा हो गया। लाचार होकर पंडित जी को बैठना ही पड़ा।

इतने में करमचंद गले में पल्लू डालकर उनके चरणों में गिर पड़ा और गिड़गिड़ा कर कहने लगा: "महाराज! हमारी इज्जत आप के हाथ में है। इस बात का फैसला करके जरूर जाएं। नहीं तो बिरादरी हमें रहने नहीं देगी।"

पास से एक दूसरा बोला: "हां महाराज! इस बेचारे की बड़ी बदनामी हो रही है।"

उनमें मुंशी देवी दयाल का बेटा सोहन लाल भी बैठा था। कुछ ही दिन पहले डी.ए.वी. कॉलेज छोड़कर घर आया था। वह बोला: "पंडित जी! सचमुच यह नेकी का काम है। आप जैसे महापुरुषों की नेक कोशिशों से ही इस तरह के सवाल सुलझ सकते हैं। अब भी आप कोशिश करें तो वह वापस आ सकती है।"

"क्या कहा है? वापस आ सकती है?"

यह कहकर और पंचों की तरफ देखकर पंडित जी बोले: "देखो तुम लोगों ने इसे बेवकूफ बना दिया है और फिर उसकी तरफ देखकर कहा, 'आर्यों ने तुझे यही शिक्षा दी है? बाबा! जितना मुंह हो, उतनी ही बात करनी चाहिए। बड़ों की बातों में भला तेरा क्या काम है, दखल देने का?' वे कहते हैं: 'बिगानी बारात में मूर्ख नाचे'।"

इस पर सब सोहनलाल की तरफ देखते हुए उसकी अक्ल को बुरा-भला कहने लगे। लेकिन सोहनलाल भी न रह गया और बोला: "माफ कीजिए पंडित जी! मैंने कोई बुरी बात तो नहीं कही।"

"कही थी। अगर उसे दोबारा बिरादरी में बुला लिया जाए तो इसमें हर्ज (नुकसान) क्या है? और फिर बेचारी विधवा है। अगर लाला करमचंद उसके पालन-पोषण का इंतजाम नहीं कर सकते, तो किसी और का प्रबंध कर दिया जाए..."

इस बार पंडित जी का क्रोध और गुस्सा चौगुना हो गया और वह गुस्से से उसकी बात काटकर बोले: "बस-बस! इस तरह के निष्ठुर काम और बेतुके लफ्ज मुंह से न निकालना। भला, साबुन लगा कर नहाने से कभी गधा भी गाय हो गए हों, वे कभी और कुछ बन सकते हैं? हिंदू धर्म में विधवा के ब्याह को छेड़कर इस पवित्र धर्म की तौहीन करते हुए शर्म नहीं आती? (माथे पर हाथ मारकर) या अंधेर हो गया। इन आर्यों ने तो भारत का बेड़ा ही गर्क कर दिया है।" (डकार लेते हुए) "हरी-ओम..."

मोहन लाल फिर बोला: "तो फिर महाराज, आपके फरमान के मुताबिक अगर वह और कुछ नहीं बन सकती तो क्या वह विधवा ही रह सकती है?"

इस बार बहुत से लोग मोहन लाल के पीछे पड़ गए और उसे चुप करा दिया। लाला कन्हैया लाल बोला: "लड़के! बस, ज्यादा न बढ़। एक शरीफ आदमी की विधवा के बारे में यह कहते हुए तुझे शर्म आनी चाहिए थी और फिर तू इतना पढ़ा-लिखा है। यह नहीं सोच सकता कि हमारे धर्म शास्त्रों का क्या हुक्म है?"

(पंडित जी से) "हां-हां पंडित जी! आप अपना काम कीजिए। लड़के की बात पर गुस्सा नहीं करना चाहिए। हां फिर बताइए, अब इसका क्या बंदोबस्त किया जाए?"

करमचंद बोला: "पंचों! मेरी एक अर्ज़ है। अगर वह सम्मान के साथ विधवा जीवन काटना चाहती है, तो मेरे घर में किस बात की कमी थी? लेकिन मैं तो काफी दिनों से इसकी हरकतें देखता रहा और नज़रअंदाज़ करता रहा। दिल में सोचा- हमारा क्या जाता है? जैसा करेगी, वैसा भरेगी। लेकिन वह जो किसी ने कहा है 'उतार दी लोई, तो क्या करेगा कोई?' तो वह हमारे अगले पिछलों की इज़्ज़त छाज में डाल कर उतारने आई है। मुझसे क्या पूछते हैं आप ? पेट फाड़ूँ तो पट्टी कहाँ बांधूँ । ये सब बातें कोई बताने वाली हैं? फिर भी मैं सब्र का घूंट पी रहा हूँ। अब बताइए मैं और क्या करता? रस्सियों से बांधकर तो उसे रखने से रहा। आप जानते ही हैं कि वह किस तरह अपना मुंह काला करके चली गई।"

चारों तरफ से आवाजें आने लगीं, "ठीक है-ठीक है। इस बेचारी के लिए तो कोई खैर न थी। इतना प्यार तो पेट से पैदा होने वाली औलाद भी नहीं करती। यह उसकी अपनी किस्मत खराब थी। फिर किसी का क्या कसूर?"

पंडित जी सोचकर बोले: "लेकिन अब क्या हो?"

बाबा राधा सिंह ने माथे से पगड़ी को पीछे हटाते हुए बोला: "होना क्या है? जो धर्म से गया, वो बस्ती से गया , जो घर से खाली चला गया, उस किस्मत के मारे के लिए क्या हो सकता है? जहाँ पड़ी है वहीं रहने दीजिए, अपने कर्मों का फल खुद भोगेगी।"

सब ने एक ज़बान होकर समर्थन की, "ठीक है! बाबा जी ने लाख रुपये की बात कही है।"

पृष्ठ 42

पंडित जी बोले: "ख्याल तो मेरा भी यही है कि रण्डी (विधवा) को वहीं रहने दिया जाए और फिर इसके बगैर और हो भी क्या सकता है? क्यों भाई करमचंद! तेरी क्या मर्जी है?" (डकार लेकर) "हरी-ओम..."

करमचंद उम्मीद भरी आवाज में हाथ जोड़कर बोला: "महाराज! जो आप की सलाह, वही मेरी मर्जी। आप अक्लमंद हैं। इस घर में अब वह कभी कदम नहीं रख सकती और फिर महाराज! दिल और फूल टूट जाएं, तो जोड़ना नामुमकिन होता है।"

इस पर सब ने सहमति जाहिर की। पंडित जी की उदारता और करमचंद की अक्ल की तारीफ करते हुए सब धीरे-धीरे उठ गए। जाने से पहले करमचंद ने जल्दी से उनकी मुट्ठी में कुछ चांदी के सिक्के पकड़ाते हुए कहा: "महाराज! हम पर करम की नजर रखिएगा।"

पंडित जी भरी हुई मुट्ठी से जेब टटोलते हुए और दूसरे हाथ से उसका कंधा पकड़ कर बोले: "रहने दो, रहने दो। हां सच! मैंने जो बात कही थी..."

"जी हां। मैं उसी वक्त ख्वाजा साहब के यहाँ गया था। पहले तो नहीं मानते थे, फिर आपकी सिफारिश सुनकर मान गए।"

"खैर अच्छा हो गया और कितना कुछ?"

"पचास नकद आए हैं और पचास जब मामला दफा हो जाए, तब देने का इकरार किया है।"

"खैर, काम तो हो रहा है।"

"जी हां, आप की मेहरबानी का नतीजा है। नहीं तो..."

इसके बाद, आशीर्वाद देकर पंडित जी डंगरी खतख़टाते हुए धीरे-धीरे अपने घर की तरफ चल दिए। घर पहुँचने से पहले वह किस-किस के घर गए और क्या-क्या सलाह-मशविरे किए, खुदा ही जाने।

पृष्ठ 43

(6)

गुरदेई फिक्र के समंदर में गोते खा रही थी कि पंडित जी उसे अंदर आते हुए दिखाई दिए। कुछ इधर-उधर की बातें करने के बाद बोले:

"बेटी! तेरी खातिर आज सारे शहर में फिरा हूँ। पंचायत इकट्ठी की, जिसका मुंह भी नहीं देखना चाहता था, उसके भी पाँव छुए। लेकिन इन लोगों की अक्ल पर पता नहीं ईश्वर ने कैसा परदा डाल दिया है कि किसी तरह रास्ते पर नहीं आते।" (डकार लेकर) "हरी-ओम..."

गुरदेई ने सम्मान से माथा टेकते हुए कहा: "महाराज! मेरी जैसी दुखिया के लिए आप तकलीफ न करेंगे तो और कौन करेगा ?"

"बेटी- लेकिन मेरा मकसद पूरा होता नज़र नहीं आता।"

"क्यों महाराज?"

"करमचंद तो मानता ही नहीं। वह कहता है यहीं लिख कर दे गई है- हमारा क्या बिगाड़ सकती है।"

गुरदेई मायूसी से ठंडी सांस लेकर बोली: "और बिरादरी ने क्या कहा?"

"बेटी, बिरादरी के हाथ में क्या रखा है- वह किसी को जबरदस्ती मना सकती है? भला! कोई सरकारी अदालत है नहीं कि जो चाहे करवा ले।"

"फिर अब मैं क्या करूँ?"

कुछ देर सोच कर पंडित जी बोले: "क्या बताऊँ बेटी, मामला बहुत मुश्किल है। मुकदमा चलाया जाए तो भी कुछ बनता नज़र नहीं आता क्योंकि इसके लिए पैसे की ज़रूरत है।"

"तकरीबन कितने खर्च की?"

"कम से कम दो-तीन सौ तो होना ही चाहिए।"

अपने हाथ वाले बाज़ूबंद को देख कर गुरदेई बोली: "ये कितनी कीमत का होगा भला?"

पंडित जी ललचाई नज़र से बाज़ूबंद को देखते हुए बोले: "होगा दो-डेढ़ सौ का।"

गुरदेई नाउम्मीद हो गई। पंडित जी उसे हिम्मत दिलाते हुए बोले: "बेटी! तू फिक्र न कर। जो कुछ कम होगा मैं अपने पास

से मिलाकर तेरा काम करने को तैयार हूँ।"

गुरदेई ने हाथ से बाज़ूबंद उतार कर पंडित जी के पाँव में रख दिया और फिर माथा टेकती हुई बोली: "जी- मैं तो आपके सहारे ही हूँ। आप ही मेरी नाव पार लगाएँगे तो लगेगी।"

उसके सिर पर हाथ फेरते हुए पंडित जी बोले: "बेटा- भगवान तेरा काज सिद्ध करेगा। मैं आज से इस मुक़दमे का बोझ अपने सर पर लेता हूँ। और तुझे उम्मीद दिलाता हूँ कि ईश्वर की कृपा से बहुत जल्द कामयाबी होगी (डकार मार कर) हरी ओम- लेकिन अगर तुम यहीं रहीं तो काम बिगड़ जाने का ख़तरा है।"

"लेकिन मैं कहाँ जाऊँ? अगर कहो तो मायके चली जाऊँ। लेकिन वहाँ भी कोई मेरा नहीं है। हाँ रहने का मकान ज़रूर है।"

"नहीं बेटी- तू कोई फिक्र न कर। सियालकोट में मेरा एक दोस्त है, तू चाहे तो मैं तुझे उसके पास भेज दूँ।"

"महाराज! मैं तो आपके भरोसे हूँ। जैसा फरमाएंगे, वैसा ही करूँगी।"

पंडित जी ने बाज़ूबंद उठा कर जेब में डालते हुए उसे यकीन दिलाने के लिए कहा: "पुत्री- मैं अभी इसका बंदोबस्त करता हूँ। तू रोटी खा कर आराम कर और किसी किस्म की फिक्र न कर।"

"महाराज आपके होते हुए मुझे काहे की फिक्र- आप तो मेरे लिए लोहे का खंभा फाड़ कर भगवान की तरह ज़ाहिर हुए हैं। आपकी नेकी का बदला कैसे चुकाऊँगी।"

"हरी ओम..." कहते हुए पंडित जी नीचे चले गए।

कुछ देर बाद गुरदेई के लिए लड़का रोटी ले कर आया। वह थोड़ी-बहुत खा कर वहीं एक चारपाई पर लेट गई। काफी देर तक उसे फिक्र की वजह से नींद ही न आई। जब ज़रा उसकी आँख लगने लगी तो नीचे से किसी के ऊपर आने की आवाज़ सुन कर वह उठ कर बैठ गई। इतने में पंडित जी अपने साथ एक ऊँचे-लंबे नौजवान को साथ ले कर अंदर दाखिल हुए और बोले:

"बेटा- मेरी सलाह है कि आज ही (नौजवान की तरफ देख कर) मेरे इस दोस्त के साथ सियालकोट चली जा। वहाँ तेरी रिहाइश (रहने) का पूरा-पूरा इंतज़ाम कर दिया जाएगा। तुझे किसी किस्म की तकलीफ नहीं होगी।"

गुरदेई शुक्रगुज़ार आँखों से पंडित जी की तरफ देखती हुई बोली: "आपकी मेहरबानी मैं कभी नहीं भूल सकती।"

और वह चलने के लिए तैयार हो गई। थोड़ी देर बाद वह उस आदमी के साथ रेल गाड़ी का सफर कर रही थी।

पृष्ठ 45

(7)

गुरदेई सियालकोट पहुँच गई और थोड़े दिनों बाद ही इस नाटक का एक नया नज़ारा सामने आया। असल बात उससे ज्यादा दिन छिपी न रह सकी। जिस पंडित को वह बड़ा महात्मा, बल्कि परमात्मा का अवतार समझकर दिल में पूज रही थी, वह असल में एक ज़हरीला साँप था। उसने गुरदेई का ज़ेवर हज़म करने के अलावा उसे ताराचंद नाम के एक नौजवान के हाथ बेच दिया था। जो आदमी उसे छोड़ने आया था, वह असल में पंडित जी का एक राज़दार दलाल था। बदकिस्मत औरत माथा पीटकर रह गई। उस वक्त ताराचंद ने जो सब्जबाग (झूठे सपने) दिखाए थे, उनके लालच ने उसे अपनी मंज़िल से और ज़्यादा दूर ले जाकर फेंक दिया और बदनसीब गुरदेई ने उस के जाल में फँसकर अपना सब कुछ उसके क़दमों में न्योछावर कर दिया।

ताराचंद थोड़ा पढ़ा-लिखा था और एक सरकारी दफ्तर में तीन रुपये महीने का क्लर्क था। गुरदेई को उसने बताया कि उसका असल घर गुजरांवाला में है। लेकिन अपने बाप की नाराज़गी की वजह से वह अभी घर नहीं जा सकता। वैसे उसकी लाखों रुपये की जायदाद है।

लेकिन झूठ ज़्यादा देर तक छिपा नहीं रह सका।

कुछ महीने बाद ही ताराचंद का यह पोल (भेद) भी खुल गया, जब उसकी माँ की तरफ से एक चिट्ठी आई। वह घर में नहीं था और गुरदेई ने किसी से चिट्ठी पढ़वाई।

उसमें उसकी माँ ने लिखा था: "मैं मेहनत मज़दूरी करके पेट भरती हूँ और तुम ने जब से गए हो, मुझे एक पैसा नहीं भेजा। मैंने यह भी सुना है कि तुम ने किसी औरत को निकाल लिया है, ये बातें तुम्हारे लिए अच्छी नहीं हैं, आदि।"

गुरदेई अब बेबस थी। उसके लिए ससुराल में जगह न थी, न मायके में। इसके अलावा वह मूरख और नासमझ थी; हर एक की बातों में आ जाती थी।

आख़िर उसने इसी हालत में ही पड़े रहना अपने लिए ग़नीमत समझा। और कुछ नहीं तो बासी, रूखी रोटी का टुकड़ा तो मिल ही जाएगा। लेकिन उसे पता नहीं था कि बदकिस्मती अब भी उसके साथ लगी हुई थी। क़िस्मत की मार, सरकारी दफ्तरों में नौकरों की छंटनी हुई और ताराचंद ने भी सूखी टहनी की तरह उसे काट कर फेंक दिया। उधर गुरदेई बीमार होकर चारपाई पर पड़ गई।

ताराचंद जो कुछ दिन पहले गुरदेई के प्रेम में दीवाना हो गया था, पौन बरस में ही गुरदेई से इस कदर ऊब गया कि उसे फूटी आँख भी नहीं भाती थी। यहाँ तक कि वह उसे दवा-दारू देने से भी कतराने लगा। वह हद दर्जे का ऐबी, ज़िद्दी और शैतान का चेला था। कोई दिन ही ऐसा होता जिस दिन उनके घर में हाथापाई और छीना-झपटी का नाटक न खेला जाता हो।

पृष्ठ 46

गुरदेई अब लगभग मर ही चुकी थी। एक तो सारे जहाँ की बदनामी, दूसरे ज़िद्दी और मनमानी करने वाले मर्द का वास्ता। तीसरे ग़रीबी और ऊपर से सबसे बड़ी बात यह थी कि गुरदेई की बदनामी अब उसे और भी भयानक शक्ल में दिखाई दे रही थी और उसकी हालत दिन-ब-दिन बिगड़ती जा रही थी। आह! जिस चीज़ का हाल ही उसके लिए इस कदर डरावना था, उसका भविष्य क्या होगा? यह सोचकर वह सिर से पाँव तक काँप जाती थी। वह साफ़ देख रही थी कि उस मनहूस मर्द से बड़ी या किसी छोटी चीज़ की भी उम्मीद नहीं की जा सकती। फिर मौत के आगे मौत खड़ी हो और अब इस गुनाह की गठरी को लेकर कहाँ जाएगी? ज़िंदगी के बाकी दिन कहाँ और किस तरह गुज़ारेगी? इस सवाल का जवाब उसके अंधेरे में भटकते हुए दिल के पास 'कुछ नहीं' के अलावा कुछ भी न था!

आख़िर वह दिन आ पहुँचा, जिसका हर वक्त उसे ख़तरा लगा रहता था। ऊपर से बुखार भी ऐसा कि आँख झपकने का भी होश नहीं था। इसी हाल में उसे काफ़ी अर्सा बीत गया। लेकिन बुखार न टूटा। एक आधी रात के वक्त वह अकेली एड़ियाँ रगड़ रही थी, क्योंकि वहाँ उसे पानी का घूँट देने वाला भी उसके पास कोई नहीं था। ताराचंद परसों से घर नहीं आया था और उसके लौटने की उम्मीद भी नहीं थी। क्योंकि परसों तो वह यह कहकर गया था कि "मेरी तरफ से अब उम्मीद न रखना। मैं कहीं और चला जाऊँगा, चाहे मर जाऊँ। मैंने कोई अस्पताल नहीं खोला है, ख़ुद भूखा मर रहा हूँ। तुझे कैसे सम्भालूँ? कहीं और प्रदेश जाकर रोटी खाऊँगा, लेकिन इस अज़ाब से तो छूटूँगा।"

और इस पर भी ज़्यादती यह कि गुरदेई की बेहोशी का फ़ायदा उठाकर वह घर का सारा माल-असबाब भी उठा ले गया था।

बदक़िस्मती से उसका मकान भी ऐसी जगह था, जिसके पास-पड़ोस में किसी हिंदू का मकान भी नहीं था। प्यास के मारे वह किसी तरह गिरती-पड़ती चारपाई से उतरी और पानी के पास पहुँची। लेकिन उसकी क़िस्मत की तरह घड़ा अभी खाली था। इत्तिफ़ाक़ से एक गिलास में थोड़ा सा मैला-कुचैला

पानी था। जिसे उस ने काँपते हाथों से उठा कर मुँह से लगा लिया। कुछ गिर गया और कुछ उसके मुँह में चला गया। उस वक़्त उसकी हालत इतनी ख़राब हो चुकी थी कि वहाँ से वह उठ न पाई और वहीं पर गिर कर बेहोश हो गई। ख़ुदा जाने उस हालत में वह कितनी देर पड़ी रही।

पृष्ठ 47

(8)

आषाढ़ के महीने की धूप में सारा दिन बंदर का तमाशा दिखाकर, कुछ रोटियों के टुकड़े और थोड़ा सा आटा एक झोले में डाले रोडू अपने डेरे को लौटा। एक फटी हुई रजाई, दो मिट्टी के प्याले, डोर का बयां एक आधा झोला, कुछ और छोटा-मोटा सामान, बस उसकी यही जायदाद थी। एक वह खुद और एक उसकी बंदरिया और यह उसका खानदान था। उसका दुनिया में कोई नहीं था। माँ-बाप तो उसके दूध पीने की उम्र में ही प्लेग से मर गए थे। और चूंकि उसकी सिर्फ एक आँख थी, इसी लिए उसकी शादी भी नहीं हो सकी थी।

बाबा रोडू की उम्र उस वक्त साठ से ज्यादा हो चुकी थी, लेकिन उसे बिल्कुल पता नहीं था कि दुनिया में मोहब्बत क्या चीज है। जब कभी वह किसी से सुनता कि फलाँ फलाँ से बड़ा प्यार करता है तो वह ऐसी बातों को वाहियात समझकर काफी देर तक हँसता रहता। उसे बस इतना ही पता था कि आदमी पैदा होता है और मर जाता है। बस, हाँ, उसका परमात्मा पर और अपने देवताओं पर पूर्ण यकीन था। वह एक नीची जात का अछूत होने के बावजूद खुद को हिंदू धर्म का श्रद्धालु समझता था।

रोटी और आटे वाला झोला उसने कंधे से उतारकर झोपड़ी में एक खूँटी के साथ लटका दिया। बंदरिया को बांधने की उसे तो जरूरत ही नहीं पड़ती थी। वह उसकी जन्म की साथी थी। रोडू के साथ उसे हद से ज्यादा मोहब्बत थी। वह खुद ही जाकर बड़ी जड़ों में सर छिपा लेती। रोडू ने उंगली से माथे का पसीना पोंछा और जगह-बजाय पैबंद लगी वास्कट उतारकर लेट गया।

ठंडी-ठंडी हवा से जब उसके शरीर का पसीना सूख गया तो उसने छत से लटकती हुई टिंड (राहत से पानी निकालने वाला बर्तन) में से प्याले में पानी डाला। थैली में से गुड़ निकालकर उसे एक पत्थर से बारीक कूटकर शरबत बनाया। आधे से ज्यादा उसने खुद पिया और जो बाकी बचा उसे दूसरे बर्तन में डालकर बंदरिया के लिए रख कर उसकी तरफ देखा। वह पहले ही इंतजार में थी। एक छलांग लगाकर आई और प्याला खाली करके वापस अपनी जगह पर जा बैठी।

चंद लम्हों बाद कुत्तों की एक फौज पता नहीं कहाँ से आकर इकट्ठी हो गई और रोडू के चारों ओर चक्कर लगाने लगी। रोडू ने झोला उठाया और आटे में से रोटियों के टुकड़े चुन-चुन कर कुत्तों को डालने लगा।

पृष्ठ 48

जब सिर्फ आधा ही बाकी रह गया तो झोला लटकाकर वह लेट गया। उसे रोटी आज देर से पकानी थी। लेटते ही उसे नींद आ गई। थोड़ी देर बाद उसने करवट ली। जरा सी आँख खुली, लेकिन फिर सो गया। एक मिनट बाद ही वह उठा और उठकर बैठ गया। फिर हाथ को तिरछा करके कान से लगाकर वह कुछ सुनने की कोशिश करने लगा। उसे आवाज कुछ और साफ सुनाई दी और वह बेतहाशा उठकर उस तरफ चल दिया जहाँ से आवाज आने का उसे शक हुआ था।

अपने मालिक को इस तरह जाते देख बंदरिया भी उसके पीछे हो ली। वह चलते-चलते एक झाड़ी के पास रुक गया। उसे आवाज ऐसी मालूम होती थी जैसे कोई नवजात बच्चा रो रहा है। झाड़ी के नीचे की तरफ जब उसने झाँककर देखा तो उसे लाल-लाल किसी चीज का धोका सा हुआ। वह थोड़ा और आगे बढ़ा। वह झाड़ियों में पड़ा हुआ एक बच्चा था, जो लगातार 'हवा-हवा' कर रहा था।

रोडू ने बच्चे की यह दुर्दशा देखी। उसने कुछ न सोचा समझा। वैसे ही कपड़ों के साथ बच्चे को उठा लिया। और वापस अपनी जगह बैठ गया। मौसम चाहे गुलाबी था, लेकिन शाम की ठंडी हवा ही इस नाजुक बच्चे के लिए काफी सर्दी थी। वह सर्दी के मारे सुन्न होने जा रहा था और उसके होंठ नीले पड़ रहे थे।

रोडू घबरा गया कि अब क्या करे, कहाँ ले जाए और बच्चे को किस तरह बचाए? बंदरिया को छोटे बच्चों से कुदरती ही बड़ा प्यार होता है। रोडू घबराकर उसे दूर हटा रहा था और वह बार-बार उसके हाथों से बच्चे को छीनने के लिए आती थी। उसने जल्दी से गद्दे इकट्ठे किए और उसमें बच्चे को छिपा लिया। फिर उसे ख्याल आया कि ये बिल्ली के बच्चे जैसी लड़की पता नहीं कितनी देर से भूखी होगी। इसके लिए दूध लाना चाहिए। ये सोचकर उसने लड़की को वहीं लिटा दिया और खुद जल्दी से प्याले से गाँव की तरफ भाग गया। रास्ते में जाकर उसे ख्याल आया कि ये बंदरिया जैसी शैतान जानवर के रहम पर छोड़ आया है। ये बड़ी गलती हो गई। साथ ही ले आता तो क्या हर्ज था। कोई क्या कहता कि कोई अगर पूछता तो कह देता किसी रिश्तेदार की लड़की है।

उसका दिल चाहा कि फौरन लौट जाए। लेकिन लड़की की भूख के ख्याल से उसके पाँव वापस न मुड़ सके। उसने आँखें बंद करके हाथ जोड़े और शिव और पार्वती का नाम लिया और फिर आगे की तरफ चल दिया।

बे-शक उसने अपनी तरफ से ज्यादा से ज्यादा जल्दी की तब भी जाने आने में उसे तकरीबन आधा घंटा लग ही गया। वह जब दूध ले झोपड़ी की तरफ गया तो उसका दिल धक-धक कर रहा था। और वह

सोच रहा था कहीं ऐसा न हो कि परमात्मा की एक जीव जैसी चीज मेरी बे-अक्ली की वजह से जाया हो जाए!

पृष्ठ 49

डेरे पर आकर वह हाँफने लगा। बंदरिया उस बच्चे को माँ की तरह गोद में लिए बैठी थी और गुदड़ी एक तरफ रखी थी। लड़की ने आँखें खोली हुई थीं और अब वह रो नहीं रही थी। बंदरिया ने अपने जिस्म की गर्मी से ही उसकी सर्दी दूर कर दी थी; मालिक को देखकर उसने लड़की को फिर गद्दी पर लिटा दिया और खुद डर से सहम कर एक तरफ खड़ी हो गई। रोडू ने गद्दी में से रोटी का टुकड़ा निकाला और उसको दूध में भिगोकर लड़की को खिलाने लगा। दूध के पीने की देर थी कि लड़की सो गई। रोडू ने सुख की सांस ली।

रात को उसने हमेशा की तरह पत्थरों को जोड़कर बनाए चूल्हे पर तीन रोटियां पकाकर खुद खाईं और एक बंदरिया को खिलाईं।

आज रोडू को धूल मिट्टी में सोना पड़ा। गद्दी उसने दोहरी करके आधी लड़की के नीचे बिछाई थी और आधी ऊपर से ओढ़ा दी थी और वह बच्ची को अपने सीने से चिपटाकर सो गया।

आधी रात को जब उसने करवट बदली तो उसे लड़की का ख्याल आया। वह डरकर अचानक उठ बैठा और लड़की को देखने के लिए उसने गद्दी का ऊपर का हिस्सा उठाया लेकिन लड़की वहां नहीं थी। वह घबरा गया। उसने पीछे पलटकर देखा। लड़की सचमुच जंगली जानवर के कब्जे में थी। लच्छो इस को रानों पर बैठा कर , शायद रात भर दूध, रोटी के टुकड़ों से इसकी सेवा की थी।

परमात्मा की कुदरत का यह अनोखा चमत्कार देखकर रोडू को हंसी आ गई। वह सोचने लगा, मालिक कितना अजीम है। लड़की को इंसानी मां से छीनकर जंगली मां के हवाले कर दिया है। मोह माया की यह पहली किरण थी जो रोडू के अंधेरे और ठंडे दिल पर पड़ी और जिसकी मामूली सी हरारत और धुंधली सी रोशनी को उसने आज पहली बार देखा और महसूस किया।

वक्त गुजर गया। जो रोडू रोज सूरज से शर्त लगाकर सोता था, अब हर एक लम्हे के बाद उसकी नींद खुल जाती और जब कभी रात को जागकर सुंदरी जिद पकड़ लेती तो वह घंटों उसे कंधे से लगाकर टहलाता और इस तरह लोरियां देता रहता:

"सदके सदके सदमाईयां

चने दियां बूटियां रब लाईयां"

ये ही लोरियां थीं जिन को सुन कर वह कभी लोगों का मज़ाक उड़ाया करता था, लेकिन अब इन्हें गुनगुनाने में कितना मज़ा आता था!

"रब रखे तो मारे कौन", जिस मासूम बच्ची को कोई जान बूझकर मौत के जबड़ों के नीचे दे गया था, उसने ये दुनिया देखनी थी। इसलिए बच गई। इसके अलावा रोडू जैसे पत्थर दिल में मोहब्बत का चिराग जलाने

का काम सौंप कर परमात्मा ने उसे दुनिया में भेजा था, तो वह अपना काम कैसे न करता? लड़की के नक़ूश हद दर्जे के खूबसूरत और अंग सुडौल थे। उसकी नीली आँखें, गोरा रंग और सुनहरी रेशम जैसे बाल कुदरत के हाथ की अनोखी कारीगरी का नमूना थे और शायद इसी की खूबसूरती को देखकर ही रोडू ने उसका नाम सुंदरी रख दिया था!

बूढ़े रोडू के दिल में मचते हुए पुराने सवाल का जवाब खुद ही मिल रहा था। वह कभी भी यह सोचकर लोगों का मज़ाक उड़ाया करता था-

"अरे! बेटी-बेटियों के लिए सारे जहान की फिक्र सर पर लाद लेना भी कोई अक्लमंदी है? ऐसे ही ये लोग व्यर्थ में मोहब्बत-मोहब्बत चिल्लाते फिरते हैं। भला मोहब्बत भी कोई चीज है?"

वह बूढ़ा कलंदर दो बेटियों के लिए आटा मांग-मांग कर कपड़ों के टुकड़ों से आएं में टांग पर टांग रख कर सो जाता था। अब सुबह सवेरे घर से निकलता और सोने के वक्त वापस लौटता था। अब उसे आटे के अलावा पैसों की भी जरूरत थी। जो रोटियों के टुकड़े वह पहले कुत्तों को डाल देता था, वे गवालों के यहाँ उनके जानवर खाते थे।

जल्दी ही रोडू ने कुछ पैसे जोड़ लिए, जिन को खर्च करके उसने सबसे पहले सुंदरी के लिए एक छोटी सी पंघूड़ी, कुछ कपड़े और छोटे-मोटे दो-चार खिलौने खरीदे। पहले उसे किसी से जो कुछ मिलता था, वह चैन से खा जाता था। लेकिन अब 'माई बच्चे के लिए कोई फटा पुराना कपड़ा, या छोटी बच्ची के दूध के लिए पैसे' पुकार-पुकार कर लोगों के सामने हाथ फैलाता फिरता था।

रोडू की मोहब्बत तो सुंदरी के साथ थी ही, लेकिन एक जीव की उससे भी ज्यादा थी। लंगूर बंदरिया एक लम्हे के लिए भी सुंदरी को अपनी आँखों से ओझल नहीं होने देती थी। पहले-पहल तो रोडू ने सुंदरी को अपनी जान के लिए बवाल ही समझा था लेकिन अब सुंदरी ही उसकी जान थी। वह जब मांगने जाता तो सुंदरी को साथ ही ले जाता था। पहले उसके पास एक बंदरिया थी- अब दो हो गईं।

बच्चे को देख कर लोग उसे कुछ न कुछ दे देते थे। और फिर रोडू का रोनी सूरत बना कर यह कहना- "बाबा! इस बच्चे के पैदा होते ही मां मर गई थी। बे-मां की बच्ची पर तरस खाओ"

लोगों के दिलों को और भी नरम कर देता था।

सुंदरी अब दो बरस की थी। कलंदर की अंधेरी झोपड़ी में कुदरत ने रोशनी भेज दी थी। रोडू उसे देखते-देखते नहीं थकता था। बंदरिया- मां की वजह से सुंदरी की आदतें भी बंदरों जैसी ही चंचल थीं। वह लंगूर की तरह ही उलटी सीधी छलांगें लगाती, कभी दोनों हाथों को जमीन पर टिका कर टांगें ऊंची करके खड़ी हो जाती।

पृष्ठ 51

कभी झोपड़ी के बीच के खंभे पर पाँव जमाकर चढ़ने की कोशिश करती। मतलब यह कि सुंदरी जिस तरह बंदरिया को करते देखती, वैसे ही करने लग जाती। रोडू जब गरीबों के बच्चों के साथ सुंदरी को खेलते देखता और फिर यह देखता कि सारे बच्चे उस सुंदरी के साथ प्यार करते हैं तो वह खुशी के मारे फूल जाता था। खूबसूरती के साथ ही कुदरत ने सुंदरी को अक्ल भी बहुत बड़ी अता की थी। वह जो कुछ देखती फौरन उसे सीख लेती और जैसा सुनती वैसा ही बोलने लगती। उसकी परवरिश से अब रोडू को फुरसत ही नहीं मिलती थी।

रोडू जब कभी घर आता, सुंदरी के लिए कुछ न कुछ जरूर ले आता था। सच तो यह है कि रोडू को भी जैसे इस काम का नशा हो गया था। वह जब कभी कोई चीज ले घर आता तो उसके कदमों में बिजली सी तेजी आ जाती और दिल में कोई अनोखी सी उमंग मचल रही होती थी। सुंदरी को खिलाकर उसे इतनी खुशी नहीं होती थी जितनी खुशी उसे उस वक्त होती थी जब घर के नजदीक पहुँचता और सुंदरी दूर से ही उसे देखकर खुशी की तरफ भागती और उसकी टांगों से लिपटकर उसके चादर के कोने को टटोलती और उछलती-कूदती हुई "बाबा मेरी चीज दे" कहकर तूफान बरपा देती। जिस वक्त वह मिठाई का दोना उसके हाथों पर रखता और वह बे-सब्र होकर नाचती हुई दूसरी लड़कियों को दिखाने के लिए भाग जाती तो रोडू पर एक तरह का नशा सा तारी हो जाता था। वह खुशी में आपे से बाहर हो जाता था। उस वक्त उसे ऐसा सुख और आराम से कितना, जैसा शायद राजाओं-महाराजाओं को भी कम ही नसीब हुआ होगा।

सुंदरी जब बच्चों के साथ खेलती थी तो उन की माओं को भी बार-बार देखती थी। कोई बच्चे लड़ते तो अपनी माँ को आवाज़ में देकर कहते "बे-बे मेरी चीज नहीं देता" वगैरह। सुंदरी के लिए "बे-बे" का

लफ्ज़ कुछ भी मानी नहीं रखता था। उसके लिए सारा संसार बाबा रोडू था या फिर लंगूर बंदरिया। लेकिन जब कभी वह माओं को अपने बच्चों के साथ प्यार करते देखती तब जैसे किसी के पास कोई खिलौना देख वैसा ही खिलौना लेने को दिल चाहता है, उसी तरह "बे-बे" लेने के लिए भी उसका दिल मचल उठता था।

एक रात को चाँद की चांदनी निखरी हुई थी। बूढ़ा रोडू झोपड़ी से बाहर एक टाट पर लेटा, सुंदरी को घुटनों पर बिठाकर झूला झुला रहा था। जब ही "होए माईयां, सोने की गाड़ी चढ़ आईंयां" की रट लगा कर हटता तो सुंदरी कहती "बाबा फिर" बार-बार इस तरह करने से जब रोडू की टांगें थक गइं तो हार कर कहने लगा:

पृष्ठ 52

"अरे सुंदरी! अब तुझे फुट्टी पावां, (अब तुझे गुदगुदाऊं) ,"

वह उसके छोटे से हाथ को हाथ में पकड़कर "यहां पड़ी मेरी फुट्टी" कहता हुआ आखिर में "ढूंढ ली-ढूंढ ली" के साथ ही उसके गुदगुदी करता, सुंदरी हंसती-हंसती दोहरी हो जाती थी। इस में रोडू को बहुत सुख और मज़ा मिल रहा था।

इसी वक्त दूर से किसी बच्चे ने अपनी माँ को जोर से "बे-बे" कहकर आवाज़ लगाई।

आवाज़ सुनकर सुंदरी हंसना भूल गई और वह दोनों हाथों से रोडू की छड़ी पकड़कर बोली "बाबा मेरी बे-बे मेरी माँ कहां है?"

"बेटा! तुम्हारी बे-बे चली गई"

वह फिर बोली: "बाबा मेरी बे-बे कहां है?"

"बेटी तेरी बे-बे दूर... और चली गई"

"बाबा बे-बे दूर..." सुंदरी उस वक्त लेटी हुई आसमान को देख रही थी। इसी तरह देखती हुई बोली: "बाबा बे-बे दूर...?"

"हां बेटा दूर"

"बाबा बे-बे ऊपर"

"हां बेटा ऊपर चली गई"

"बे-बे चंदा मामा"

"हां बेटी चंदा मामा के पास"

"बाबा बे-बे को को"

"हां ! बे-बे को ले गई"

"बाबा बे-बे दूर... को को"

"हां मेरी बच्ची... दू-----र -- ले गई" इस तरह करते-करते कुछ देर बाद सुंदरी सो गई और रोडू भी।

9)

दस-बारह साल बाद

लगन बुरी हो या अच्छी, यह इंसान को कुछ न कुछ जरूर बना देती है। लगन एक ऐसा कतरा (बूंद) है जो दूध को दही में बदल देता है, लेकिन यही कतरा अगर लगन न बने तो दूध को फाड़कर खराब कर देता है।

दीवान पुर के जीवा सिंह के बेटे को भी एक लगन लग चुकी थी और वह तब लगी जब वह दसवीं पास करने के बाद खालसा कॉलेज में दाखिल हुआ था। बस इसी लगन ने या एक महान हस्ती की संगत ने उसकी जिंदगी का पासा पलट कर रख दिया।

बचन सिंह की उम्र अठारह-उन्नीस बरस की होगी। बेशक वह कई साल से अमृतसर के गंदे माहौल में रह रहा था, लेकिन उसका जिस्म सेहतमंद और चेहरा भरा हुआ था, दाढ़ी आने से और भी निखर गया था। उसकी नेक चाल और मीठी बोली ने उसे स्कूल में हर दिल अजीज बना रखा था। और इस तरह हीरो बनने की एक वजह यह भी थी कि बचन सिंह को कविताएं लिखने और स्टेज पर प्रदर्शन करने का बहुत शौक था। वह अपने स्कूल की यूनियन का लीडर था। छात्र संघों के जलसों, मीटिंगों में उसे हमेशा पहली जगह मिलती थी। बड़ी-बड़ी महफिलों में बचन सिंह की कविताओं की मांग होती थी। ऐसी बात तो नहीं थी कि वह बहुत ऊंचे ख्यालात की (धनी) हो, बल्कि उसकी कविताएं तो सामान्य होती थीं, लेकिन उसके गले में ऐसा सुर था कि उसकी मदद से बचन सिंह का कविता पाठ सोने पर

सुहागा बन जाता था। किसी जलसे में जब उसकी जोश भरी आवाज गूंजती तो सुनने वाले मंत्रमुग्ध (बुत्त) बन जाते थे।

और वो नई लगन जो बचन सिंह की जिंदगी में इंकलाब (क्रांति) लाई, वह दसवीं पास करने के बाद खालसा कॉलेज में दाखिल होने के बाद आई। इन दिनों शहरों और गांवों में ग्राम सुधार के बड़े जलसे हुआ करते थे। इन जलसों का मकसद गांवों के लोगों को बुराइयों और फिजूलखर्चियों से रोकना था।

पृष्ठ 54

इसी तरह का एक जलसा एक दिन अमृतसर के जलियांवाला बाग में हो रहा था। कोई दस हजार श्रोताओं का मजमा था। जैसे ही स्टेज सेक्रेटरी ने बचन सिंह का नाम लिया, श्रोताओं में हलचल मच गई और नारों की गूंज में वह स्टेज पर आया।

उसने अपनी नज्म (कविता) सुनाई। श्रोता उसे दोबारा सुनने के लिए मजबूर हो गए।

जलसा खत्म हुआ तो आज की कामयाबी ने बचन सिंह को खुशी से भर दिया। वह जमीन पर चल रहा था लेकिन महसूस हो रहा था जैसे वह आसमान में उड़ रहा हो। उसके चारों ओर प्रशंसा करने वालों की भीड़ लगी हुई थी। इन प्रशंसा करने वालों की भीड़ में उसके चारों ओर से कुछ कम हुई तो रेशम जैसी सफेद दाढ़ी में चमकता एक भरा-भरा चेहरा उसके सामने आया। यह एक पचास-साठ बरस का बूढ़ा था लेकिन देखने योग्य था। खादी के सादे कपड़ों में वह कोई फरिश्ता मालूम होता था।

सामने आते ही बुजुर्ग ने प्यार से बचन सिंह का हाथ पकड़ लिया और बड़ी इज्जत से उसे दूसरे आदमियों से अलग करते हुए एक तरफ ले गया।

"बेटा!" वह घास के टुकड़े पर बैठते हुए बोला, "आपकी नज्म मुझे आपके पास खींच लाई है।"

बचन सिंह उसके पास बैठते हुए बोला, "बाबा जी बड़ी कृपा। मैं आपकी इस जहमत (तकलीफ) के लिए..."।

बात काटकर बूढ़ा बोला, "मैं इतना पढ़ा-लिखा नहीं। इसी वजह से आपसे आपकी नज्म के अर्थ पूछना चाहता हूँ।"

और बूढ़े ने हाथ में पकड़ा हुआ एक छोटा सा कागज पढ़ना शुरू किया:

"तेरे चरनां दी सौं ए हिंद माता,

तेरी सेवा विच जिंदगी लगा दियांगा,

फिर के देस दी गली-गली मोहल्लां विच,

मैं कुरीतियां सब मिटा दियांगा।"

(ए भारत मां! मैं तेरे चरणों की सौगंध खाकर कहता हूँ कि मैं तेरी सेवा में पूरी जिंदगी लगा दूंगा और देश की गली-गली मोहल्लों में घूमकर सब बुराइयों को मिटा दूंगा।)

पृष्ठ 55

बचन सिंह ने यह नज्म इसी जलसे में पढ़ी थी। नज्म काफी लंबी थी लेकिन इस बूढ़े ने सिर्फ दो ही पंक्तियां दर्ज की थीं।

बचन सिंह बोला, "बाबा जी इन पंक्तियों का मतलब तो बड़ा आसान है।"

बूढ़े ने बचन सिंह की तरफ मुहब्बत और फराखदिली (उदारता) से देखते हुए कहा, "आसान नहीं, बड़ा मुश्किल है। जरा फिर सोचो।"

बचन सिंह सोच में पड़ गया। बाबा फिर बोला, "क्या आपने इसके मायने समझे हैं?

'तेरे चरनां दी सौं'..." अब बचन सिंह की समझ में असलियत आई। उसने एक बार फिर बूढ़े की तरफ देखा लेकिन इस बार बचन सिंह की आंखें बूढ़े की ताव न ला सकीं और नीचे हो गईं। बचन सिंह के पास कोई जवाब नहीं था।

बुजुर्ग ने बचन सिंह का कंधा हिलाया, "नौजवान! कसम नहीं खानी चाहिए। बड़ा गुनाह होता है।" बचन सिंह की नजरें जमीन में गड़ रही थीं।

"बेटा! खिदमत में जिंदगी लगाने का मतलब सिर्फ 'वाह-वाह' हासिल करना नहीं है।"

बचन सिंह का सिर बुजुर्ग के चरणों पर झुक गया।

"अगर सचमुच तेरे अंदर कोई आग है तो यह झूठी गप्पें हांकने के बजाय कुछ करके दिखाओ।" बूढ़े ने उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा।

बचन सिंह की आंखें खुल रही थीं। सचमुच इन पंक्तियों के मायने बहुत मुश्किल थे। अब तक बचन सिंह का नजरिया यह था कि जोश भरी नज्म पढ़कर अवाम के जज्बात को भड़का देना और खुद बे-हिसाब तारीफ हासिल करके ही खुशी से फूले न समाना और समझना कि खिदमत की या और सब कुछ भी है। लेकिन आज पहली बार उसे पता चला कि वह जो कुछ कर रहा है, सिर्फ बनावट मात्र है। इस जिंदगी से अलग एक ऊंची और अमली (व्यावहारिक) जिंदगी भी है, जिसका आज से पहले उसे एहसास भी नहीं हुआ था।

यह मुख्तसर (संक्षिप्त) बात करने के बाद वह बुजुर्ग वहां से चला गया लेकिन बचन सिंह के दिल में एक नई लगन लग गई। बचन सिंह ने पूछने पर अपना पता भी बता दिया था। उसका नाम दीदार सिंह था और आजकल वह कुछ दिनों के लिए अमृतसर में ठहरा हुआ था।

बचन सिंह की जिंदगी में इस दिन से तब्दीली आनी शुरू हो गई। जितने दिन ज्ञानी दीदार सिंह अमृतसर में रहे, वह रोज बिना नागा उनके पास जाता रहा और कुछ समय के साथ उसने उसे इतना बदल दिया कि पहले...

पृष्ठ 56

के और मौजूद बचन सिंह में रात-दिन का फर्क जाहिर होने लगा। नज्में वह अब भी लिखता था लेकिन दुनिया के लिए नहीं, अपने आप के लिए। ज्ञानी दीदार सिंह जी के मुंह से दोहराया हुआ उसका अपना ही मिसरा (पंक्ति) उसे भूलता ही नहीं था! "तेरे चरनां दी सौं ए..."

(10)

इस बार गर्मियों की छुट्टियों में बचन सिंह का इरादा घर जाने का नहीं था। अपनी नज़्म को अमली शक्ल देने के लिए वह देहातों का दौरा करना चाहता था। लेकिन बाप की बीमारी का खत पढ़कर वह न रह सका और छुट्टियों में होते ही घर आ गया।

जीवा सिंह ने जब लड़के का रंग-ढंग देखा तो उसके तन-बदन में आग लग गई। कहाँ तो वह सूट-बूट, कार, संटास (फैंसी कपड़े) और कहाँ यह मोटे खद्दर का कुर्ता, पजामा और पैरों में बारह आने की चप्पल।

बीमार जीवा सिंह काफी परेशान हुआ लेकिन वह एक ही बेटा था। सामने होकर कुछ कहने की भी हिम्मत नहीं होती थी कि कहीं नाराज होकर घर से ही न निकल जाए।

आख़िर यह तय हुआ कि बचन सिंह का पढ़ना-लिखना खत्म करा के घर के काम-धंधे में ही लगा दिया जाए। ऐसा हो कि पढ़ाते-पढ़ाते लड़के से भी हाथ न धोने पड़ जाएं।

बचन सिंह को देश की सेवा की लगन लग चुकी थी लेकिन माँ-बाप का दुख भी वह बर्दाश्त नहीं कर सकता था। मन मारकर घर के काम में लग गया।

एक दिन वह खेतों की देखरेख के लिए जा रहा था तो जब गुरुद्वारे के सामने से गुजरा तो उस में ताला लगा हुआ देखकर सोचने लगा, सिक्खों के इतने बड़े गांव में गुरुद्वारे का यह हाल? उसने पास खड़े एक लड़के से पूछा।

"क्यों मुंडिया! इस गुरुद्वारे में ग्रंथी कोई नहीं रहता है?"

लड़के ने उंगली से ऊपर की तरफ इशारा करते हुए कहा, "वह देखो, ऊपर की छत पर भाई बैठा है।" बचन सिंह और भी हैरान हुआ। जिस तरह अपने खेतों में दूसरों के जानवर चरते देखकर हैरान हो, और यह देखकर ताज्जुब हो कि खेतों का रखवाला भी मेंड पर बैठा है। उसने फिर पूछा:

पृष्ठ 57

"और भाई जी गुरुद्वारे साहिब का क्या ऊपर करते हैं?"

बात लड़के की समझ में नहीं आई। वह बोला, "क्या परशाद? कड़ाह परशाद तो गुरुपर्व वाले दिन होता है।"

बचन सिंह समझ गया कि लड़के की समझ में मेरी बात नहीं आई। उसने भाई जी को एक आवाज दी। भाई जी ने खिड़की में से सर निकाला। नीचे सरदार जीवा सिंह के लड़के को देखकर वह भागे-भागे नीचे आए।

आते ही दो दफा झुककर बड़े प्रेम से हाथ जोड़कर बोले, "आइए सरदार जी! वाहेगुरु जी का खालसा वाहेगुरु जी की फतेह! आपकी बड़ी कृपा है जो इस गरीब के घर में चरण डाल आपने इसे पवित्र किया। आइए, आन करके ऊपर दर्शन दीजिए।"

बचन सिंह उससे बात करने के लिए उत्सुक था लेकिन कुछ सोचकर भाई जी के साथ अंदर चला गया।

भाई जी का कद सवा छह फीट के लगभग था। मालूम होता था, उनकी खाई हुई खुराक गोश्त बढ़ाने के बजाय हड्डियों का पिंजर बढ़ा रही थी। गालों में इतने गहरे गड्ढे पड़े थे कि छोटी मोटी गेंद वहां रख दो तो दिखाई न दे। पेट को जरा सा दबाया जाए तो रीढ़ की हड्डी को जा छुए और नीचे का जबड़ा ढालों (ठुड्डी) से खाली गुरुद्वारे की तरह बिल्कुल दांतों से खाली था और ऊपर भी कुल चार ही दांत थे। और वह भी बाहर को निकलते हुए टांगों की हड्डियों को देखकर आदमी को ख्याल आता था कि धरती तो ढोल-बेल के सिंकों (सिंगों) के सहारे खड़ी है लेकिन आप इतना ऊंचा इस चीज के सहारे खड़े हैं। नाफ (नाभि) पेट में से अंगूठे जितनी बाहर की तरफ निकली हुई थी और पेट के ऊपर की चमड़ी को देखकर यह ख्याल होता था जैसे आटा गूंथने वाली परात पर खाली मलमल का कपड़ा चढ़ा दिया गया

हो। कान ऊपर से नीचे ढलके हुए थे और उनमें पड़े हुए छेदों ने कानों के छेद को फाड़कर इतना फैला दिया था कि उनमें से गाजर आर-पार जा सकती थी। पैरों की लंबाई देखकर यह अंदाजा होता था कि परमात्मा से भी गलती हो गई है। कुदरत ने भाई जी का जिस्म बनाने का काम शायद मजदूरी देकर करवाने के बजाय ठेकेदारी से करवा लिया था।

चारपाई पर तकिया जो सर का तेल लग-लगकर हलवाई की मैली गद्दी की तरह चिपचिपा हो चुका था, जल्दी से चारपाई के नीचे फेंककर, दरी दोहरी करके फट्टा हुआ हिस्सा छिपाते हुए भाई जी ने ऊपर के होंठ को थोड़ा आगे बढ़ाकर दांतों को ढंकने की कोशिश करते हुए बोले, "बैठिए सरदार जी।"

पृष्ठ 58

यह आपका ही घर है। आप तो आन करकर के कभी दर्शन ही नहीं देते। आज तो चियोन्टी के घर भगवान आ गया आन करकर के।"

"आपकी कृपा," कह कर और फिर कमरे की चीजों पर नजर डाल कर बचन सिंह बोला:

"महाराज का प्रकाश कहां होता है?" (गुरु ग्रंथ साहब को दर्शन के लिए खोल कर रखने को प्रकाश करना कहते हैं।)"

"मारा सरदार जी (महाराज सरदार जी)! क्या बताऊं आन करकर के। यहां तो कोई गुरुद्वारे ही नहीं आता। इधर कुछ सोच कर, प्रकाश तो नीचे ही कर दिया जाता है, जी लेकिन आन करकर के आज शरीर अच्छा नहीं था, इसलिए नहीं किया।"

बचन सिंह कोई छोटा बच्चा नहीं था। भाई जी की चापलूसी को वह एक-दो बातों में ही समझ गया। लेकिन उसने भाई जी की सच्चाई का इम्तिहान लेने के लिए कहा, "चलिए जरा तकलीफ करके दरवाजे खोल कर महाराज का प्रकाश कर दीजिए। इतने दिन का गांव आया हुआ हूँ, पाठ करने का मौका ही नहीं मिला।"

भाई जी का वार खाली ही गया और उनको हार कर नीचे उतरना ही पड़ा। पांच-सात मिनटों की कोशिश के बाद चाबी मिल गई। लेकिन जब ताले को लगाई तो खुलती ही न थी - बचन सिंह जरा नाराज होकर बोला, "चाबी तो नहीं बदल गई है?"

भाई जी झूलते हुए ऊपर जाते हुए बोले, "जरा-जरा ठहरिए, कहीं बदल न गई हो और जल्दी से जाकर तेल के दीये में चाबी खोल लाए -

जैसे ही ताला खुला। भाई जी बोल उठे - "मैं ने कहा - अंधेरा क्या पड़ गया आन कर के चाबी पड़ी थी दूसरी अलमारी में और मैं उठा लाया ऊपर के चौबारे की चाबी।"

अंदर जाकर दोनों ने जो हालत देखी इसके मुताल्लिक इतना बताना ही काफी होगा कि दोनों आदमी कांपने लग गए थे; बचन सिंह गुस्से से और भाई जी शर्म के मारे।

इसके बाद बचन सिंह ने भाई जी को चेतावनी देकर और डांट पिलाकर खेतों की तरफ चला गया।

(11)

"सुनाओ जी ग्रंथ साहब जी! आज कल तो बड़ी मौज में रहते हो।"

पाल सिंह ने बड़े प्रेम से वाहेगुरु जी की फतह बोल कर ऊपर का जुमला भाई जी से कहा, जो गुरुद्वारे

पृष्ठ 59

में झाड़ू दे रहे थे। झाड़ू कोने में खड़ी करके मिट्टी वाले हाथ साफ करते हुए पूछते हुए भाई जी बोले "आइए जी! जी आया नूं (खुशामदीद), महाराज, क्या बताएं आन करकर के। हम को तो सरदार जीवा सिंह के लड़के ने मुसीबत पाती है आन करकर के। जिस दिन का आया है - हमारा खून सूख गया है। डर के मारे कुछ कह भी नहीं सकते आन करकर के। क्या करें। ताकत वाले आन करकर के बीआईएस का सौ गिनवा लेते हैं।"

पाला सिंह गांव का छट हबुया बदमाश था और गाँव के लोग उसे भगवान की तरह पूजते थे। उसकी अपनी जो थोड़ी बहुत जमीन थी वह तो मां-बाप के मरते ही उसने ठिकाने लगा दी थी और वह अकेला छटा हुआ, सारा गांव उससे डरता था। जब किसी को लड़ाई झगड़ा करना होता था और ऐसा ही काम पड़े तो पाला सिंह उस खिदमत के लिए खुद को पेश कर दिया करता था।

उस में बांट कर खाने का लगन भी कुछ कम काबिले तारीफ नहीं था। वह अपनी टोली के साथ जब कभी महीने-पंद्रह दिन बाद फेरी लगाने (चोरी करने) जाता तो सब से पहले गुरुद्वारे पर चढ़ावा चढ़ाता और चढ़ावा जरूर मानता था। यही वजह है कि भाई जी उस पर बेहद मेहरबान थे। जब कभी उसकी फेरी अच्छी लग जाती तो गुरुद्वारे में कड़ा प्रसाद की देगें चढ़ाता था। इस के अलावा भांग के शरबतों का कभी न खत्म होने वाला लंगर हमेशा उसके खर्च पर चलता था।

इधर कुछ दिनों से वह फेरी लगाने ही गया हुआ था और आज बहुत दिनों बाद अच्छे हाथ रंग कर लौटा था।

जीवा सिंह के साथ उसकी काफी दिनों से लगती थी। उस पर ही वह पहले ही दांत पीसता रहता था और किसी ऐसे मौके की तलाश में था कि उससे सारे पिछले बदले निकाल ले। जीवा सिंह एक तो उसका रुआब ही नहीं मानता था, दूसरे उसने एक-दो बार हाकिमों के पास पाला सिंह की करतूतों का भांडा फोड़ दिया था। इसी वजह से उसे जीवा सिंह से हमेशा ही खतरा रहता था। अब वह बचन सिंह से भी खार खाने लगा था क्योंकि बचन सिंह उसके रास्ते में भारी रुकावट था।

भाई जी की बात सुनकर पाला सिंह बोला, "इस छोकरे की यह मजाल जो आप को कुछ कह सके। उसने आप पर क्या मुसीबत डाल दी है।"

"महाराज न पूछिए आन करकर के। नए पढ़े-लिखे हो गए हैं। जो गल्ल करेंगे, उल्टी ही करेंगे।"

कहता था - रोज सुबह तड़के उठकर गुरु ग्रंथ साहब का प्रकाश किया कर। दोनों वक्त झाड़ू दिया कर और शाम को रेहरास का पाठ किया कर आन करकर के।"

पृष्ठ 60

माथे की त्योरी चढ़ाकर पाला सिंह बोला, "अरे! उसका तो दिमाग खराब हो गया है। यह भी कोई अमृतसर है? यहां भला कौन आता है गुरुद्वारे, खेतों वेतों को छोड़ कर। मकर संक्रांति, पूर्णिमा या अमावस को तो कोई आ गया तो आ गया, पर भाई जी, आप भी पूरे मिट्टी के माधो हैं , भला आप जीवा सिंह से कोई पूरे महीने की तनख्वाह लेते हैं?"

अपने हक में यह तकरीर सुन कर भाई जी साहब हौसले के साथ बोले, "आपके बच्चे जिएं। लाख रुपये की बात की है आपने। महाराज, उस लड़के की शैतानी सीरत है। उसे समझाएं कौन? हम लोग तो ऐरे गैरे की जोरू हैं , गुजारा तो करना ही है। अगर इनकार करें तो कहेंगे - टके का ग्रंथी सामने से बोलता है आन करके । और फिर इतने झगड़े काहे के लिए करें, यहां तो न कोई किसी को जली रोटी का टुकड़ा उधार नहीं देता। ये तो आपके सख़्ती दानाओं के सहारे चल रहा है, या फिर महीने-दस दिन बाद

कोई न कोई मुकदमा हो जाता है। जिस की वजह से पाठ रखाने वालों से चार पैसे मिल जाती है। नहीं तो कौन आता है यहां गुरुद्वारे में।"

"तभी तो भाई जी साहब - हर ऐरा-गैरा आप पर रोब जमा लेता है। इस तरह भला कैसे काम चलेगा? आप बेशक उनका जवाब दीजिए। हम देखेंगे। आपका कोई क्या बिगाड़ेगा। हमारे होते हुए किसकी मजाल जो आपकी तरफ आंख भी उठाकर देखे।"

पाला सिंह की बातें सुन कर भाई जी की सोई हुई हिम्मत जैसे जाग पड़ी।

बड़े जोश से बोले, "नहीं सरदार जी! मुझे उसकी क्या परवाह है आन करके । मैं तो सोचता था कि कल तो आप भी उसकी बातों में आकर मुझे ही बुरा न समझे। आप का ख्याल न होता तो मैं उसे तभी झाड़ देता। सरदार जी! भला आप ही बताएं। हम नशे वाले आदमी ठहरे - अफीम से तो वैसे ही नींद ज्यादा आती है। और हां लीजिए एक और मुसीबत वो मेरे गले में डालने को फिरता है।"

"वो क्या?"

"कहता है कि भाई जी! आप सारा दिन जो बेकार चारपाई तोड़ते रहते हैं - और नहीं तो गांव के लड़के को ही पढ़ाया करो।"

पृष्ठ 61

गुस्से से होंठ चबाता हुआ पाला सिंह बोला, "न न कोई जरूरत नहीं। पढ़ाने-लिखाने की खुद बार-बार पढ़ कर क्या तीर मार लिया उसने। अच्छा भला लड़का होता था - अच्छे ढंग से बोलता था। जिस दिन से चार-एक उल्टे सीधे नुक्ते पढ़ लिए, मैं समझता हूँ उस दिन से तो उसकी अक्ल ही मारी गई है। और देखो - कैसा स्वांग रच कर आ गया है। जाटों का बेटा होकर कंगालों का सा हुलिया? कहने को खालसा कॉलेज वाले अच्छा पढ़ाते हैं। हां तो फिर आपने क्या कहा?"

"कुछ नहीं। मुझे कोई उसके घर खाने को जाना था - कह दिया - बाबा मुझे सारा दिन लड़के लड़कियों से मगज़ खपाई होती । और सरदार जी दोपहर को तो नशा पानी करने का वक्त हुआ और फिर बाहर जंगल पानी भी जाना हुआ, रफ़ा-ए-हाजत के लिए - हमें फुरसत कहां मिलती है ? ऐसी मुसीबतें बर्दाश्त करके आन करके ।"

नशे की बात पर जोर देता हुआ पाला सिंह बोला, "आप तो अब अकेले ही गुलछर्रे उड़ाते फिरते हो। ध्यान सिन्यों -और नारायण सिन्यों आज बड़ी देर से मेरे पीछे पड़े हुए हैं कि भाई जी की बैठक में चल कर परशाद लें।"

"गुलछर्रे महाराज! क्या उड़ाएं आन करके । उस लड़के के डर के मारे भंग नहीं घोंटता। कई दिनों से प्यासे ही बैठे हैं।"

"फिर वही बातें - आप से कह दिया कि उसकी जरा भी परवाह न किया करो। मैं खुद उससे समझ लूँगा। आप बेशक आज लगाइए रगड़ा। इसकी लाट साहबी भी देख लूँगा।"

"अच्छा जी! आज फिर निकालें कसर , आप भी आएंगे न?"

"हां जी! जरूर।"

"अच्छा फिर जल्दी तशरीफ़ लाना - साए ढलने से पहले ही और अपने साथ दूसरे साथियों को भी लाएंगे न।"

"हां जी - वह तो मेरा पीछा ही नहीं छोड़ते।"

"यह तो महाराज की बड़ी खुशी की बात है।"

"अच्छा फिर वाहेगुरु जी की फतेह!" कह कर पाला सिंह चला गया।

भाई जी की झाड़ू वहीं रखी रह गई और आप नशा रगड़ने की तैयारी में ही जुट गए।

वैसे तो आप सुबह ही बनायी हुई माजून की दो-तीन चुटकियां अफीम के बाद खा चुके थे। नशा भी अच्छा हो गया था। लेकिन जो घोट कर खाते पीते हैं इनका महज़ उंगलियां चाटने से क्या बनता है। नशे बाजों की सोहबत में बैठ कर घुटनों पर कोहनियां टिका कर छलकता हुआ कटोरा गटागट , चढ़ाने से जो लाली चेहरे पर आती है, वह इन चुटकियों से कहां है?"

(12)

दोपहर के तीन बजे का वक्त है। गुरुद्वारे की ऊपर वाली बैठक में भाई जी की टोली आकर इकट्ठी हुई है। भाई जी साहब एक तरफ बैठे प्रेम से आहिस्ता-आहिस्ता कुंडी (ओखली) साफ कर रहे हैं, क्योंकि बचन सिंह के डर से कई दिनों से इसे साफ करने का मौका ही नहीं मिला था।

पाला सिंह चादर के पल्लू से करीब डेढ़-दो सेर गुड़ खोल का रअलग रखता हुया बोला , "भाई जी! जरा फुरती से हाथ चलाइए।"

अंगौछे से कुंडी और मूसल पोंछते हुए भाई जी बोले, "लीजिए महाराज! आप गुड़ को आन कर के पतीले में घोल लें। मैं दौड़कर ठंडाई ले आऊं।"

मंडली में से एक नौजवान उठकर गुड़ खोलने लगा। एक भंग धोने लगा। भाई जी गीले हाथ पोंछते हुए बाजार की तरफ जाने लगे तो पाला सिंह ने चादर के कोने से चवन्नी खोल देते हुए कहा, "जरा ठहरना, दो आने की ठंडाई और दो आने के बादाम।"

गोपाल सिंह ने एक नीली सी पोटली खोलते हुए बोला, "भाई जी! बादाम न लाइएगा।"

और उसने पल्लू से तीन-चार बादाम खोल कर ढेर कर दिए।

पाला सिंह ने कहा, "अच्छा फिर चुटकी की ठंडाई ही लेते आइएगा।"

"सत बचन! जैसा आपका हुक्म।"

कहकर भाई जी जल्दी-जल्दी बाजार पहुंचे। वह सोचने लगे, जाटों की अक्ल तो मारी गई है। और फिर दो आने की ठंडाई ली और दो आने वापस जेब में डाल लिए।

डेरे पर लौटे तो वहां फौजें बादाम तोड़ने में व्यस्त थीं।

दीवा सिंह बोला, "भाई जी! आप तो वहीं जाकर बैठ रहे। लाइए। इधर लाइए।" और उसने भाई जी की तरफ हाथ बढ़ाया।

भाई जी ने कुर्ते की जेब से पुड़िया निकाल कर उसे जल्दी से पकड़ते हुए बोले, "अरे! मैं तो भागा ही गया और..."

सारी मंडली में हंसी के फव्वारे फूट पड़े और सब हंस-हंस कर दोहरे होने लगे।

पृष्ठ 63

भाई जी पर सुबह की भंग का असर था या पता नहीं क्या ? दरअसल पुड़िया तो उनकी जेब में ही खुल कर ठंडाई गिर गई थी और खाली पुड़िया निकाल कर दीवान सिंह को पकड़ा दी। जो थोड़ी बहुत ठंडाई बची हुई थी, वह पकड़ते वक्त जमीन पर गिर गई।

भाई जी शर्मिंदा हो गए और नीचे बैठकर कुर्ते की जेब में से ठंडाई निकाल कर कुंडी में डालते हुए बोले, "और देखो, ना महाराज इन बानियों के छोकरों को आन करकर के पुड़िया बांधने का भी ढंग नहीं। मां के पास से आकर दुकान पर बैठ जाते हैं आन करकर के।"

सारी टोली दायरा बना कर बैठ गई और बारी-बारी मूसल से कसरत शुरू हो गई।

जब भंग घोटते-घोटते पौन घंटा हो गया और भंग और भी ज्यादा बारीक हो गई तो लक्खा सिंह बोला, "चलो बस भी करो , अब की रात यहीं पूरी करनी है!"

भाई जी करीब ही बैठे गिलास साफ कर रहे थे। एक कटोरे को जरा सी चिकनाहट लगी हुई थी। उसे उंगली से उतार कर घुटनों पर मलते हुए बोले, "अभी नहीं महाराज, अभी आन करकर के दो-चार रगड़े लगाओ।

आज कहीं से एक निर्मल साधु भी गुरुद्वारे में आया हुआ था और वह भी इस टोली के नजदीक कहीं भंग व सुमरती का टीका पढ़ रहा था।--

बड़े बुजुर्गों का कहना है:

सुक्खा घोटन में जीतना करो विलंब , तेता ही बहुगुण *करे, कहे शिव शंभू आप।*

(शिव जी महाराज खुद फरमाते हैं कि भंग घोटने में जितनी देर की जाए उतना ही अच्छा होता है।"

भाई जी का ध्यान इस ओर से हट उसकी तरफ गया और वह बोल उठा, "भाई जी साहब! आप तो शायर मालूम होते हैं, लेकिन काफिये से काफिया से तो ठीक नहीं मिला।"

भाई जी ने अपना रोब जमाने के लिए बोले, "महाराज, इसको आन करकर के सरखंडी छंद कहते हैं। बड़े-बड़े कवि आन करकर के इस छंद में कविता किया करते थे। देखो ना, एक कवि ने फरमाया है:

मुख पर रंग सहाए - विष्णुनाथ कैलाश पत

जो भजे सुख पाए - मन चित सेती ध्यान धर।"

और तो किसी को कुछ समझ में न आया लेकिन निर्मल साधु जी चुप न रह सके और हंसते हुए बोले, "भाई जी साहब! इसको तो सोरठा छंद कहते हैं। और यह भी मालूम होता है कि यह शेयर भी आपने ही कहा है:

"मुख पर सहाए", वाह-वाह क्या खूब अलंकार है। गंगा शिव जी के मुंह से निकली थी या सर से।"

भाई जी नशे के झोंके में इस बात का ध्यान ही न था कि इन मिट्टी के माधव (मिट्टी की मूर्तियों) के बीच कोई ज्ञानी भी बैठा है। अब उन्हें पीछा छुड़ाने की फिक्र हुई।

वह पाओं के एक नाखून को छीलते हुए बोले, "महाराज, सोरठा और सरखंडी आन करकर के एक ही चीज़ हैं। शायरों ने इनके नाम ही आन करकर के अलग रखे हुए हैं।"

साधु को और भी हंसी आ गई और बोला, "ठीक है ज्ञानी जी। मैं समझ गया, क्योंकि दोनों की जड़ एक है। आप तो बड़े आलिम (विद्वान) हैं।"

अपने भाई जी की इस जीत पर सब तालियां बजाने लगे।

इस शुग्ल में आधा घंटा और बीत गया।

प्यारा सिंघ कुंडी के किनारे से भंग इकट्ठी करते हुए बोला, "भाई जी! बस या अभी और रगड़े लगाने हैं?"

"बस महाराज बस!" कह कर खूंटी से अंगौछा उतार कर भाई जी सब से आगे आकर बैठ गए। बैठते वक्त उनके घुटनों की हड्डियों से इस तरह कड़कड़ाती आवाज आई जैसे किसी ने पटाखे छोड़ दिए हों। पाला सिंह ने मूसल से पतीले में गुड़ की भेली तोड़ते हुए बोला, "भाई जी! सच। एक बात और ख्याल रखिएगा। आज छाँदा (ठंडाई) दो तरह की बनाना। एक पक्के फौजी के लिए और एक रंगरूटों के लिए (एक तरफ हाथ से इशारा करते हुए)। यह सरदार जी गंडा सिंह का दामाद है। यह पहली बार ससुराल आए हैं। कहीं ऐसा न हो कि दोबारा ससुराल आना ही बंद कर दें और वसाव सिंह और महां सिंह भी नए नए भरती हुए हैं।"

"सत बचन।" कह कर भाई जी अपने काम में मशरूफ हो गए और थोड़ी देर में ही सारा काम पूरा हो गया।

गंडा सिंह का दामाद प्रताप सिंह बेशक शहर का रहने वाला था लेकिन पढ़ा-लिखा बस पाओं के घुटनों तक ही था। वैसे लिबास और कालर नेकटाई के नाम से बीए... एमए से कम नहीं मालूम होता था। वह बेचारे ने आज से पहले भंग कम व बेश ही चखी थी, आज भंगियों की टोली में फंस कर वह सोच रहा था कि खुदा खैर ही करे।

और जब प्रताप सिंह ने देखा कि अब उसके प्याले की बारी है तो उसने पीछे बैठे भाई जी की कमर को उंगली से छूते हुए धीरे से कहा, "भाई जी! जरा सवाया परशाद (कम प्रसाद) ही दीजिए।"

भाई जी खालसे के इन मखसूस अल्फाज (विशेष शब्दों) के सही अर्थों को कम व बेश ही समझते थे। उन्होंने पीछे

देखे बिना 'सवाया परशाद' का मतलब यह समझा कि 'जरा ज्यादा'। भंग पीने वालों में असल में इस बात से बड़ी खुशी चढ़ती है। जो घमंड करे कि मैं ज्यादा पी सकता हूँ, वह खुश होकर उसे इतनी गाढ़ी भंग देते हैं कि जिससे उसका घमंड अच्छी तरह टूट जाए।

भाई जी ने भी प्रताप सिंह के साथ यही किया। गुलाबी '(हल्कि) को छोड़ कर सूही' (तेज) में से और वह भी गाढ़ी-गाढ़ी भंग से उसका गिलास भर दिया।

प्रताप सिंह ने बहुत कहा, "भाई जी! थोड़ी कीजिए, थोड़ी कीजिए!" लेकिन भाई जी ने बड़ी मुश्किल से एक घूंट भंग कम कर के गिलास उसे पकड़ा दिया। उसने पी ली लेकिन फिर भी चौथाई हिस्सा छोड़ दिया। जब सब को परशाद मिल गया तो दूसरे कटोरे भर कर भाई जी ने पी डाली।

इसके थोड़ी देर बाद इधर-उधर की बातें शुरू हो गईं। मुंह पर हाथ फेरता हुआ प्रताप सिंह बोला, "भाई जी! आज तो जैसे जन्नत के झोले (झूले) ले रहे हैं कि बस चुप ही भली। हर तरफ गुलज़ारें (फूल) पकी हुई हैं।"

मुंह बंद कर के आंखें सिकोड़ कर इंदर सिंह ने जवाब दिया, "क्या कहा? गुलजारें पकी हुई हैं? तुम भी बेटा बस उपले थापने भर के हो। गुलजारें खिला करती हैं या पकती हैं? पकती तो बेलें हैं।"

आंखों को जोर से खोलते हुए भांग के नशे में प्रताप सिंह बोला, "भाई जी! क्या बात है। तुम्हें तो अभी से चढ़नी शुरू हो गई है। तुम तो पुराने पापी थे। अभी से आंखें सिकोड़ने लग पड़े हो।"

पाला सिंह ने मुंह से थूक को बड़ी मुश्किल से उतार कर बोला, "यह क्या किया? चढ़ने लग पड़ी है?" होंठों और रुखसारों (गालों) पर जोर-जोर से उंगलियां रगड़ते हुए, "मुझे तो भंग कभी चढ़ती ही नहीं। गुरू की कसम। अगर सारी पी जाता तो भी पता नहीं चलता। मेरा स्वभाव कड़ुवा है। यह वैसे नहीं चढ़ती। शराब का नशा तो मुझे होता ही नहीं, चाहे कनस्तर भर पी जाऊं।"

थोड़ी देर रुक कर पाला सिंह फिर बोला, "भान सिन्हा! तुम तो मुझे कहते थे कि आंखें तो तुम खुद ही बंद किए जा रहे हो।"

चौंक कर प्रताप सिंह बोला, "तूने क्या कहा? (फिर भंग चढ़ने को महसूस करते हुए) मुझे नहीं, मुझे तो पता भी नहीं।"

"हुँ! भला पते नहीं, आंखें नहीं बता रही हैं?"

"अच्छा! ठीक है। भला! जिस तरह समझ लो। ऐसे तो। जो दिल में आए मुझसे पूछो। अगर ठीक जवाब न दूं तो कहना।"

पृष्ठ 66

"अच्छा फिर ऐसे ही सही" कहकर और सोचकर पाला सिंह ने कहा, "अच्छा भला था। काला सिंह कामूवाले के मामले में कौन-कौन सा गवाह भुगता था।"

जवाब के इंतजार में जब पाला सिंह ने भान सिंह की तरफ देखा तो उसकी आंखें जम गई थीं। वह अपनी जीत पर खुश होकर उसे कुछ कहने ही वाला था कि उसे बात ही भूल गई। जब भूली हुई बात को याद करने के लिए वह ध्यान से सोचने लगा तो उसे यह भी भूल गया कि वह किस सिलसिले में बात कर रहा था और ज्यादा सोचने से उसे यह भी ख्याल न रहा कि वह किससे बातें कर रहा था। आखिर बड़ी कोशिश के बाद उसे याद आई जैसे कोई खोई हुई चीज मिल गई हो। वह जल्दी-जल्दी बोला, "हां, बताऊं। भान सिंह, कौन-कौन गवाह भुगता था?"

भान सिंह की फिर समाधि खुली और उसने बात का मतलब न समझ कर कहा, "क्या कहा है?"

आंखों को और भी जोर से खोलते हुए पाला सिंह बोला, "क्या? मैंने तो कुछ नहीं कहा।" (सोच कर) "हां सच, मैंने कहा था। लाल बैल को न जोतना। सारी रात बेचारा कुएं में जूता रहा है।"

भान सिंह होंठों पर जुबान फेरता हुआ बोला, "आधा छोड़ भी दे। तुम तो कहते थे" (बात भूल कर) "हां, भूल गया था। लेकिन उसने मुझसे कराए के दो रुपये" (रुक कर) "चली गई थी।" (हंसने लगा)

पाला सिंह मुंह पर हाथ फेरता हुआ बोला, "भाई भान सिंह! आज तो हद हो गई। मुझे तो कभी नहीं चढ़ती।"

बात करते ही उसका कुछ खाने को दिल हुआ। उसने देखा कि भंग से बचा हुआ सेर भर जो गुड़ बचा था। वह सब का सब खा लिया था।

"भाई जी! जाइए कुछ खाने को लाइए।"

भाई जी झूम रहे थे। बिना कुछ कहे से रुपये लेकर बाहर चले गए और गली का मोड़ मुड़ते ही उनको भूल गया कि वह किस काम से जा रहे थे लेकिन फौरन ही काम याद आ गया। बड़ी होशियारी के साथ वह हलवाई की दुकान पर पहुंचे। वहां से आठ आने की रेवड़ियां तुड़वा कर दिमाग पर जोर देते

हुए अड्डे पर पहुंचे। वहां तमाम रंगरूट फौज लेटी हुई थी और पक्के फौजियों में से भी कोई छत पर नजरें जमाए बैठा था, कोई हंस रहा था तो कोई वैसे ही बूट बना हबुया था और अगर एक आगे झुक कर दूसरे को बुलाने लगा तो वह वहीं का वहीं रह गया।

सोए तो खैर सो ही रहे थे लेकिन जागने वालों के लिए रेवड़ियां भूतों का सत्तू बन गईं ।

पाला सिंह ने एक और रुपया निकाल कर भाई जी को दे दिया। वैसे तो वह शायद इनकार ही करते लेकिन आठ आने की खातिर और दूसरे पहली रेवड़ियों में से एक दाना भी न मिलने की वजह से चल ही पड़े।

पृष्ठ 67

उस वक्त वह बड़ी होशियारी से इस बात को याद रखने की कोशिश कर रहे थे कि जिस काम के लिए जा रहे हैं, वह भूल न जाएं। और रास्ते में भटक न जाएं। जिस तरह दरिया में बहते हुए मश्क (मशक) के सहारे तैरने वाला इंसान तैर कर मश्क की मजबूती से पकड़े रखता है कि उसे छोड़ न दें और डूबा नहीं, उस तरह भाई जी मजबूती से एक रुपये को थामे थे।

कंधे पर तौलिया था। उसे पता नहीं कहां रख दिया था और यह बात याद करके कि रेवड़ियां इसमें बांध कर लानी हैं, उसे ढूंढने के लिए चारपाई के नीचे टटोलने लगे।

जब काफी देर हो गई और भाई जी रेवड़ियां लेकर न आए तो पाला सिंह को रेवड़ियों की याद आई। वह उनके पीछे गया और फिर वह भी वापस न लौटा।

निरमिले महात्मा जी इस काम में जरा पक्के थे। करीब एक घंटे बाद जब उनका नशा कुछ उतरा तो पता चला कि तीन आदमी जो रेवड़ियां लेने गए थे उनमें से कोई नहीं आया। इसलिए उनके दिल में भी नेकी का जज्बा उभरा वह चैन से न बैठ सके। जैसे नेकी की नीव रेवड़ियों के तलों पर टिकी हुई थी और वह पहले जाने वाले लोगों को ढूंढने के लिए निकल पड़े। चिराग जलने का वक्त हो चुका था।

वह बाजार पहुंचे। काफी ढूंढा भाला लेकिन तीनों में से कोई भी दिखाई न दिया। हार कर जब डेरे की तरफ लौट रहे थे तो रास्ते में देखा कि एक जगह जहां कुएं में गंदा पानी इकट्ठा हो गया था, वहां पाला सिंह मुंह के बल गिरा पड़ा था।

कई आदमी उसको हिला रहे थे। लेकिन वह यही कह रहा था

"ओए मुझे आग लग गई है। मेरे कपड़े जल रहे हैं। पेट पर पानी डाल कर आग बुझा दी। लेकिन कमर अभी तक जल रही है। कमर पर पानी की बाल्टी डालो। हाय ओए मैं मर गया।"

संत जी ने सब कुछ देखा और चुपचाप डेरे की तरफ चले गए। लेकिन उन्हें भाई जी का भी पता न चला। वह लेटने के लिए जब चारपाई पर बैठे तो नीचे से कोई चीज़ पैरों को छू गई। जब उन्होंने नीचे झांका तो भाई जी सिमटे हुए नीचे पड़े थे। और रुपये उनकी मुट्ठी में जकड़ा हुआ था।

संत जी ने भाई जी को बाहर निकालने की कोशिश की लेकिन वह और ज्यादा सिकुड़ते जाते थे और कह रहे थे "पकड़ो - पकड़ो - बचन सिंह को आन करके। जल्दी करो। देखो मेरा आन करकर के गला दबाए जा रहा है। उसने मुझे (बड़े जोर से मुंह का थूक निगल कर) मार देना है। मदद के लिए पहुंचो। ओए मेरे मुंह में आन करकर के रेत भरे जा रहा है।"

इधर सब बेहोश थे। भाई जी के बकवास की तरफ ध्यान देने का किसे होश था।

पृष्ठ 68

संत जी को फिर ख्याल आया कि ऊपर से रात आती है और इन लोगों का क्या बनेगा? उन्होंने सब को उठाना शुरू किया और तो सब गिरते पड़ते उठ गए, लेकिन प्रताप सिंह हजार कोशिशों के बावजूद न उठा । जब संत जी ने गौर से उसकी तरफ देखा तो वह डर गए और अपना बिस्तर और कमंडल उठा कर भागने के लिए तैयार हो गए, लेकिन फिर यह सोच कर कि इस हालत में जाना भी मुश्किल है, वहीं पर लेट गए।

दूसरे दिन जब सूरज काफी चढ़ आया तो संत जी दो एक अंगड़ाइयां लेकर उठ बैठे। उन्होंने चारों तरफ देखा, लेकिन 'भाई जी' कहीं दिखाई न दिए। उस वक्त उनका बुरा हाल हो रहा था। फिर रात की सारी बातें याद आ गईं और यह भी याद आया कि 'भाई जी' चारपाई के नीचे लेटे थे, लेकिन अब वह कहीं दिखाई नहीं दे रहे थे। फर्श पर जो एक नौजवान मुंह के बल पड़ा था, वह भी नहीं था।

संत जी को डर लगने लगा और वह वहां से खिसक लिए। वह अभी गांव से आधे मील ही होंगे कि उन्होंने देखा कि बचन सिंह 'भाई जी' को कमर पर लादे चला आ रहा है, लेकिन संत जी ने आंखें बचा कर निकल जाना ही मुनासिब समझा।

(13)

सारे गांव में हलचल मच गई। घर-घर में भंग का जिक्र था। और तो सब के घरों में बात पर पर्दा डाल दिया गया, लेकिन गंडा सिंह के घर में बात का बतंगड़ बन गया। दामाद पहली बार घर आया था और उसका यह हाल कि सारी रात बेचारे ने आंख न खोली। बचन सिंह की जुबानी उनको पता चल गया था कि उसने गुरुद्वारे में भंग पी है, क्योंकि जब बचन सिंह रात को 'भाई जी' को कमर पर लाद कर घर पहुंचाने आया था तो उसने बताया कि जब वह गुरुद्वारे गया, तब 'भाई जी' वहां नहीं थे, लेकिन एक संत चारपाई पर लेटा था और प्रताप सिंह नीचे जमीन पर।

गंडा सिंह के सारे खानदान ने काफ़ी (भरसक) दवा दारू की। कानों में तेल डाला, सर में भी लगाया। आम का अचार मुंह में डाला, लेकिन इस बेचारे के हलक से तो कुछ उतर ही नहीं पा रहा था। दूध में घी डाल कर पिलाने की कोशिश की, लेकिन वह भी मुंह से ही बाहर आ गया।

आहिस्ता-आहिस्ता लड़के की हालत ज्यादा खराब होनी शुरू हो गई। आंखें पथरा गईं। मुंह नीला होता गया। सारा जिस्म भारी हो गया, यहाँ तक कि लड़के का जिस्म लकड़ी के शहतीर की तरह अकड़ गया। सब के होश उड़ गए। पास वाले गांव में सरकारी अस्पताल था। सुबह सवेरे डॉक्टर साहब लाए गए। उन्होंने बताया कि लड़के को जहर दिया गया है। उसे सरकारी अस्पताल पहुंचाया गया।

पृष्ठ 69

दूसरे दिन पाला सिंह और उसकी टोली को भी अपनी फिक्र पड़ गई। चोर को अपना डर मारता है। पाला सिंह को ज्यादा फिक्र इसलिए हो गई कि अगर पुलिस को उसकी कल की कारगुजारी (करतूत) का पता चल गया, तो सारी बात उसके सर आ जाएगी क्योंकि वह पहले ही दो-तीन साल से दस नम्बरी की लिस्ट में रह चुका था और फिर लगातार पुलिस की कई तरह की खिदमत करने के बाद बड़ी मुश्किल से दस नम्बरी होने का कलंक से निकला था और अब प्रताप सिंह का जैसा हाल वह देख आया था, उससे वह और भी डर गया।

उसको एक निशाने से दो शिकार मारने का ढंग सूझा। पहले ही जाकर उसने रिपोर्ट कर दी कि जीवा सिंह के लड़के बचन सिंह ने गंडा सिंह के दामाद को जहर पिला दिया है। दोपहर को ही थाने से दौड़ आ गई। आते ही एक सिपाही ने जीवा सिंह के दरवाजे पर तैनात कर दिए। थानादार गंडा सिंह के घर पहुंचा।

उधर एक हवलदार बचन सिंह के घर की तलाशी ले रहा था और इधर थानेदार वारदात की जगह देखने के लिए गुरुद्वारे में दाखिल हो गया। गुरुद्वारे में भी जा कर उसने देखा कि बचन सिंह 'भाई जी' के सर में तेल लगा रहा है और 'भाई जी' उसके सामने बैठे झूम रहे हैं।

पुलिस ने दोनों को हिरासत में ले लिया। फिर मकान की तलाशी शुरू की, लेकिन उन्हें वह जो चाहिए था वह फौरन ही मिल गया। ज्यादा परेशानी नहीं उठानी पड़ी। एक कोने में भंग वाल अंगोछा पड़ा था । भंग छान कर भाई जी ने वैसा ही रख दिया था। जल्दी में न तो भंग का फोग ही निकाल कर फेंका था और न ही अंगोछा साफ किया था ।

डॉक्टर को बुलाया गया। उसने फोग का मुआयना करने के लिए उसे टटोला तो उसमें से घिसे हुए दो पैसे निकले, जो इतने घिस गए थे कि उनका वजन भी आधे से कम रह था।

डॉक्टर और पुलिस को अब समझने में देर न लगी कि ये पैसे ही भंग में घिस कर प्रताप सिंह को पिलाए गए हैं। बचन सिंह और 'भाई जी' को हथकड़ियां पहना दी गईं और उधर जीवा सिंह के घर में हंगामा हो गया।

नजदीक ही पाला सिंह और उसकी टोली के कई आदमी खड़े थे। बेशक भंग की खुश्की से सब के सर चकरा रहे थे, लेकिन इस मौके पर वह ढीले नहीं रहना चाहते थे। भंग में से पैसे निकले देख कर

पृष्ठ 70

सब के सब हके-बके रह गए। उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि ये पैसे किसने डाल दिए। लेकिन कुछ भी हो उन्हें इस बात की बड़ी खुशी थी कि बचन सिंह को फंसाने और अपने गले से फांसी का फंदा उतारने के लिए उन्होंने जो भी पानी में लाठी चलाई थी, उसमें सचमुच बचन सिंह के खिलाफ खुद-ब-खुद पुलिस को सबूत मिल गया था। फिर उससे भी ज्यादा यह कि एक तो वह मौके पर ही पकड़ा गया और प्रताप सिंह के ससुराल वालों ने बयान में लिखवा दिया था कि रात को नौ बजे बचन सिंह हमारे लड़के को उठा कर घर पर छोड़ गया था और यह भी कहा गया था कि ज्यादा भंग पीने की वजह से ये बेहोश हो गया है। इसके अलावा पाला सिंह की टोली ने लगे हाथों पुलिस का हाथ भी गर्म कर दिया था।

दोनों मुजरिमों का चालान हो गया और मुकदमा अदालत में पेश हुआ। जीवा सिंह चाहे खांसी-बुखार की वजह से बीमार था लेकिन उसकी तरफ से एक वकील खड़ा किया गया।

इस्तगासे में जो गवाहियां हुईं उनमें पाला सिंह की गवाही इस तरह थी:

"वाकये वाले दिन मैं अपने घर में मौजूद था। शाम के पांच बजे जब गुरुद्वारे गया तो बचन सिंह और प्रताप सिंह भंग घोट रहे थे। 'भाई जी' पूजा-पाठ में मशरूफ थे। मैं वहां थोड़ी देर रुक कर लौट आया। रात को नौ बजे के करीब जब मैं गली से गुजर रहा था तो बचन सिंह को मैंने देखा। यह प्रताप सिंह को कमर पर लादे उसे ससुराल के घर ले जा रहा था। मैंने इसे कोई आवाज दी लेकिन इसने कोई जवाब नहीं दिया।"

इसके बाद पाला सिंह की टोली के कुछ लोगों की गवाहियां हुईं। उनका बयान भी ऐसा ही था।

जब मुजरिमों के बयान शुरू हुए तो 'भाई जी' तो तोते की तरह पढ़ाया गया था, बोलने लगे --। उसके मुताबिक तो-----

मुझे आन करकर के बचन सिंह ने भंग घोटने के लिए कहा था। ठंडाई लाने के लिए आन करकर के पैसे भी दिए थे। मैं दो आने की ही... कहते-कहते 'भाई जी' रुक गए।

हाकिम जो एंग्लो-इंडियन था, सरकारी वकील से पूछा, "वकील यह अपने बयान में आन करके क्या क्या बोलता है, ?"

वकील ने उसका अंग्रेजी में जवाब दिया कि यह उसका तकिया कलाम है और साहब हंस पड़े।

अपने बयान को जारी रखते हुए 'भाई जी' बोले, "दो आने की ठंडाई लाया था हुजूर आन करकर के। मेरा तो इसमें कोई कसूर भी नहीं। मुझे जो मर्जी सजा दे दीजिए।"

बचन सिंह का वकील पूरा उस्ताद था। वह जिरह के सिलसिले में 'भाई जी' से पूछने लगा, "आप ठंडाई किससे लाए थे?"

पृष्ठ 71

"देवी दयाल बनिये के लड़के से आन करकर के।"

"उसको आपने क्या दिया था?"

"चुवन्नी।"

"और उसने आपको क्या लौटाया था?"

"दोनी।"

"अच्छा उसने आपको दो आने के कितने पैसे दिए थे?"

इस वक्त पीछे खड़े पाला सिंह ने इशारे से दो उंगलियां दिखाकर समझाने की कोशिश की, लेकिन 'भाई जी' तो शरीफ गाय के पेट से पैदा हुए थे, उनकी समझ में न आया और बोले,

"आठ पैसे।"

फिर वकील ने पूछा, "इन पैसों का आपने क्या किया?"

"मैं ने आन करकर के कुर्ते की जेब में डाल लिए थे।"

"और ठंडाई वाली पुड़िया?"

"वह भी उसी जेब में आन करकर के।"

"और डेरे पर जाकर आपने पैसों को कहां रखा?"

'भाई जी' को कोई भी बात याद आ गई और झिझकते-झिझकते बोले, "बाद में मेरी जेब से आन करकर के कुछ पैसे ही निकले थे। शायद वह पैसे भंग की कुंडी में... (सोच कर) जमीन पर गिर पड़े होंगे आन करकर के।"

"और वह जो पैसे भंग के फोग में से निकले हैं वह कहां से आए?"

'भाई जी' की टांगें कांपने लगीं और नंगे घुटने एक दूसरे के साथ खटखटाने लगे। मामला साफ होता देख वह घबरा गए। वकील ने जब उनको मुश्किल में फंसा देखा तो जरा और आंखें तरेर कर बोले, "सच बताओ तो बच जाओगे। नहीं तो सारी उम्र के लिए जेल खाने जाओगे। फिर बैठे किस्मत को रोते रहोगे।"

'भाई जी' के बच्चे भी होश उड़ गए। वह वकील के आगे हाथ जोड़ कर बोले, "हुजूर आन करकर के सच-सच ही कहूं। ये पैसे मेरी जेब से ही ठंडाई में मिल कर कुंडी में गिर पड़े थे। मुझे बाद में ख्याल आया था।"

पृष्ठ 72

पाला सिंह की टोली का रंग फीका हो गया। उनकी नाव का चप्पू एक ऐसे अनजान मल्लाह के हाथ में था, जिससे उनको मालूम हो रहा था कि अब डूबे ही डूबे।

वकील ने 'भाई जी' को थपकी देकर मोहब्बत से कहा, "शाबाश! मैं आपसे बहुत खुश हूँ। गुरु के सिख और आप जैसे ग्रंथी झूठ नहीं बोला करते।

इस थपकी ने जैसे 'भाई जी' का कायापलट कर रख दी। उन्होंने अलिफ से ले कर (शुरू से) सब बातें सच बता दीं और यह भी कह दिया कि बचन सिंह का इसमें कोई हाथ नहीं था।

इसके बाद बचन सिंह का बयान हुआ। उसने कहा: "मैं वाकये वाले दिन सुबह सात बजे तहसील गया हुआ था। एक जमीन के समझौते के बारे में पटवारी के पास गया था। इसके सबूत में तहसील से शहादत हुई। रात के आठ-सवा आठ बजे जब मैं गांव पहुंचा तो मैंने सोचा कि 'भाई जी' से मिलता चलूं क्योंकि गांव के गुरुद्वारे में लड़कियों का स्कूल खोलने के लिए इनसे मेरी बातचीत चल रही थी। मैंने गुरुद्वारे की ऊपर की छत पर जाकर देखा तो 'भाई जी' वहां मौजूद नहीं थे। एक निर्मल साधु (जो उस के बाद दिखाई नहीं दिया) चारपाई पर लेटा था और प्रताप सिंह नीचे। मैंने उन दोनों को जगाने की कोशिश की लेकिन वह न जागे। पास ही भंग के बर्तन और डंडा देख कर मैं समझ गया कि इन्होंने भंग पी ली है। प्रताप सिंह की हालत देख कर मैं डर गया। उसे उठा कर उसी वक्त उसके ससुराल के घर पहुंचा दिया। अगली सुबह जब मैं खेतों की तरफ गया तो मुझे किसी ने बताया कि दरिया के किनारे कोई शख्स मरा पड़ा है। मैं उसी वक्त उस बताई हुई जगह पर पहुंचा तो वहां 'भाई जी' को बेहोश पाया। उन्हें उठा कर गुरुद्वारे में लाया। जब बहुत कोशिश के बाद भी वह होश में न आए तो उन्होंने बताया कि -----मुझे पता नहीं कि किस वक्त मैं भंग के नशे में चारपाई के नीचे घुस गया। शाम को साढ़े सात बजे मुझे जंगल पानी जाने की जरूरत महसूस हुई। मैं उसी तरह गिरता-पड़ता बाहर निकल पड़ा। करीब ही एक आम का बाग था। उसमें जंगल पानी (रफा-ए-हाजत) होकर जब मैं लौटा तो मुझे कुछ पता नहीं कि मैं कहां से आया हूं और किधर जाना है। फिर मुझे पता नहीं कि किस वक्त और किस रास्ते मैं दरिया पर पहुंचकर बेहोश हो गया।

इसके बाद प्रताप सिंह की गवाही हुई, जो अभी अस्पताल में था और अभी मुश्किल से बोल सकता था। उसने सीखे-सिखाए के मुताबिक बयान इधर-उधर किए (बयान पलटा), लेकिन वकील की जिरह के सामने न ठहर सका।

मुकदमे का रुख ही पलट गया। पाला सिंह, ग्रंथी और उनके पांच साथियों को अदालत के हुक्म से गिरफ्तार किया गया और कुछ पेशियों के बाद अदालत ने मुकदमे का फैसला इस तरह सुना दिया:

"बचन सिंह बरी। 'भाई जी' दसूंधा सिंह को गैर-जिम्मेदारी से एक जान खतरे में डालने के जुर्म में एक साल कैद। पाला सिंह को झूठी रिपोर्ट दर्ज कराने के जुर्म में दफा (धारा) के मुताबिक दो साल कैद, बाकी पांचों को झूठी गवाही देने के जुर्म में दफा 193 के मुताबिक छह-छह महीने कैद।"

(13)

बेशक पाला सिंह और उसके साथियों और 'भाई जी' ने अपने करतूतों का ही फल पाया था लेकिन पाला सिंह की बाकी टोली पर इसका बुरा असर हुआ और वह बचन सिंह पर दांत पीसने लगे। खास कर पाला सिंह के कुछ जिगरी दोस्त इस इंतजार में थे कि कब पाला सिंह बाहर आए और बचन सिंह से गिन-गिन कर बदले लें। उन्होंने सारे गांव में मशहूर कर दिया कि बचन सिंह ने ही भंग में पैसे मिलाकर पाला सिंह के साथ दुश्मनी की थी और 'भाई जी' की गवाही बदलवा कर सबको फंसाया है।

इधर बचन सिंह यह सोच रहा था कि सिर्फ जहालत की ही वजह से हमारे भाइयों की ऐसी बुरी हालत हो रही है कि वे गुरुद्वारे जैसी मुकद्दस (पवित्र) जगहों पर भंग और अफीम के दौर चला कर अपनी नस्लों का सत्यानाश कर रहे हैं। वह मुस्तकम (दृढ़) इरादे से इस ला-इल्मी (अज्ञानता) को दूर करने और सामाजिक सुधार के लिए कोई तरकीब सोचने लगा। अमृतसर आने से पहले बचन सिंह ने उस बुजुर्ग अज़ीम हस्ती ज्ञानी जी को मिलने का वादा किया था। उसी के मुताबिक उसने ज्ञानी जी को बुलाया और वह जल्दी ही आ गए।

शहर सियालकोट के आप रहने वाले थे और आप के दौलत के मामूली काम धंधे थे। ज्ञानी जी ने कुछ अरसा पहले ही फैसला किया था कि गृहस्थी में काफी रह लिया है, अब बाकी जिंदगी लोक सेवा में लगाई जाए। उनके दोनों बेटों ने दस-दस रुपये महीने अपने बाप को देने का मंजूर कर लिया था। इसके अलावा कोठरी बहुत जमा-पूंजी उनके पास पहले की थी।

ज्ञानी जी के दर्शन करके बचन सिंह को बड़ी खुशी हुई। उसने अपने गांव के आसपास के इलाके की हालत ऐसे दर्द भरे अल्फाजों में उन को सुनाई कि ज्ञानी जी की आंखें तर (नम) हो गईं। उन्होंने मुकदमे का हाल सुनकर और बड़े दुखी हुए और यह भी महसूस किया कि बचन सिंह कितना सच्चा, दिलेर और बे-खौफ नौजवान है और उसकी जिंदगी में कितनी तब्दीली आ चुकी है।

आखिर बचन सिंह ने जाकर गुरुद्वारे की हालत दिखाई तो ज्ञानी जी बर्दाश्त न कर सके और...

पृष्ठ 74

वे कुछ समय के लिए वहीं रुक गए।

ज्ञानी जी बड़े ही सुलझे हुए, सीधे और मीठा बोलने वाले इंसान थे। वे रोज अमृत वेले (सुबह तड़के) उठते, नहा-धोकर गुरुवाणी का पाठ करते, फिर महाराज गुरु ग्रंथ साहिब (सिखों की पवित्र किताब) का प्रकाश करते थे। गुरु ग्रंथ साहिब को पढ़ने के लिए खोलते थे। ज्ञानी जी के आने का ग्रामीणों को एक फायदा यह हुआ कि तड़के चार बजे जब आप कुएं पर नहा धो रहे होते तो चरखी की आवाज लोग सुनते, तो उनकी नींद खुल जाती और वे हल-पंजाली संभाल कर खेतों की तरफ चल देते।

धीरे-धीरे उनकी बीवियां भी सुबह जागने लगी। वे खेतों की तरफ साग तोड़ने या रोटी देने जाते, तो खेतों से चुनी हुई थोड़ी सी प्याज या मक्के का एक दो भुट्टा ज्ञानी जी की सेवा में पेश कर जाते थे।

समय गुजरता गया। अब कभी-कभी जात भी आते-जाते हल-पंजाली दीवार के सहारे टिका कर बैलों को हांक कर अंदर आ जाते या बाहर से ही सम्मान से झुक कर चले जाते थे।

बचन सिंह की हिम्मत से ग्रामीणों के कई छोटे-छोटे लड़के और लड़कियों को इकट्ठा करके ज्ञानी जी ने उनको पढ़ाना शुरू कर दिया। एक बढ़ई (तरखान) से लकड़ी की दस-पंद्रह तख्तियां बनवा लीं। कलमों के लिए नदी के किनारे उगे जंगल में से सरकंडे (कानों) का ढेर काटा और कुम्हार से मिट्टी और पीली मिट्टी लाकर बच्चों के लिखने का सामान तैयार किया। ग्रामीणों के बिगड़े हुए बच्चों को घंटे भर के लिए टिक कर बैठाना, दिन भर नशा करने से भी ज्यादा मुश्किल था, लेकिन ज्ञानी जी के मीठे स्वभाव और प्यार के बरताव ने उनको काबू में कर लिया।

ज्ञानी जी का दिल बहलाने के लिए यह एक अच्छा कार्य बन गया। वह सारा दिन उनको सिखाने और पढ़ाने में व्यस्त रहते थे।

एक को 'पूरे नक्श' (अक्षर) लिख देते तो दूसरा कहता "ज्ञानी जी, मंगू ने मेरी कलम तोड़ दी है,"

तो वह उसे और कलम बना देते। वह कहते, "ज्ञानी जी, देखो! बंता मेरी नकल उतार रहा है।"

उधर पास ही बैठी लड़कियां आपस में गुत्थमगुत्था (लड़ाई) हो जातीं, तो ज्ञानी जी उनके मामले का फैसला शुरू कर देते।

उन कौवों चिड़ियों (लड़कों और लड़कियों) को पढ़ाने में ज्ञानी जी ने रात-दिन एक कर दिया और दो महीनों में मुश्किल से उनको बैठने की आदत डाली। शरारती बच्चे ज्ञानी जी की सफेद दाढ़ी को छाती पर हिलाता देख हंसते-हंसते दोहरे हो जाते। लड़कियां उनको थोड़ा सा गायब देख तुरंत अपने सिरों से दुपट्टे उतार देतीं।

और उनकी गेंदे (खेल की सामग्री) बना कर तख्तियों पर उछालती हुईं गेंद का खेल खेलने लगतीं और आपस में चोटियां बांध कर गिद्धा नाच शुरू कर देती थीं। लेकिन ज्ञानी जी ने अपने लिए कुछ सीमाएं तय कर रखी थीं। उनका ख्याल था कि वह कभी न कभी अपने मकसद में कामयाब होंगे।

एक दिन ज्ञानी जी और बचन सिंह किसी मामले पर चर्चा कर रहे थे। सामने एक चटाई पर बैठे लड़के और लड़कियां पढ़ रहे थे।

बातों का विषय 'सेवा' था। ज्ञानी जी कह रहे थे, "सेवा बहुत मुश्किल है, जिसे लोग सेवा समझ कर कर रहे हैं, असल में वह उसका स्वांग (नाटक) है।"

ज्ञानी जी के मुंह से निकला हर शब्द बचन सिंह के दिल पर असर कर रहा था। वह कुछ और पूछने वाला था, तभी उसकी तवज्जो एक तरफ खींच गई। उसका ध्यान दरवाजे की तरफ था। वह काफी देर से दहलीज पर खड़ी एक लड़की को देख रहा था। लड़की की उम्र बारह-चौदह साल की थी। उसने सिर पर बड़ा सा बोझ उठाया हुआ था, जिसके बोझ से उसे तकलीफ हो रही थी। बीच-बीच में उसकी गर्दन थक जाती तो दोनों बाजुओं पर बोझ उठा कर वह थकान दूर कर लेती। उसका चांद सा चेहरा, गरीबी के बादलों के पीछे से चमक रहा था।

बचन सिंह ने देखा, पढ़ने वाली लड़कियां जो दरवाजे के पास ही थीं, उसकी तरफ देख रही थीं और फिर एक-दूसरे की तरफ देख कर हंस रही थीं। कोई उसकी तरफ गन्ने का छिलका फेंक देती, कोई चटाई में से तिनके निकाल-निकाल कर उस पर फेंक रही होती और कोई बहाने से उसके पास से गुजरती हुई उस पर थूक देती।

लेकिन उस लड़की का इन बातों की तरफ ध्यान ही नहीं था। वह एक-बार फिर अपना बोझ दोनों हाथों से ऊपर उठाती और उयनके लिखने के तरीके को देख रही थी। अचानक ही उसके सिर का बोझ नीचे गिर पड़ा। लड़कियों ने जब देखा तो उन्होंने मजाक का बहाना बना लिया। उन्होंने अपनी हंसी रोकी, लेकिन मुंह बंद करते ही दो लड़कियों की हंसी निकल गई। ज्ञानी जी के कानों में भी इसकी आवाज पड़ी। लड़की बेचारी शर्मिंदा हो गई और ज्यादा न ठहर सकी।

ज्ञानी जी ने लड़कियों को डांटा तो सब तख्तियों के पीछे छिपकर चुप हो गईं। इसके बाद बचन सिंह ने ज्ञानी जी को सारी बात बताई कि किस तरह वे चिढ़ा रही थीं। बेचारी का कितनी देर से मजाक उड़ा रही थीं। ज्ञानी जी को न सिर्फ लड़कियों की हंसी पर गुस्सा आया था, उन्होंने और कुछ नहीं देखा था। वह बोले, "खबरदार! जो दोबारा शरारत की।"

बचन सिंह से बोले, "छोड़िए, ये लड़कियां बड़ी आफत हैं। इनके साथ काफी मान-मनुहार करनी पड़ती है।"

पृष्ठ 75

लेकिन इन पर जरा भी असर नहीं होता। किसी ने सच कहा है कि लड़कियां, चिड़ियां और बकरियां तीनों बहुत शरारती होती हैं। इन को तो...।

बात काट कर बचन सिंह बोला, "ज्ञानी जी! ये भी आपकी हिम्मत है कि जो ये इन चार शब्दों को पढ़ रहे हैं, (वो लड़कों की तरफ इशारा करके,) ये बदमाश पढ़ाने वाले हैं? ये तो बस बैलों के पीछे तत्ता-तत्ताही जानते हैं।"

कुछ देर और बातचीत करने के बाद बचन सिंह चला गया।

(15)

बाबा रोड़ू जब मांग तांग कर घर लौट रहा था, तो रास्ते में उसे ख्याल आया कि सुंदरी के लिए कितने दिनों से कुछ नहीं ले गया। उसने पगड़ी का पल्लू खोला। उसमें से उसे तीन पैसे और एक पैसा मिला। फिर उसने तहबंद का पल्लू टटोला और फिर थैली में रखे एक चीथड़े की गांठ खोली। एक चबूतरे पर बैठकर उसने सारे पैसे गिने। जो तीन आने के करीब हुए, वह कितनी ही देर बैठा सोचता रहा कि इन पैसों से क्या खरीदे। आखिर उसे ख्याल आया कि सुंदरी रोज बाजा (खिलौना) लेने की जिद किया करती थी। वह दुकान पर पहुंचा। ढाई आने का उसने सामान खरीदा और हलवाई से एक टके की बर्फी लेकर जल्दी ही घर पहुंचा।

घर जाकर उसने बंदरिया को दरवाजे के पास छोड़ दिया और खुद "सुंदरू-सुंदरू" आवाजें देता हुआ अंदर दाखिल हुआ। लेकिन और दिनों के विपरीत आज सुंदरी उसे कहीं दिखाई नहीं दी, जो उससे पहले ही झोपड़ी के दरवाजे के लिए खुश आमदीद कहने के लिए खड़ी होती थी।

वह जल्दी ही अंदर से बाहर आया। इधर-उधर देखा, किसी आवाजें दीं, लेकिन सुंदरी का उसे कोई पता न लगा। वह गुस्से से तिलमिला उठा। इस गुस्से में कितना प्यार, कितनी तड़प और कितनी बेसब्री शामिल थी, इसका अंदाजा लगाना मुश्किल है।

वह जल्दी-जल्दी झोपड़ी के पिछले हिस्से में गया तो उसने देखा कि सुंदरी एक चारपाई के पीछे दबी बैठी उंगली से जमीन पर कुछ लिख रही थी।

बेचारे रोड़ू की जान में जान आई। रोड़ू को देखते ही सुंदरी सब लिखना-वखना भूल गई और वह प्यार से मुस्कुराती हुई उसकी कमरे की तरफ झपट कर उसे अपनी तरफ खींचती हुई बोली,

"बाबा! आ तुझे दिखाऊं, इधर आ! जल्दी कर। इधर देख।" और उसने रोड़ू को वहीं पर बिठाया।

पृष्ठ 76

फिर उसके पीछे की तरफ हो कर दोनों हाथों की हथेलियों से उसके चेहरे को थपथपाते हुए बोली, "देख बाबा इधर।"

और खुद उसके सामने आकर इस तरह कूदने लगी जैसे उसने रुपयों का भरा हुआ घड़ा ढूंढ लिया हो।

रोड़ू को उसकी बचकानी हरकतों पर खुशी हो रही थी। उसने प्यार से उसे अपनी तरफ खींच कर उसके गाल चूम कर कहा,

"यह क्या आड़ी-तिरछी लकीरें खींच रही है?"

सुंदरी ने खुद को उससे छुड़ा कर और अक्षरों की तरफ उसकी तवज्जो दिलाते हुए कहा,

"हां! आड़ी-तिरछी लकीरें।" अक्षर पर उंगली घुमाते हुए, "यह देख बाबा - यह 'ऊड़ा' (ऊ) है और यह देख 'सस्सा' (स) और हां यह है (सोच-सोच कर) ठहर जा। मुझे नाम ही भूल गया। हां इसे कहते हैं 'पप्पा' (प)।"

रोड़ू बेचारे को जाने भला, 'ऊड़ा' क्या होता है और 'सस्सा' क्या होता है। वह हंसता हुआ बोला,

"अरे वाह रे मेरी पढ़ाकू! और बेटा तुझे क्या मालूम कैसे लिखा जाता है?"

"हां बाबा! ऐसे ही लिखती थीं।"

"कौन?"

"वे लड़कियां और कौन।"

"कौन लड़कियां?"

"वे जो गुरुद्वारे में पढ़ती हैं।"

"और बेटा तुम्हें कैसे मालूम कि वे ऐसे लिखती हैं?"

"मुझे पता है। मैं तो रोज देखती हूं। आज भी देखा था। जब कूड़े का ढेर फेंकने गई थी, तो वे लिख रही थीं।"

"लिखती रहें तुम्हें क्या ?"

बच्चों वाली जिद कर और रोना सा मुंह बना कर वह मचलती हुई बोली, "ना बाबा! मैं भी लिखा करूंगी।"

हंसते-हंसते और कुछ उदास ढंग से रोड़ू उसकी छड़ी पकड़ कर बोला, "अरे आई बड़ी पढ़ाकू! लिखना-पढ़ना क्या हमारा काम है?"

सुंदरी के दिल पर मायूसी छा गई और सवालिया नजरों से उसकी तरफ देखती हुई बोली,

"तो फिर और किसका काम है?"

"बेटा, वे तो हैं सरदारों, महाजनों की लड़कियां और हम ठहरे गरीब मांगने वाले। हमें क्या लेना देना।"

पृष्ठ 77

"मांगने वाले नहीं पढ़ा करते!" यह सुन कर सुंदरी के चेहरे पर और भी मायूसी छा गई और वह सोचने लगी,

"मैंने तो सचमुच ही बहुत बुरा काम किया है।"

लेकिन बच्चों की सी जिद करके फिर बोली,

"लेकिन बच्चों की सी जिद करके फिर बोली, ... और बाबा... हम नहीं... हम नहीं पढ़ सकते?"

"बेटा, ताकत वाले तुमने सुना नहीं, सात बीसियों का सौ गिनते हैं। वे तो कहते हैं कि अगर नीची जातें पढ़ने लग गईं तो उनका काम धंधा कौन करेगा?"

लड़की का दिल फिर भी न माना और वह जिद करती हुई बोली, "नहीं बाबा! मैं तो लिखा करूंगी। अंदर बैठ कर ही लिख लिया करूंगी। उन्हें क्या पता चलेगा? दिन को जब कूड़ा फेंकने जाया करूंगी तो वहां लड़कियों के शब्द देख आया करूंगी और रात को..."

पीछे से ही रोड़ू बोल पड़ा, "चल छोड़! फजूल सी बातें न कर।" और उसने बाजा और मिठाई का दोना उसे पकड़ा दिया।

वही बाजा, जिसकी मांग वह लगातार कई हफ़्तों से कर रही थी, उसे मिल गया था। रोड़ू का ख्याल था कि सुंदरी बाजा पाकर सीधी छलांगें लगाने लगेगी, लेकिन सुंदरी ने लापरवाही से दोनों चीजें पकड़ीं और वैसी की वैसी अंदर जाकर एक कोने में रख आईं।

(16)

बचन सिंह रोज ही बिना नागा ज्ञानी जी के पास जा बैठता और हर रोज अलग-अलग विषयों पर दोनों में बहस होती रहती। बचन सिंह का उसके साथ बहस करना उसे बड़ी खुशी देता था। ज्ञानी जी की नेक संगति में उसकी यादें पलटने लगीं और उसकी जिंदगी का एक नया रुख हो गया। हर रोज देखता कि वह लड़की जंगली झाड़ियों से काटी गई शाखाओं से बनाई एक टूटी हुई टोकरी हाथ में लटकाए और कभी सिर पर उठाए, कितनी देर आंगन के बाहर दरवाजे के साथ खड़ी लड़कियों की लिखावट देखती रहती थी।

एक दिन दोपहर के वक्त जब वह गुरुद्वारे आया तो देखा, ज्ञानी जी लड़कियों को पढ़ने की ताकीद (परामर्श) करने के लिए तैयार खड़े थे।

बचन सिंह ने आते ही पूछा, "आज किधर के लिए तैयार हुए हैं?"

पृष्ठ 78

"मैं आपका ही इंतजार कर रहा था, कपड़े मैले हो गए थे। मैंने कहा, कुएं पर जाकर धो लाऊं। मेरी इच्छा थी कि आप भी साथ ही चलते तो अच्छा होता, सैर-सपाटा हो जाएगा।"

"चलिए फिर,"

कहकर बचन सिंह साथ हो लिया। दोनों जब दरवाजे से बाहर निकले तो वही लड़की कूड़े वाली टोकरी एक तरफ रख कर दीवार की तरफ मुंह किए, उंगली से जमीन पर कुछ लिख रही थी। उसके

पास कागज का एक फटा हुआ टुकड़ा था, जिसे देख कर वह लिखती जाती थी। उसके मोतियों जैसे खूबसूरत शब्द, जो बिल्कुल छपे खाने से मालूम होते थे, देख कर दोनों हैरान रह गए। कागज बच्चों की पहली किताब का पहला पन्ना था, इस पर मोटे शब्द 'ओड़ा ऐड़ा ' (पंजाबी की वर्णमाला) छपी थी। कागज और भी फटा हुआ था। लड़की ने उसके किनारे को आटे की लेई से चिपका लिया था और इसे इतनी नजाकत (कोमलता) से पकड़ कर रखती थी, जैसे कोई शाही हुक्मनामा हो।

दोनों कुछ मिनट खड़े उसकी लिखावट को देख कर एक-दूसरे की तरफ देख कर हैरानी जाहिर करते रहे। जब लड़की ने सबसे आखिरी शब्द लिखने के लिए कागज की तरफ देखा, तो उसकी नजर ऊपर खड़े दोनों आदमियों पर पड़ी। वह इतनी डरी, इस कदर सहमी कि अपनी टोकरी वहीं छोड़ कर उठ भागी। उसकी तेज बुद्धि और इतनी खूबसूरत लिखावट देख कर दोनों का मन खुश हो गया। लड़की अभी चार-पांच कदम ही गई होगी कि ज्ञानी जी ने आवाज दी,

"ऐ लड़की!"

आवाज सुनकर पहले तो लड़की का दिल चाहा कि भागती ही जाए, लेकिन टांगों ने उसका साथ न दिया और वह वहीं की वहीं खड़ी रह गई।

इतने में ज्ञानी जी ने दूसरी आवाज दी, "बेटा डर नहीं, मैं तुझे मारने नहीं आया। नजदीक आ, मेरी बात सुन।"

लड़की की जान में जान आई और अपराधी की तरह धीरे-धीरे चलती हुई उनके सामने आकर खड़ी हो गई। ज्ञानी जी ने प्यार से पूछा,

"बेटी! ये अक्षर तुमने कहाँ से सीखे हैं?"

लड़की फिर कांप उठी। वह समझ गई कि चोरी का इकरार (स्वीकार) कराने के लिए ही यह ढंग इस्तेमाल किया जा रहा है। ज्ञानी जी की बात का उसे कोई जवाब न सूझा। ज्ञानी जी ने उसके सिर पर हाथ फेरते हुए उसे थोड़ा और अपने करीब लाकर कहा,

"बेटी, तुम डरो नहीं। हम तुम्हें कुछ नहीं कहेंगे। तुम्हारी खूबसूरत लिखावट देख कर मैं बहुत खुश हुआ हूं। तुमने लिखना कहाँ से सीखा है?"

लड़की के दिल को कुछ ढांढस बंधा, अब उसमें बोलने की हिम्मत भी आ गई। वह धीमी आवाज में बोली, "मैं खुद ही लिखा करती हूं।"

बचन सिंह अब तक हैरानी से यह सब कुछ देख रहा था। लड़की की बात सुनकर खुद-ब-खुद बोल उठा,

"खुद लिखते हैं? किससे सीखे हैं?"

लड़की के जवाब ने दोनों को हद से ज्यादा खुशी दी। ज्ञानी जी ने फिर पूछा, "तुम्हें इन अक्षरों के नाम भी आते हैं?"

"हां जी।"

"सुनाओ भला।"

लड़की ने रवानी से पन्ने के सारे अक्षर पढ़ दिए और फिर बोली, "जी मुझे बारहखड़ी भी आती है।"

ज्ञानी जी ने बचन सिंह की तरफ देख कर कहा, "बचन सिंह जी, लिखने का तरीका तो भला इसने कागज के पन्ने से देख कर सीख लिया होगा, लेकिन पढ़ना..."

लड़की बोली, "जी लड़के रोज शाम को बारहखड़ी पढ़ा करते हैं, मैं सुनती रहती हूं।"

ज्ञानी जी ने उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा, "शाबाश! बड़ी समझदार हो। मैं तुझे कायदा और तख्ती ला देता हूं। तुम्हारा नाम क्या है बेटा?"

"जी, सुंदरी।"

बचन सिंह बोला, "बाबा जी! यह तो शायद अछूतों की लड़की है। आप इस तरह इसे झिझक छू रहे हैं।"

"मुझे तो इस बात का गम नहीं है, लेकिन गांव के लोग बहुत बुरे हैं।"

ज्ञानी जी ने लापरवाही से कहा, "अगर इस तरह की होनहार बच्ची को छूने और उसे तालीम देने से रोके, तो यह उनकी नाइंसाफी है। मुझे ऐसे लोगों की परवाह नहीं।"

बचन सिंह और कुछ न बोला। ज्ञानी जी ने अंदर जाकर कायदा, तख्ती और कलम-दवात लाकर लड़की के हवाले करते हुए कहा, "ले बेटी! रोज बिना नागा पढ़ा कर। अगर तेरा दिल करे तो यहां आकर पढ़ जाया कर।"

लड़की ने ये चीजें लीं और ये प्यार भरे जुमले सुने। ऐसे जैसे किसी अंधे को आंखें मिल जाएं। इसके बाद वह अपने रास्ते पर हो ली। सुंदरी दौड़ती हुई घर पहुँची।

पृष्ठ 81

(17)

"बाबा बाबा! देखो, मैंने क्या लिया है?"

इतना कह कर खुशी में सुंदरी न समाती, सुंदरी ने एक-एक करके रोड़ू को सब चीजें दिखाईं और फिर बोली, "तुम तो कहते थे कि वह मारेंगे। न पढ़ा कर। वह तो उल्टा कहते थे, 'तू तो पढ़ा कर, हम खुद पढ़ाया करेंगे।'

यह देख कैसी खूबसूरत तख्ती और कायदा दिया है। साथ में दो कलमें और बाबा ज्ञानी ने भी दी है। लाओ मैं रखूं और दवात में स्याही डालूं। देखो बाबा! हम तख्ती पर लिखेंगे।"

लड़की की चीजें देख कर रोड़ू को हैरानी हुई। ये चीजें इसे कौन देने वाला है। उसे शक हुआ कि कहीं किसी की उठा न लाई हो।

यह सोच कर उसने पूछा, "यह किसकी उठाई है? जा बेटा, जिसकी लाई है, जाकर दे आ, वरना वह और मारेगा।"

"नहीं बाबा! देवी की कसम, मुझे तो ज्ञानी जी ने खुद दी हैं।" और वह रोड़ू का हाथ पकड़ कर खींचने लगी।

सुंदरी के चेहरे से झलकते इरादे और बेखौफी को देख कर रोड़ू को उसकी बात का यकीन हो गया और फिर जब उसने सुंदरी ने सारा हाल तफ़सील से सुनाया तो उसे कोई शक बाकी न रहा।

उसी दिन से सुंदरी को पढ़ने-लिखने की सहूलियत हो गई। काम-धंधे से उसे जितना वक्त मिलता, वह अपनी पढ़ाई में खर्च करने लगी, यहाँ तक कि रात को सोते वक्त भी उसका ध्यान पढ़ाई में ही रहता। घण्टे-दो-घण्टे के लिए वह हर रोज ज्ञानी जी से सबक लेने भी चली जाती थी। ज्ञानी जी बेशक दिल से उसे और लड़कियों के साथ बिठाना चाहते थे, लेकिन इस रास्ते में कई रुकावटें आने के ख्याल से उन्होंने दरवाजे के बाहर ही एक टाट बिछा रखा था, जहाँ बैठकर वह अकेली ही पढ़ती रहती थी। यह

भी लड़की के लिए अच्छा हुआ क्योंकि अगर दूसरी लड़कियों के साथ बैठती तो उनकी शरारतों की वजह से उसे रुपये में से एक पैसा भी सबक न मिलता।

लेकिन उसके अकेले पढ़ने में भी रुकावट शुरू हो गई। लड़कियां लड़के अंदर आते-जाते वक्त उसके साथ कोई न कोई शरारत करती रहती थीं। कोई लड़की दूसरी को धक्का देकर उस पर फेंक देती और बदले में अपनी उंगलियां फंसा कर कहती, "अड़ंगा पाडांगा अछूत, ।" अछूत को छूना न--- और गिरने वाली लड़की जिद के साथ दूसरों को छूने के लिए दौड़ती। कोई चुपके से उसकी स्याही की दवात उलट जाती और कोई कलम का छिलका उतार कर दोनों उंगलियों के बीच कमान सि बना कर र उसके चेहरे की तरफ फेंक देती।

पृष्ठ 82

यह सिलसिला बंद होने में इस लिए नहीं आता था कि सुंदरी कभी किसी की शिकायत नहीं करती थी।

सुंदरी इन रुकावटों की परवाह किए बिना अपने काम में लगी रहती थी, लेकिन उसके रास्ते में एक और रुकावट आ गई। और वह यह कि गाँव के चौधरी और चौधराइनों ने भी एक दूसरे से मुँह जोड़कर इसका चर्चा शुरू कर दिया। यह सारी बात पाला सिंह की पार्टी की उठाई हुई थी। तरह-तरह से ज्ञानी जी को धौंस और धमकी भी दी जाती, लेकिन ज्ञानी जी ने सुंदरी को पढ़ाना न छोड़ा।

आहिस्ता-आहिस्ता बात ज़्यादा बढ़ गई। यहाँ तक कि एक दिन जब चंद सिंह की माँ की मौत के मौके पर लोग उसकी हवेली में इकट्ठे होकर बैठे थे, तो यही बात चल पड़ी।

पाला सिंह के यह कहने पर कि गाँव के कुएँ में डॉक्टर दवा डाल गए हैं, सुंदर सिंह बोला, "दवा तो हमारे ही फ़ायदे के लिए डालते हैं, उस दिन जीवा सिंह का लड़का कह रहा था कि दवा से बुख़ार के कीड़े, जो पानी में होते हैं, मर जाते हैं।"

नत्था सिंह पगड़ी को आँखों से ऊपर उठा कर बोला, "मैं कहता हूँ दवा से तो उल्टी बीमारियाँ शुरू होती हैं। पता है पिछले साल ताऊन (प्लेग) क्यों शुरू हुआ था? अंग्रेज़ ने गोलियाँ डलवाई थीं। चूहे वे गोलियाँ खाकर मर गए और उनकी बदबू से ताऊन फैल गया और घर के घर उजड़ गए।"

सुंदर सिंह बोला, " हमें पढ़े-लिखों की इन बातों का क्या पता। जैसा कोई कहता है मान लेते हैं। यह बातें तो पढ़ाकू जानें।"

इतने में बाबा भान सिंह बोला, "और देख लो तुम्हारे पढ़े-लिखे। सच्ची बात कहूँ तो सबको बुरी ही लगेगी। चंदरी ज़ुबान से रहा नहीं जाता—जीवा सिंह ने लड़के को क्या पढ़ा दिया है कि सारे गाँव की अक़्ल को ताला लगा दिया है। यह रंगरेज़ियाँ (अंग्रेज़ीपन) क्या पढ़ा आया, भंगी-चमारों को हमारे साथ बिठाने का ठेका ही ले आया है। रात को दरिया शाह बता रहा था कि बचन के कहने पर अमृतसर स्कूल के भाई ने किसी क़लंदर (ग़रीब/मदारी) की लड़की को भी पढ़ाना शुरू कर दिया है।"

एक और बोला, "भई बात तो ताऊ ने लाख रुपये की है। मैं तो खुद कई दिनों से उसे गुरुद्वारे के सामने बैठी देखता हूँ। कई बार जी में आया कि जाकर जीवा सिंह को समझाऊँ और इस ज्ञानी से भी पूछूँ, लेकिन फिर सोचा कौन राह चलते लड़ाइयाँ मोल ले, और जीवा सिंह तो पहले ही बीमारी की वजह से चारपाई से लगा हुआ है। उससे क्या कहें? लेकिन इस तरह गुज़ारा भी नहीं हो सकता। आज गुरुद्वारे जाना शुरू हुआ है, तो कल कुएँ पर भी जा चढ़ेगी।"

दूसरा बोला, "ठीक कहता है यह! यह नीच लोग टलने वाले नहीं हैं। याद है रवानी गाँव में कैसा फसाद (झगड़ा) हुआ था, बिरादरी (खालसा) वालों ने दो दिन जलसा किया कि अछूतों की शुद्धि करेंगे।"

पृष्ठ 83

तीसरे ने कहा, "भाइयों! मैं सच्ची गाल मुँह पर कहता हूँ। अब भी गिरे हुए बेरों का कुछ नहीं बिगड़ा। अगर इस ज्ञानी को किसी ने मना न किया तो रवानी वाला झगड़ा यहाँ भी होकर रहेगा। वह जो कहते हैं—एक और एक ग्यारह। पहले अकेला बचन सिंह ही कौन सा कम था कि वैसा ही साथी ज्ञानी भी आकर मिल गया है।"

एक और बोला, "इसीलिए तो कहते हैं कि अच्छी सोहबत (संगति) आदमी को बना देती है और बुरी बिगाड़ देती है। भाई जी कैसा सीधा आदमी था, कभी अलिफ़ से बे नहीं बोलता था। वक़्त-बेवक़्त सात काम सँवार देता था और था भी बड़ा शरीफ़, जो जैसा कहे वैसा ही मान लेता था।"

दूसरे ने कहा, "तब ही तो बचन आते ही उसका दुश्मन हो गया। उस बेचारे को निकालने के लिए बहाने ढूँढने लगा। कभी कहता लड़के-लड़कियाँ पढ़ाया कर, कभी ग्रंथ साहब लगाया कर, कभी यह कर, कभी वह कर। लेकिन वह भाई कब इस की बातों में आने वाला था, उसने..."

तीसरा बोला, "और हाँ, इसी बात से चिढ़कर उस बेचारे को क़ैद करवा दिया, लेकिन भाई हमें क्या ख़बर थी इन अंदर की बातों की। वह जो (बचन सिंह) रोज़ आकर कहता था कि लड़कों को रोज़ पढ़ने भेजो, हम भी आ गए उसकी बातों में।"

चौथे ने कहा, "और बताइए ना, इतनी देर हो गई, पढ़ाया क्या है? बल्कि बच्चे जो घर का छोटा-मोटा काम करते थे, वह भी गया। हम तो भाई कल से लड़की को स्कूल नहीं भेजेंगे। वह जो कहते हैं—'भाड़ में जाए ऐसा सोना जिससे टूटें कान ', क्या लेना है हमें ऐसी पढ़ाइयों से पढ़ाकर।"

पाँचवें ने राय ज़ाहिर की, "बताओ अगर तुम नहीं भेजोगे तो फिर और भी कोई नहीं भेजेगा। मैं तो जाकर तख्तियाँ फेंकूँगा कुएँ में। लड़की अच्छी-भली सारे काम करती थी, जिस दिन से यह पढ़ने का झगड़ा ले बैठी है, हाथ भी नहीं लगाती काम को। बस मकई की रोटी का सा मोटा कायदा और एक कोने में जा बैठी।"

छठा बोला, "भाइयों! बात करने से दूर निकल जाती है। हम तो मुँह खोलकर कुछ नहीं कहते लेकिन लोगों से क्या छुपा है, पाला सिंह को और किसने..."

एक और बोला, "रहने दो जवान! इन बातों को क्यों खोलते हो, उसकी क़ैद भी थोड़ी ही बाकी रह गई है। अव्वल तो शायद अपील में ही बरी हो जाए। वह खुद आकर सच-झूठ का फ़ैसला करेगा। हमें क्या पड़ी है।"

इस तरह की बातें और कानाफूसी हो रही थीं लेकिन किसी नतीजे पर कोई न पहुँच सका क्योंकि गाँव का सरताज पाला सिंह और उसके साथी जेल में थे।

पृष्ठ 84

(18)

पूरे डेढ़ वर्ष बीमार रहने के बाद जीवा सिंह ने अपनी ज़िंदगी का सफ़र ख़त्म कर के इस दुनिया से कूच कर गया। घर का सारा बोझ अब बचन सिंह के सिर पर था। बचन सिंह की माँ अब सिर्फ़ उसे देख कर ज़िंदा थी क्योंकि उसका कोई और बेटा-बेटी नहीं था।

दूसरी तरफ पाला सिंह और उसके साथी भी क़ैद काट कर एक-एक कर के वापस आ गए और साथ ही भाई दसूंधा सिंह भी। वे जेल में ही समझ चुके थे कि बचन सिंह ने गुरुद्वारे में कोई और ग्रंथी ला बिठाया है। इसलिए उन्होंने अपनी इज़्ज़त इसी में समझी कि गाँव में पाँव न रखें और उस ग्रंथी का पूरा बिस्तर-बोरिया पहले उठवाएं। बेशक भाई दसूंधा सिंह के बयान ने ही उन्हें क़ैद करवाया था लेकिन वे समझते थे कि ज्ञानी जी ने यह काम महज़ बे-अक़्ली की वजह से ही किया है। इसी वजह से उन्होंने ज्ञानी जी का क़सूर माफ़ कर दिया था और वे यह भी जानते थे कि ज्ञानी जी कितने काम आने वाली चीज़ हैं। इसलिए उन्होंने ज्ञानी जी को दोबारा बुला लिया।

जिस दिन पाला सिंह जेल से छूट कर आया, उस दिन चंद घरों को छोड़ कर बाकी सारे गाँव ने बड़ी गर्मजोशी से उसका स्वागत किया। ख़ासकर ज्ञानी जी पर इन लोगों का एतबार और ज्ञानी जी की इज़्ज़त गाँव वालों की नज़रों में पहले से दस गुना बढ़ गई थी। सबके मुँह पर यही बात थी, "देख लिया ना, देवता स्वरूप ज्ञानी जी को बे-गुनाह फँसा कर क्या फल मिला? बाप मर गया। ख़ुदा के क़हर से डरना चाहिए। लोग बेवजह तो नहीं कहते कि ग़रीब की आह बहुत बुरी होती है।"

ज्ञानी जी अब लोगों को फूटी आँख भी नहीं भाते थे। यहाँ तक कि जो घर थोड़े बहुत उनके हक़ में थे, वे भी ख़िलाफ़ हो गए और कई लोगों ने अपने लड़कों को गुरुद्वारे के स्कूल से उठवा लिया।

ज्ञानी जी भी अब उदास हो गए। उन्होंने इस झगड़े में से निकल जाना ही मुनासिब समझा और आख़िर एक दिन वे चले गए। बचन सिंह के कहने पर भी न रुके। उन्हें यक़ीन हो चुका था कि मामला लड़ाई-फ़साद तक पहुँचेगा और न जाने इसका नतीजा गाँव के लिए कितना ख़तरनाक साबित हो। पाला सिंह के साथियों का ख़याल था कि ज्ञानी जी को हटाने के लिए शायद वे दो-दो हाथ करने पड़ेंगे।

पृष्ठ 85

लेकिन ऐसी नौबत न आई और भाई दसूंधा सिंह आराम से ही गुरुद्वारे में आ बैठे। उससे भी ज़्यादा एक और बात उनकी बुरी लगी और वह यह कि ज्ञानी जी ने आकर गुरुद्वारे की रौनक़ इतनी बढ़ा दी थी। उन्होंने सोचा कि हम इससे दुगुनी रौनक़ दिखा कर उसकी कारगुज़ारी को मात दे दें। इससे उनका मतलब यह भी था कि गाँव के जो थोड़े बहुत लोग ज्ञानी जी के हक़ में थे, उन्हें कोई शिकायत न रहे।

श्री गुरु नानक देव जी का गुरुपर्व नज़दीक ही था। उन्होंने इस मौक़े के लिए रागी जत्था बुलाने का भी इंतज़ाम कर लिया ताकि गुरुद्वारे में अच्छी रौनक़ हो जाए।

भाई जी के आते ही यह बात मशहूर कर दी गई कि बचन सिंह ने उन्हें कह-सुन कर और हाकिमों को रिश्वत दे कर अदालत में उसका बयान उल्टा पलटा दिया था, जिसके नतीजे में सबको क़ैद भुगतनी पड़ी। इस से जहाँ भाई जी के परस्तारों (प्रशंसकों) का एतबार बढ़ गया, वहीं लोग बचन सिंह को

लाल-पीली आँखें दिखाने लगे। बल्कि अंदर ही अंदर कानाफूसी भी होने लगी कि जितनी जल्दी हो सके, बचन सिंह को बिरादरी से अलग किया जाए क्योंकि उसका क़लंदर (गरीब) की लड़की से मेल-जोल दिन-ब-दिन बढ़ रहा है। वह रोज़ उसे पढ़ाने के बहाने रोड़ू की झोपड़ी में जाता है और पहर-पहर वहाँ वक़्त गुज़ारता है। इस सिलसिले में किसी हद तक यह फ़ैसला हुआ कि गुरुपर्व वाले दिन जब सारी बिरादरी इकट्ठी होगी, तो इस बात पर ग़ौर करने के बाद कोई आख़िरी फ़ैसला किया जाएगा।

इधर सुंदरी भी अब पहले वाली सुंदरी नहीं थी। अन-थक पढ़ाई और ज्ञानी जी और बचन सिंह की सोहबत (संगति) ने उसकी अक़्ल को और भी चमका दिया था और अब वह सिख धरम के नियम कानून , अदब और उसकी तारीख़ से अच्छी तरह वाक़िफ़ हो गई थी।

बचन सिंह की माँ अगर पुराने ख़यालों की औरत थी और उस की पड़ोसिनें नमक-मिर्च लगा कर बचन सिंह के बारे में तरह-तरह की बातें सुनाकर उसे भड़काना चाहती थीं। लेकिन बचन सिंह और ज्ञानी जी के समझाने पर उस पर इन बातों का कोई असर नहीं होता था।

इधर गुरुपर्व नज़दीक आ गया और उधर सुंदरी के दिल में ज़बरदस्त ख़्वाहिश थी, उस स्वर्ग के नज़ारे को देखने की। ज्ञानी जी से गुरुघर के कारनामे और शहीदों की कहानियाँ सुन-सुन कर उसके दिल में गुरुघर के लिए प्रेम का समंदर ठाठें मार रहा था। लेकिन जब वह सोचती की वो उस वक़्त का नज़ारा नहीं देख सकेगी तो उसे दिल को ठेस सी लगती। सबसे ज़्यादा डर उसे दिल में रोड़ू ने बैठा दिया था। लेकिन फिर भी उसकी ख़्वाहिश वैसी की वैसी बनी रही कि किसी तरह गुरुपर्व वाले दिन...

पृष्ठ 86

सतगुरु के दरबार में माथा टेकने का मौका मिल जाए—चोरी से या ऐलानिया!

गुरुपर्व में एक दिन बाकी था। गुरुद्वारे में धूम-धाम से तैयारियाँ हो रही थीं। सुंदरी ने सुना था कि कल सुबह तड़के रागियों का कीर्तन होगा। उसे सारी रात नींद न आई। सचमुच बंदरिया की सोहबत की वजह से उसमें बंदरिया जैसी आदतें भी आ गई थीं। वह कभी सोचती—तड़के तड़के मुँह अंधेरे ही जब गुरुद्वारे का दरवाज़ा खुलेगा, लोगों की आँख बचाकर अंदर चली जाऊँगी और आँगन में जो बेरी का पेड़ है, उसकी किसी टहनी पर चढ़कर बैठ जाऊँगी। कभी ख्याल करती—नहीं, इस तरह तो कोई देख लेगा और फिर सतगुरु के दरबार में ऊँची जगह पर नहीं बैठना चाहिए। कोई ऐसा तरीका होना चाहिए, जिससे कोई देखे भी नहीं और मैं नज़ारा भी देख लूँ!

वह सारी रात इसी तरह सोचती रही। बेचारी, और अपनी ही सोचों में उसकी आँख लग गई। जब उसकी नींद खुली तो बाहर उसने सफ़ेद रोशनी देखी। वह दिल ही दिल में बड़ी शर्मिंदगी महसूस करने लगी कि ऐसे बे-ख़बर क्यों सोई कि दिन ही चढ़ आया।

अब उसके लिए वहाँ एक पल भी रुकना मुश्किल हो गया। उसने देखा कि बाबा रोड़ू तो अभी तक खराटे भर रहा था। वह दबे पाँव झोपड़ी से बाहर निकली और सीधे गुरुद्वारे की तरफ हो ली। वह सोच रही थी, दूर से ही बाजे और तबलों की आवाज़ के साथ शब्दों की गूँज उसके कानों में पड़ेगी। लेकिन उसका यह ख्याल गलत निकला। गुरुद्वारा का दरवाज़ा अभी तक बंद था। उसे जब यह अंदाज़ा हुआ कि अभी दिन नहीं चढ़ा है और चाँद की चाँदनी की वजह से उसे धोखा हुआ है तो वह बड़ी खुश हुई।

अब वह किसी तरह अंदर दाखिल होने का ढंग सोचने लगी। अचानक ही उसे ख्याल आया कि गुरुद्वारे के जिस कमरे में गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश होता है, उसके साथ एक और खिड़की भी है, जो अक्सर खुली रहती है और उस का दरवाज़ा गुरु ग्रंथ साहिब वाले कमरे की तरफ खुलता है। कमरे का हुलिया उसने कई बार बाहर से या आँगन में से देख रखा था।

अब उसके लिए सिर्फ आँगन वाले दरवाज़े के रास्ते अंदर जाने का काम बाकी था। चाँद की चाँदनी उसके रास्ते में रुकावट डाल रही थी। वह सोचती हुई गुरुद्वारे के पिछली तरफ जा निकली। जहाँ उसने एक खुरली (जानवरों के चारा खाने की जगह) देखी, जो अपेक्षाकृत ऊँची बनी हुई थी। वह फ़ौरन छलांग लगा खिड़की पर चढ़ गई और एक सुराख में पाँव का पंजा फँसा कर छत पर जा चढ़ी। कच्चे कमरे की छत कितनी ऊँची हो सकती थी और वह भी बंदरिया की तरह चढ़ना था।

पृष्ठ 87

छत पर पहुँच कर उसने आँगन वाली बेरी की एक बड़ी सी टहनी पकड़ी और उसके साथ लटक नीचे आँगन में छलांग लगा दी और फिर फ़ौरन ही कमरे में दाखिल होकर उस के एक कोने में छिप कर बैठ गई। गुरु ग्रंथ साहिब वाला कमरा खुला है या नहीं, यह देखने के लिए जब उसने दरवाज़े को थोड़ा सा धक्का दिया तो वह खुल गया। उसे पता चला कि दरवाज़ा गुरु ग्रंथ साहिब वाले कमरे में ही खुलता है। अंदर भूसे का ढेर था और दरवाज़ा ज़ोर से खुल गया था। इसलिए बहुत सा भूसा गुरु ग्रंथ साहिब वाले कमरे में चला गया।

सुंदरी को बड़ी फ़िक्र हुई लेकिन उसने हिम्मत न हारी क्योंकि उसने देखा कि दरी पर तीन-चार आदमी सोए थे और उनमें से अभी कोई जागा नहीं था, इसके अलावा अंदर कुछ अंधेरा ही था। सिर्फ एक सुराख में से थोड़ी सी चाँदनी अंदर आ रही थी। वह फिर बाहर निकली और टाट का एक टुकड़ा उठा लाई। उस पर थोड़ा सा भूसा डाल डाल कर वह पीछे फेंकने लगी।

तक़रीबन एक घंटे की मुसलसल मेहनत के बाद उसने अपने खड़े होने के लिए जगह बना ली। और उसकी पिछली तरफ़ उसके सिर तक भूसे का ढेर खड़ा हो गया। इसके बाद उसने दूसरी तरफ़ का भूसा उठाया और अच्छी तरह साफ़ कर ली और खुद उसी तरह दरवाज़ा बंद करने के बाद उसके पीछे छिप कर बैठ गई। तभी उसे नींद आनी शुरू हो गई।

इस वक़्त बचन सिंह की सुनाई हुई गुरु नानक देव जी की ज़िंदगी की कहानियाँ उसे याद आने लगीं और आहिस्ता-आहिस्ता सारे नज़ारे उसकी आँखों के आगे यों घूमने लगे, जैसे उन्हें सचमुच में देख रही हो। आज के दिन उसी वक़्त गुरु नानक देव ने अवतार लिया था। इस तसव्वुर का असली नज़ारा उस पर इस तरह ज़ाहिर हुआ जैसे वह सचमुच सब कुछ अपनी आँखों से देख रही है। राय भोए की तलवंडी में धूम-धाम है। कालू पटवारी के घर डर बहुत रोशनी की हुई है और सारे जहाँ की बहार ने खिल कर उस जगह को महका दिया है। माता और पिता की गोद में अंधेरे दिलों को जगमगाने वाला और ठंडक पैदा करने वाला चाँद चमक रहा है। वह जिधर एक नज़र भर कर देखता है, वहाँ एक अनूठी रोशनी पैदा होती है और वह जगह हरी-भरी हो जाती है।

फिर उसने नन्हे प्रीतम को बच्चों के साथ आँख-मिचौली खेलते देखा। फिर जंगलों के घने साए में सोते और साँप को साया करते देखा। तसव्वुर ही तसव्वुर में वह बेबस हो कर चरणों में गिरी और आँसुओं...

पृष्ठ 88

...से दाता के चरण धोते हुए अर्ज़ करने लगी, "हे प्रीतम! मेरी तरफ भी अमृत भरी नज़र कर और मुझे बता, मुझ बदकिस्मत से वो कौन सी तक़सीर हो गई है कि मैं तेरे चरणों में सिर रखने का भी हक़ नहीं रखती। आह मेरे मालिक! मैं कितनी आँखों से खुद को छुपाकर यहाँ पहुँची हूँ। मेरे दिल के मालिक! तू अपने हमजोलियों के साथ आँख-मिचौली बेशक खेल, लेकिन मुझे कमज़ोर में इतनी ताक़त नहीं कि तुझे ढूँढ सकूँ। मेरे साथ आँख-मिचौली न खेला कर। मुझे अपने पास आने से न रोक।"

फिर उसने सुना—आसमान से एक आवाज़ आई—ऐसे जैसे नगाड़े पर चोट लगती है और उसके साथ ही किसी मीठे साज़ से रसीली आवाज़ निकली जो हर तरफ गूँज गई। इस गूँज के पैदा होते ही आसान का सारा माहौल जैसे किसी अनोखी ख़ुशबू से महक उठा। फिर उसने देखा—वही प्रीतम आसमान से उतरता आ रहा है और अब उसके साथ दो मूर्तियाँ और भी हैं। एक दिलकश घाटी, जिस के आसपास जंगली फूलों से लदे हुए बूटे (पौधे) झूम रहे थे, प्रीतम एक आसन पर बैठ गए और दाएं-बाएं भी साथ ही थे। सपने की दुनिया में ही सुंदरी ने फिर दौड़कर अपने प्यारे के चरण पकड़े और आँसुओं से उसके

चरण धोते हुए अर्ज़ किया, "हे मेरे दिल के वाली, अब न बिछड़ना। मुझे अपने चरणों के पास आने से न रोकना, रोकने वालों को भी रोक देना... हे दाता, मेरा दिल न तोड़ना।"

उसे यूँ मालूम हुआ जैसे आसमान का वाली उसके सिर पर हाथ फेरता हुआ कह रहा है, "सुंदरी! निहाल, निहाल , तुझे खुश कर दिया, तुझे कोई नहीं रोक सकता, तू किसी के रोकने पर भी मेरे पास आने से नहीं रुक सकती। उठ और सुन।"

इसके बाद सुंदरी ने चरणों से सिर उठाया। उसके अंदर-बाहर उसके सारे वजूद पर एक अजीब सा नशा तारी था। रोम-रोम में किसी अनोखे मज़े के झरने से बह रहे थे और उसके कानों में रूहानी मिठास से भरे हुए लफ़्ज़ गूँज रहे थे। जैसे संसार के राग-रागिनियों ने किसी अज़ीम संगीत की शक्ल इख्तियार कर ली हो। ये अल्फ़ाज़ उसके प्रीतम के दाहिनी तरफ बैठा महात्मा रहा था, उसकी वाद्य यंत्र में से दिल को खींच लेने वाली निकल रही थी:

"हरि अमृत भिन्ने लोइणा मनु प्रेम रतन्ना राम राजे ।

मनु राम कसवटी लाइआ कंचनु सोविन्ना ॥

गुर मुख रंग चलूलिया मेरा मनु तनो भिन्ना।

जनु नानकु मुसकि झकोलिया सभु जनमु धनु धन्ना ॥

(हे प्रभु-राजन्, मेरी आँखें प्रभु के अमृत से भीगी हुई हैं और मेरा मन उनके प्रेम में रंगा हुआ है।

प्रभु ने मेरे मन को अपनी कसौटी पर कसा और उसे सौ प्रतिशत सोना पाया।

गुरुमुख के रूप में, मैं रंग में रंगा हुआ हूँ, और मेरा मन और शरीर उनके प्रेम से सराबोर हैं।

सेवक नानक, उस (प्रभु) की सुगंध से सराबोर हैं; उस (सेवक) का पूरा जीवन धन्य है।।)

पृष्ठ 89

सुंदरी की आँखें खुल गईं और उसने अपने आप को भूसे वाले कमरे में पाया। दरवाज़े की झिरी में से उसने देखा—रागी सिखों ने असा दी वार का कीर्तन शुरू कर दिया था। पहला छक्का (छंद) खत्म करने के बाद 'वार' श्लोकों नाल शुरू किए जा रहे थे।

वह वहीं चौकड़ी मार बैठ गई और कीर्तन का अमृत रस पीने लगी। उसने आज पहली बार श्री गुरु ग्रंथ साहिब के दर्शन किए थे। लेकिन आगे बढ़कर माथा कैसे टेके? इसी ख्वाहिश ने उसे इस तरह बेचैन कर रखा था कि वह नीचे होकर बैठ नहीं पा रही थी।

जैसे-जैसे कीर्तन होता गया, सुंदरी के दिल में जोश और उमंग बढ़ती जाती थी। दिन का काफी चढ़ आया था। वार के अंत के पांच श्लोक ही बाकी रह गए थे, इका-दुक्का आदमी आने शुरू हुए। सुंदरी का दिल यही चाहता था कि आज का दिन एक बरस लंबा हो जाए और उसका मन इसी तरह सतगुरु के चरणों से जुड़ा रहे कि उसे ब्रह्मा भी यह अमृत रस पीने से न हटा सकें।

रागी सिंह बेचारे थोड़े मायूस हो गए। वार का भोग पड़ने वाला था (शब्द कीर्तन खत्म होने वाला था), लेकिन अभी तक भरपूर संगत नहीं पहुंची थी। उनका ख्याल था कि अगर ऐसा ही हाल रहा तो इस बार गुरुपर्व उनके लिए सूखा ही चला जाएगा।

उनमें से एक ने उठकर भाई जी के पास जाकर कहा, "भाई जी! भोग पड़ने वाला है और संगत अभी तक नहीं आई"।

भाई जी जो महाराज की हुज़ूरी में बैठे ऊंघ रहे थे, झिड़क होकर आंखें खोलते हुए बोले, " क्या कहा आन कर के?"

रागी सिख ने फिर अपनी बात दोहराई तो भाई जी बोले, "महाराज यह आन कर के गांव के लोग जो ठहरे। अच्छा मैं जाकर बुलाता हूं आन कर के"

और वह संगत को बुलाने चले गए। रागी सिख जान-बूझकर देर कर रहे थे कि लोग इकट्ठे हो जाएं तो समाप्ति की जाए। भाई जी एक बार, दो बार और फिर तीसरी बार गए।

दोपहर होने तक जब कड़ा प्रसाद की खुशबू दूर-दूर तक फैलने शुरू हो गई, तो गुरुद्वारे में औरतों, मर्दों और बच्चों से भर गया।

अभी संगत को आए थोड़ी ही देर हुई थी कि रागी सिखों को दाएं-बाएं से कुहनियां लगनी शुरू हो गईं और उनके कानों में,

"जल्दी भोग पाओ, हमें खेतों को भी जाना है" की आवाजें आने लगीं।

पृष्ठ 90

आख़िरकार वार का भोग पड़ा और भाई जी साहिब बड़े जोश से और ख़ुश-ख़ुश अरदास करने के लिए आगे आए। आज कड़ाह प्रसाद की देग भी भरी हुई थी। ग्यारह रुपये का प्रसाद तो पाला सिंह और उसकी पार्टी ने करवाया था और पंचायत का इससे अलग था।

"सिख पढ़ते सुनते, सरबत लाहे वन्द, जो आवे सो राज़ी जावे। गुरु नानक नाम चढ़दी कला, तेरे भाणे सरबत का भला।"

इसके साथ ही सारी संगत ने माथा टेका।

इसी वक़्त भूसे वाले कमरे का दरवाज़ा ढहने की आवाज़ आई और ढेर सारा भूसा कमरे में आ गिरा। इसके साथ ही एक लड़की लड़खड़ाती हुई सपाट आ गिरी और श्री गुरु ग्रंथ साहिब के हुज़ूर जहाँ माथा टेकने की जगह थी, वहाँ मुँह के बल लड़की का सर टकराया और वह लगभग भूसे के ढेर के नीचे दब गई।

सबका ध्यान उस तरफ खिंच गया। हैरानी और ग़ुस्से से उनका तन-बदन भड़क उठा, जब उन्होंने देखा कि वह क़लंदर की बेटी है!

रब दे और बंदा सहे ।

लोग टूट पड़े उस बदक़िस्मत पर। किसी ने मुक्का, किसी ने घुसा, किसी ने टांग, किसी ने थप्पड़। ग़रज़ कि लड़की ज़मीन चाटने लगी।

एक तो वे ही लोग उसके सवाल पर लड़ाई करने के लिए बैठे थे। ऊपर से अंधेरे में हुआ यह अछूत के अंदर आ जाने से कड़ाह प्रसाद की मन भर की देग अब कौवों और कुत्तों के क़ाबिल रह गई थी! पता नहीं उन्हें अभी उसे कितनी सज़ा देनी थी लेकिन बीच में ही कुछ लोगों को फ़िक्र पड़ गई कि कहीं ऐसा न हो कि मर ही जाए। पहले ही एक मुक़दमे से गाँव की मुश्किल से जान छूटी थी और डरते थे कि अब कोई और मुसीबत न पड़ जाए।

लड़की को घसीटते और गाली-गलौज देते हुए वे बाहर आँगन में लाए। लड़की के नाक-मुँह और सर से लगातार ख़ून बह रहा था, जिससे उसके सारे कपड़े भीग गए थे। कुछ लोगों ने तो यह सोचा कि बस अब इस लड़की का काम तमाम है। बीच-बीच में कई आदमी फ़िक्रमंद होकर एक-दूसरे से कानाफूसी कर रहे थे कि इतने में बचन सिंह भी आ निकला।

बचन सिंह को देखकर लोगों का ग़ुस्सा और भी तेज़ हो गया। वे तो पहले से ही उस पर से का कोई बहाना ढूँढ रहे थे लेकिन अब तो उन्हें पक्की बात मिल गई थी। यहाँ नहीं, कई लोगों को तो पूरा-पूरा शक था कि यह सारी कारस्तानी—बदचलनी बचन सिंह की ही है!

बचन सिंह को उस वक़्त किसी से कुछ पूछने का ख़याल ही नहीं था।

पृष्ठ 91

सर से पैर तक डूबी और उसका दिल ग़म और ग़ुस्से से भर गया। उसका ख़ून खौले लगा और वह कड़कती आवाज़ में बोला, " इस को क्यों मारा गया है। इस ने क्या क़सूर किया है?"

इस एक सवाल के जवाब में दर्जनों ज़बानें चलनी शुरू हो गईं।

"उसका क्या काम था यहाँ? इसको यहाँ कौन लाया है? हम सब कुछ जान गए हैं, धर्म का नाश हो गया। कलियुग के चमत्कार ने हमारा बेड़ा ग़र्क कर दिया। इतने कड़ाह प्रसाद का क्या होगा?"

शोर मचाते हुए लोग सुंदरी की तरफ से हटकर बचन सिंह के इर्द-गिर्द हो गए और उसे इस तरह देखने लगे जैसे चूहे को मारने से पहले भी उसकी तरफ घूरते हैं।

लेकिन बचन सिंह का ग़ुस्सा ज़रा भी ठंडा न हुआ। वह ग़ुस्से से कांपता हुआ बोला,

"यह हद दर्जे का ज़ुल्म है। ये बेचारी शबद कीर्तन सुनने के लिए आई थी। अगर मोहब्बत की मारी आ ही गई तो कहाँ का अनर्थ हो गया जो इस बे-दर्दी से इसे मारा गया है..."

उसका गला भर आया और आँखों से आँसू निकल आए।

उसकी बातों का सुनने वालों पर ऐसा ही असर हुआ जैसा शराब खाने में बैठे शराबियों पर वेद मंत्र सुनाने का होता है, वे सब इस तरह हंस रहे थे जैसे बचन सिंह बे-होशी में बड़बड़ा रहा हो। उनमें से एक आगे होकर बोला,

"शबद कीर्तन सुनने आई थी, सरदार जी। ऐसी चालबाजियां औरों को जाकर दिखाओ।"

दूसरा बोला, "एक तो चोरी और ऊपर सीना ज़ोरी।"

तीसरे ने कहा, "हम तो पहले ही जानते थे कि एक न एक दिन यह चाँद चढ़कर रहेगा। सौ दिन चोर के और एक दिन शाह का। कहीं गुनाह छुपाने से छुपता है?"

चौथे ने राय ज़नी की। "इस बेचारे ने शायद सब कुछ ज्ञानी जी से समझ रखा है जो उसकी हर बात में 'हाँ में हाँ' मिला देगा। ये नहीं जानता कि हमारा भाई भी होता तो यहां गुरुद्वारे में ऐसी शैतानी हरकतें करने की इजाज़त नहीं दी जाएगी।"

बचन सिंह को अब तक उनकी इन ऊट-पटांग बातों की समझ नहीं आई थी लेकिन अब वह यह नज़ारा देखकर घबरा सा गया।

उसका ध्यान सुंदरी की तरफ गया। वह डर गया, शायद ये बच ही न सके। इस ख़याल से उसने वहाँ मज़ीद ख़तरा समझा। आगे बढ़कर उसने सुंदरी को बाज़ुओं पर उठा लिया और यह कहता हुआ दरवाज़े से बाहर निकल गया,

"ज़ालिमों, बे-रहमों! लो मैं इसे अपने घर ले जाता हूँ। जाओ मुझे बिरादरी से अलग कर दो।"

पृष्ठ 92

"मैं तुम सब से नफ़रत करता हूँ।"

सब ने "ओए ओए" कहकर ठहाका लगाकर उसका मज़ाक उड़ाया। और हंसकर दोहरे हो गए और जो जी में आया बकता गया।

उन सब का ग़ुस्सा लगभग उतर गया था। जब आदमी देखता है कि उसका दुश्मन नई मुसीबत में फंस रहा है, तो उस वक़्त उसे अपना नुकसान फ़ायदा मालूम होता है। उसके अलावा बचन सिंह के ख़िलाफ़ जो कार्रवाई करना चाहते थे, अब उसकी ज़रूरत ही नहीं रही थी। उनका मतलब अपने आप ही पूरा हो चुका था। संगत फिर गुरुद्वारे जा पहुँची। कड़ाह प्रसाद उन्होंने सारा ही उठवा दिया और मज़ीद सामान मंगवाकर फिर से तैयार किया गया। पहले वाला कहाँ गया, यह भी कोई न जान पाया।

दिन काफ़ी चढ़ आया था। लोग जाने के लिए बे-चैन हो रहे थे।

इस वक़्त नंबरदार नत्था सिंह का छोटा लड़का गुरुद्वारे में दाखिल हुआ। उसके पीछे बिल्ली नस्ल का एक कुत्ते का पिल्ला भी पूंछ हिलाता अंदर आ गया। कुत्ते ने जैसे ही नंबरदार को देखा, तो फ़ौरन उसकी झोली में आ बैठा और पूंछ हिलाता हुआ उसका मुँह चाटने के लिए मुँह ऊपर उठाने लगा। शायद उसे कड़ाह प्रसाद की ख़ुशबू आई थी। नंबरदार ने उसकी कमर पर हाथ फेरते हुए और उसका मुँह पकड़कर नीचे करते हुए उससे यों लाड़ करने लगा, जैसे छोटे बच्चों से किया जाता है।

पास से ही ज्वाला सिंह ने बाज़ू बढ़ाकर पिल्ले की कमर थपकता हुआ बोला, "ये सौगात कहाँ से लाए हो नंबरदार? कुत्ता तो बड़ी कमाल का मालूम होता है।"

नंबरदार जो पहले ही कुत्ते की तारीफ़ सुनने के लिए तैयार बैठा था, बोला, "यहाँ ज्वाला सियाँ, बड़ी सिफ़ारशों से मंगवाया है। तहसीलदार टेकचंद से बापू की बड़ी पुरानी दोस्ती चली आ रही है। पिछला माल अफसर जब विलायत जाने लगा था, तो अपनी कुत्तिया उसे दे गया था। कुत्ता अभी ब्याही भी नहीं थी कि बापू ने पेशगी दे दी। पांच-छह बार मुझे जाना पड़ा, मज़ीद 25 रुपये दिए, तब ये मिला, ज्वाला सियाँ, बड़ा असील नस्ल का कुत्ता है। पालू बताता था कि एक बार तहसीलदार की भैंस चोरी हो गई तो उसकी माँ चोर की घूंटी से जाकर खुलवा लाई थी।"

कुत्ते को थपकता हुआ पास से दयाल सिंह बोला, "कुत्ता जिंदा रहा तो किसी दिन शेर का मुक़ाबला करेगा। देख कितना तगड़ा है।"

नंबरदार बोला, "आधा सेर पक्का गोश्त रोज़ मिलता है और दूध जितना चाहे पी ले। इसके मुँह में चार उंगलियाँ डाल कर देखो, इसे चाहे कुछ करो, दांतों से नहीं नहीं काटता और अगर कोई ग़ैर आ जाए..."

पृष्ठ 93

"...तो सारे घर को सर पर उठा लेता है। जंजीर तुड़ाते हुए कहता है, बस मुझे छोड़ दो, तो मैं इसे पकड़ लूँ।"

कड़ाह प्रसाद दोबारा तैयार होकर आ गया और बंटना शुरू हुआ। नंबरदार ने कुत्ते के हिस्से का उसे खिलाकर और फिर अपने हिस्से में से भी तीन हिस्से उसे खिलाकर मुश्किल से चौथा हिस्सा ख़ुद खाया।

प्रसाद बंटने के बाद सिखों के लिए चंदे का सवाल उठा। नंबरदार ने हंसकर इस काम के लिए चंदा दिया था और उसे ही सबसे आगे बैठाया गया था।

भाई जी ने सब से पहले उठकर कहा, "ख़ालसा जी! रागी सिखों ने आन करके बड़े प्रेम से परचार किया है। अब आन करके इनके लिए ज़्यादा से ज़्यादा रुपये दें, जन्म सफल कीजिए।"

सब की नज़रें लधा सिंह पर टिकी थीं और सब एक-दूसरे के मुँह की तरफ इस लिए देख रहे थे कि देखें क्या देता है। काफी देर तक 'पहले तुम', 'पहले तुम' होता रहा। आखिर लधा सिंह ने पगड़ी के पल्लू से एक अठन्नी खोल दी। यह देखकर रागी सिखों के दिल बैठ गए। इतने में दीवा सिंह तरखाण जो पीछे बैठा था, उठा और एक रुपया दे बैठा।

यह देखकर नंबरदार लधा सिंह को सर से पाँव तक आग लग गई। गाँव का नीची नस्ल का आदमी होकर हमसे ऊपर जाने की कोशिश करे? उसका दिल चाहता था कि उठकर अभी उसकी गत बना दे, लेकिन कुछ सोचकर इस काम को किसी और वक़्त के लिए उठा रखा।

बाबा करम सिंह बड़ा सच्चा और अखड़ आदमी था। वह सच्ची बात मुँह पर मार देता था। झट बोल उठा, "वही नंबरदार ने तो लुटीया ही डूबो दी है। देने लगा था कुछ तो दे देता। बस एक अठन्नी, न दो--- न चार। ये देख ले। देवा सिंह ने चिड़ी जितना रुपया छन छन करता फेंक दिया है।

पहली चोट तो नंबरदार ने किसी तरह बर्दाश्त कर लिया था लेकिन ऊपर से एक और पड़ गई। सब्र की कोई हद होती है। वह आपे से बाहर होकर बोला,

"बाबा करम मियाँ! तुझे पहले भी कई बार समझाया है कि बात करते वक़्त ज़रा होश से बात किया कर। खुद को अक़ल न हो तो आदमी किसी और से ले ले। तू भी हमारा देखा भाला है कि कितने पानी में है। क्या भूल गया जब दयाल बनीया तेरा बैल बछड़ा नीलाम करवाने वाला था, तब तो मेरे बाप के पैरों में पगड़ी डाल कर रोता था। अगर बापू उस वक़्त बीच में न पड़ता तो तेरे जैसे के तीन-तीन बिक जाते।"

बाबा करम सिंह के दोनों लड़के बैठे थे। बाप की इज़्ज़त उतरते देख कर बिला सिंह बोला, " सुन! ओए नंबरदार! मुँह को ज़रा संभाल कर रख। ये भी फज्जु कुम्हार न समझना कि एक तो उसने रुपये छीन लिए और उल्टा उसे हवालात में डलवा दिया था। अब तो कह लिया है, अगर दोबारा हमारे बाप का नाम लिया तो हम से बुरा कोई..."

पृष्ठ 94

न होगा। अपनी इज़्ज़त अपने हाथ में होती है।

नंबरदार बोलने ही वाला था कि पास से उसका भतीजा बोला, "बस कर ओए बस कर । टूटी हुई जूती की तरह फैलता न जा जियादा । ज़ात की छिपकली उलझे शतीर से । जाओ लगा लो ज़ोर जितना लगता है। कहा है, कहा है और सौ बार कहेंगे किसी --- (गाली देकर) का दिया नहीं खाते।"

करम सिंह का छोटा लड़का खेला सिंह बोला, "हाँ जी। तुम्हें टके टके की बातें क्यों न आएं। बाबा जी रोटी के टुकड़े को तरसता मर गया और पोते के मिज़ाज ही नहीं मिलते हैं।"

नंबरदार बोला, "ओह! मिज़ाज कोई तेरे सिर पड़े हमारे ?"

करम सिंह का एक और जमाती बोल उठा, "हाँ जी मिज़ाज में तेज़ी क्यों न हो। कुछ उजड़े हुए ननिहाल की कमाई मिल गई और फिर बेटियां बेचकर दौलत से घर भर लिया। फिर मिज़ाज क्यों न हो। वो दिन भूल गए होंगे, जब तीनों भाई डाके में पकड़े गए थे और बाप दरवाज़े-दरवाज़े रोता फिरता था। अगर उस वक़्त हम मदद के लिए न आते तो बेगानों ने आप की औरतों के लहंगे भी नीलाम करवा दिए होते।"

"बस ओए कुत्ते।"

"चुप ओए, शदीद की औलाद।"

"पकड़ ओए, इसे जाता कहाँ है?"

"कौन पैदा हुआ है मुझे हाथ लगाने वाला।"

"अच्छा"

"हाँ"

"ले फिर"

"आ फिर"

बस फिर किस बात की देर थी। दोनों तरफ से महाभारत शुरू हो गई। पल ही पल में घमासान मच गया। खैर यही गुज़री कि था गुरुद्वारा, जिसकी वजह से लाठी-नेज़े किसी के पास नहीं थे। नहीं तो न मालूम आज कितनों का ख़ून हो जाता। बेशक रागी सिखों के बाजों और साज़ों ने किसी हद तक हथियारों का काम दिया लेकिन वो ज़्यादा देर न ठहर सके। जिस-जिस के सर में पड़े, सर बाद में फटे , साज़ों के इंजन-पंजर पहले ढीले हो गए।

पृष्ठ 95

भाई जी साहिब तो पलक झपकते तख़्त-पोश के नीचे जा छिपे और रागी सिंह जान बचाकर सो लाखों पाए वाली भेंट लेकर नंगे पाओं जो भागे तो स्टेशन पर जाकर ही दम लिया।

शाम होते-होते थाने से पुलिस भी आ गई और सब छोटों-बड़ों को आगे हाँक ले गई। आख़िर नतीजा क्या हुआ, वही जो हुआ करता है। चंद दिनों में ही गाँवों की दौलत कुछ वकीलों की जेबों में, कचहरी के दफ़्तरों में और कुछ पुलिस की जेबों के नीचे चली गई।

(19)

बचन सिंह सुंदरी को ले तो आया लेकिन ये काम उसके लिए आस्तीन का सांप बन गया। सबसे पहले तो उसकी माँ ने ही जब ये तमाशा देखा तो वो जो पहले ही सुंदरी के नाम से ही आज़िज़ थी, उसको घर में आई देख कर घबरा गई कि उसके होश उड़ गए। उसके लिए ये बड़ा मुश्किल वक़्त था। बचन सिंह से पहले ही कुछ कहने की हिम्मत नहीं थी और अब ये क़लंदरों की लड़की, जिससे बचन सिंह का पीछा छुड़ाने के लिए वो पहले ही तरह-तरह के तरीक़े सोच रही थी, अब उसके घर में ही आ गई थी।

इसके अलावा बचन सिंह की इस हरकत का गाँव के घर-घर में चर्चे थे और नतीजा ये हुआ कि लोगों ने उन मां-बेटों के साथ बोलना-चालना, मिलना-जुलना क़रीब-क़रीब बंद कर दिया।

बचन सिंह इस बात से बे-ख़बर नहीं था। वो माँ का दुख भी समझता था और इसके साथ ही ये भी महसूस कर रहा था कि गाँव वाले किस हद तक पहुँच गए। लेकिन वो सब कुछ जानता हुआ भी सुंदरी

को घर ले ही आया और आते ही एक नाई को बुलाकर उसकी मरहम-पट्टी शुरू करा दी। उसने रोडू को भी सारी बात बता दी और इसको भी अपने साथ ले आया।

रोडू ने जब सुंदरी की हालत देखी तो उसको अफ़सोस सा आ गया... फिर उसे ख़याल आया कि बचन सिंह तो पहले ही हमारे लिए सारे जहान की तोहमतों का बोझ उठाए फिरता है, अब न जाने इस जुर्म के लिए इसको बिरादरी की तरफ से क्या सज़ा भुगतनी होगी। वो बचन सिंह के पाओं पर गिर पड़ा और उसका शुक्र गुज़ार होते हुए सुंदरी को उसी हालत में अपने घर ले जाने की इज़ाज़त माँगने लगा।

बे-शक वो इस हालत में सुंदरी को घर लेनहीं जाना चाहता था क्योंकि वो जानता था...

पृष्ठ 96

जिस तरह का इलाज हो रहा है, वैसा झोपड़ी में जाकर हरगिज़ नहीं होगा, बल्कि वहाँ तो मामूली दवा-दारू की भी उम्मीद नहीं। लेकिन फिर भी बचन सिंह ने सुंदरी की इज़्ज़त खतरे में डालने के बजाय अपनी जान को ही खतरे में डालने को तरजीह दी। लेकिन उसके हज़ार मिन्नत करने पर भी बचन सिंह रज़ामंद न हुआ।

यह तो फैसला हो गया कि सुंदरी जब तक तंदुरुस्त न हो जाए, बचन सिंह के घर में ही रहेगी। लेकिन रोडू को एक और मुश्किल सामने दिखाई दे रही थी कि वो सुंदरी से अलग नहीं रह सकता था। बेशक उसे इस बात का पूरा भरोसा था कि सुंदरी की तीमारदारी में कोई कमी नहीं होगी, लेकिन प्यार का बंधन उसे मजबूर किए हुए था। आख़िर सीने पर पत्थर रख के उसने कुछ दिनों के लिए सुंदरी से बिछड़ने के लिए खुद को तैयार कर लिया।

इसके बाद दो-तीन दिन सुंदरी को देखने जाता रहा, लेकिन यह सौदा उसे इतना महंगा पड़ता था कि एक-दो दिन बाद ही वह पीछे हट गया। जब वह गलियों में से गुज़रता तो लोगों की छेड़छाड़, उल्टे सीधे बोल उसकी नाक में दम कर देते थे।

इधर बचन सिंह का भी यही हाल था, लेकिन उसके मज़बूत इरादे ने उसे अपने मक़सद से दूर न होने दिया। कदम-कदम पर लोगों के तंज़ करने और लड़ने पर भी उसकी तीमारदारी में फ़र्क न पड़ा और वह सरगर्मी से सुंदरी का इलाज करता रहा।

लगातार दो दिन सुंदरी बे-होश रही। तीसरे दिन में किसी वक़्त वह थोड़ी-सी आँखें खोलती थी, लेकिन फिर बंद कर लेती थी। तीसरी रात को तकरीबन नौ बजे जब रोडू भी लोगों की नज़रों से खुद को छुपाता हुआ सुंदरी के सिरहाने आकर बैठा, तो सुंदरी ने करवट बदली। आज दिन को भी वह दो-तीन बार इसी तरह हिली थी और कुछ बुदबुदा रही थी।

आहिस्ता-आहिस्ता सुंदरी की आँखों से पलकें ऊपर उठीं और वह अपने इर्द-गिर्द की चीज़ों को गौर से देखने लगी। रोडू की जान में जान आई और वह सुंदरी के माथे पर हाथ फेरता हुआ भरे हुए गले से बोला,

"सुंदरी"।

सुंदरी मद्धम सी आवाज़ में बोली, "हाँ बाबा"।

"बेटा, मेरी तरफ देख"।

सुंदरी ने करवट बदली और उसने सिरहाने बैठे अपने पालने वाले बाप को देखा। सुंदरी ने दोनों बाज़ुओं को उसकी तरफ फैला दिया और रोडू ने उसे गले लगा लिया, गले में हाथ डालकर सुंदरी धीरे से बोली, "बाबा, मैं कहाँ हूँ"!

पृष्ठ 97

"बेटा, तू अपने घर में है"।

"नहीं बाबा! ये तो हमारा घर नहीं। हमारे घर में तो चारपाई कोई नहीं थीं"

और वह फिर घर की हर एक चीज़ की तरफ हैरत की नज़रों से देखने लगी। फिर उसे मालूम हुआ कि उसके सिरहाने और ठुड्डी पर पट्टियाँ बंधी हुई हैं।

वह फिर हाथ से रोडू का सिर टटोलती हुई बोली,

"बाबा! मुझे यहाँ कौन..." और वह चुप हो गई। उसे तो वहीं सारे सवालों का जवाब मिल गया था। उस दिन की सारी बीती बातें उसे याद आ गईं और वह फिर बोली, "बाबा, मैं बे-होश हो गई थी"?

"हाँ बेटा"।

"चलो ना, बाबा अब घर चलें"।

"चलेंगे बेटा, तो ज़रा ठीक हो जा"।

"मैं तो बाबा अच्छी भली हूँ"।

वह आहिस्ता-आहिस्ता उठकर चारपाई पर बैठने लगी। इस वक़्त रात काफी जा चुकी थी। रोडू ने उसे सहारा देकर फिर चारपाई पर लिटा दिया और प्यार से उसके सिर पर हाथ फेरता हुआ बोला,

"बेटी, लेट जा, सवेरे तड़के मैं तुझे ले चलूँगा"।

बचन सिंह भी पास ही बैठा था। रोडू ने बड़ी आजिज़ी से हाथ जोड़कर उससे कहा, "सरदार जी! सुंदरी होश में आ गई है। लीजिये, अब मैं चलता हूँ। सवेरे तड़के आऊँगा"।

बचन सिंह ने कहा, "कोई फिक्र न कीजिये। आप जाइए"।

सुंदरी की फिर आँख लग गई थी और रोडू ने एक बार फिर मोहब्बत भरी नज़रों से उसके चेहरे को देखा और छड़ी पकड़कर दरवाज़े से बाहर चला गया।

उसके जाने के आधे घंटे बाद सुंदरी ने फिर करवट बदली। उसने पानी माँगा। बचन सिंह पास ही बैठा था, उसने पानी लाकर गिलास उसके मुँह से लगा दिया।

बचन सिंह की तरफ वह काफी देर देखती रही और फिर बोली,

"मुझे यहाँ आप लाए थे"?

बचन सिंह ने 'हाँ' कहकर बिस्तर को ठीक करते हुए कहा, "सुंदरी! कोई फिक्र न कर। अब तू अच्छी हो गई है। अभी ज़्यादा हिलना नहीं चाहिए, न ही ज़्यादा बात चीत कर"।

चंचल सुंदरी को भला किस तरह चैन पड़े। वह ज़रा शोख़ी से बोली, "मैं तो अच्छी भली हूँ"।

पृष्ठ 98

और फिर वह अपने दोनों हाथों को उलटा सीधा करके देखने लगी, जिनका रंग हल्दी की तरह पीला हो गया था।

फिर बोली, "यहाँ मुझे आप लाए थे?"

"हाँ"

"क्यों?"

"बेहोशी की हालत में उठाकर"

"और आपने मुझे छूकर..."

"तुम्हें छूने में कोई हर्ज था?"

"हम नीची जात के जो हैं"

"नहीं, मेरी नज़र में तो दुनिया की सारी ज़ातों से ऊँची है। सुंदरी, मैं तुम्हें नीच नहीं समझता।"

"आप मुझे नीच नहीं समझते?"

"नहीं"

"फिर क्या समझते हैं?"

"अपने जैसी।"

"खैर, इन बातों को रहने दे। पहले यह बता कि तूउस दिन गुरुद्वारे किस तरह चली गई थी।"

जो बात वह सुनना नहीं चाहती थी, बचन सिंह के मुँह से वही बात सुनकर वह घबरा गई। वह पहले ही दिल में पछता रही थी कि वह उस दिन गुरुद्वारे क्यों गई—अपनी हिमाक़त (मूर्खता) की वजह से चली गई थी। उसे तो बाबा ने ग़लती की सज़ा दी और यह हालत हुई। वह शर्मिंदा-सी होकर बोली, "मुझसे भूल हो गई थी।"

"भूल... नहीं सुंदरी। मुझे तेरे जाने पर तो एतराज नहीं। मैं तो पूछता हूँ कि वहाँ पहुँची किस तरह? तुझे किसी ने मना नहीं किया?"

सुंदरी को कुछ हौसला हुआ और उसने उस रात का सारा हाल सुनाया।

फिर यह भी बताया, "रागी कीर्तन कर रहे थे और मैं दरवाज़े के अंदर खड़ी सुन रही थी। फिर जब अरदास होने लगी तो मैं भी हाथ जोड़कर खड़ी हो गई। जैसे ही अरदास ख़त्म हुई, मुझे याद ही नहीं रहा कि मैं दरवाज़े के पास ही खड़ी हूँ। उसी तरह माथा टेकने के लिए झुकने लगी तो मेरे सर में मामूली-सा टकराओ हुआ। दरवाज़ा अचानक ही खुल गया और उसके साथ पीछे से भूसे का अंबार (ढेर) नीचे गिरने की वजह से मेरे ऊपर आ गिरा और मैं गुरु ग्रंथ साहिब वाले कमरे में जाकर गिर पड़ी और जिस जगह मैं माथा टेकना चाहती थी, मेरा माथा ठीक उसी जगह पर जाकर लगा। गुरु साहिब जी ने मेरी माथा टेकने की ख़्वाहिश तो पूरी कर दी लेकिन साथ ही मेरे ढीठपन की सज़ा भी दे दी।"

पृष्ठ 99

सुंदरी के एतक़ाद (विश्वास) और उसकी मुश्किल तरीन क़ुरबानी और इतने दुखों को देखकर बचन सिंह का दिल उसके लिए प्यार से लबरेज़ हो गया। उसने प्यार से उसका हाथ पकड़ कर कहा,

"सुंदरी, तू अज़ीम है। मेरे दिल में तेरे लिए बड़ी इज़्ज़त है।"

सुंदरी को आज तक यही ख़याल था कि दुनिया में एक बूढ़े क़लंदर और दूसरी बंदरिया के अलावा उससे कोई प्यार नहीं करता। बल्कि यह कि सारी दुनिया उससे नफ़रत करती है। यही वजह थी कि मोहब्बत की अहमियत से वह अब तक क़रीब-क़रीब अनजान थी। बचन सिंह, एक ऊँचे ख़ानदान से

होते हुए भी मुझसे प्यार करता है। यह महसूस करके सुंदरी के दिल में एक नई ख़ुशी, नई उमंग का दखल हो गया। वह चौदह-पंद्रह साल की लड़की थी। प्रेम की क़ीमत नहीं जानती थी लेकिन प्रेम की कसम, वह जान सकती थी।

बचन सिंह अपनी जान की परवाह न करता हुआ सुंदरी का इलाज कर रहा था। सुंदरी के ज़ख्म बहुत जल्द अच्छे होने लगे। जल्द अच्छे होने की वजह दवा की ख़ूबी थी या बचन सिंह की पाक मोहब्बत—कहा नहीं जा सकता।

जैसे-जैसे सुंदरी सेहतमंद होती गई, उसके दिल में उस फ़रिश्ते के लिए जगह बनती गई, जो उसकी ख़ातिर सारे गाँव की कहर-आलूद नज़रों का शिकार बना हुआ था। दूसरी तरफ बचन सिंह भी जब देखता कि पंद्रह बरस की मुटियार (युवती) के सीने में कुदरत ने कितना नर्म, पाक और क़ीमती दिल रख दिया है, तो वह लम्हा-लम्हा सुंदरी की तरफ खिंचा चला जाता था।

औरत का दिल अगर किसी वक़्त पत्थर-सा सख्त हो जाता है तो किसी दूसरे के दुखी दिल का पानी बनकर ही निकलता है। सदा कौर जो पहले उस क़लंदर की लड़की के बारे में नफ़रत का जज़्बा रखती थी लेकिन जिस दिन से बचन सिंह को सुंदरी को ज़ख्मी हालत में उठाया और बचन सिंह की ज़ुबानी उसने गुरुद्वारे वाली कहानी सुनी, उसी दिन से सुंदरी के दिल में प्यार उमड़ पड़ा था, अगरचे वह भी समाज की आँखों में खून उतरा हुआ देख रही थी और उसे अपने ख़ून का भी ख़ौफ़ हो रहा था।

सुंदरी का पतला और सुडौल जिस्म उसकी चंचल लेकिन मानी-खेज़ नज़रों से भरपूर आँखें और उसका भोला-भाला हँसमुख चेहरा देखकर, चाहे औरत हो या मर्द, सुंदरी से नफ़रत नहीं कर सकता था। पंद्रह दिन बीत गए, सुंदरी अब तकरीबन सेहतमंद थी। माथे का ज़ख्म कुछ गहरा था, जिसकी वजह से उसकी पट्टी खुलने में अभी दो दिन की देरी थी। बचन सिंह को सुंदरी के ज़ख्म की बहुत फ़िक्र थी, इस वजह से कि ज़ख्म गहरा था, और कहीं इसका निशान सुंदरी की ख़ूबसूरती में फ़र्क न डाल दे।

पृष्ठ 100

लेकिन इसके बरक्स जिस दिन पट्टी खुली, उसकी हैरानी की हद न रही जब उसने देखा कि उसके आधे चाँद जैसे ज़ख्म के निशान ने सुंदरी के हुस्न को चार चाँद लगा दिए हैं। जैसे उसका सारा हुस्न बचन सिंह को उसी ज़ख्म के निशान में ही दिखाई दे रहा था।

रात के दस बजे का वक़्त था। सुंदरी की चारपाई आँगन में बने हुए छोटे से कमरे में थी और सदा कौर और बचन सिंह के पिछले बरामदे में। सदा कौर काम-काज से फ़ुरसत पाकर सो गई थी।

आज सुंदरी बिल्कुल सेहतमंद थी। वह चारपाई पर लेटी किसी गहरी सोच में ग़र्क थी और कान उसके दरवाज़े की तरफ लगे थे, शायद किसी आवाज़ के इंतज़ार में थे। चूँकि कल उसे अपनी झोपड़ी में चले जाना था, इसलिए आज वह बचन सिंह से दिल खोलकर बातें करना चाहती थी। क्या बातें करनी चाहती थी? इसका उसे पता नहीं था। वह कुछ ऐसा महसूस कर रही थी कि बचन सिंह से बिछड़ना उसके लिए जिस्म से रूह के बिछड़ने के बराबर होगा।

बचन सिंह अभी तक क्यों नहीं आया? खैर, हो न हो, वह ज़रा सी आहट पर ही दरवाज़े की तरफ देखने लग जाती थी। रोडू को किसी बात की फ़िक्र नहीं थी क्योंकि वह बचन सिंह की आदत से वाकिफ़ थी कि वह कभी आधी रात को भी घर लौटा करता था।

आहिस्ता-आहिस्ता ग्यारह बज गए। सुंदरी से लेटा न जा सका। बैठा भी न गया। वह उठकर आँगन में टहलने लगी। वह बचन सिंह से कुछ ज़रूरी बातें करना चाहती थी। वह जो-जो बातें सोच रही थी, उनकी तादाद शायद इतनी ज़्यादा थी कि वह क्या सब याद रख सकेगी?

उसी वक़्त दरवाज़े की खटखटाहट हुई। उसने जाकर दरवाज़ा खोला और बचन सिंह तेज़-तेज़ क़दम उठाता हुआ अंदर आया। बचन सिंह को देखते ही सुंदरी के चेहरे पर एक अजीब तरह की बच्चों सी मुस्कुराहट आई और उसने पूछा, "आप आज इतनी देर लगा कर आए हैं?"।

बचन सिंह फ़ौरन जवाब न दे सका और जाकर सुंदरी की चारपाई के पास रखी कुर्सी पर बैठ गया। पीछे-पीछे सुंदरी भी जाकर चारपाई पर बैठ गई।

उस वक़्त कुछ तेज़ हवा होने की वजह से बचन सिंह ने महसूस किया, जैसे सुंदरी को सर्दी लग रही है। उसके सवाल का जवाब देने से पहले बचन सिंह ने कहा,

"सुंदरी! शायद तुझे ठंड लग रही है, चल, बैठ, मैं तेरी चारपाई बिछा दूँ"।

साथ ही उसने सुंदरी का हाथ पकड़कर उसे चारपाई से उठाया। सुंदरी का हाथ बर्फ की तरह ठंडा था।

पृष्ठ 101

"हूँ! तो तुम ठंड में फिरती रही हो सुंदरी? क्या फिर बीमार होने का इरादा था?"

कहकर वह चारपाई बैठक में उठा ले गया। उसके बाद बिस्तर और कुर्सी।

उसे बिठाकर और ओढ़ाकर बचन सिंह ने ग़ुस्से से कहा, "इस तरह तो फिर बीमार हो जाओगी!"।

सुंदरी ने फिर भी कोई जवाब न दिया। जब बचन सिंह ने उसका बाज़ू पकड़कर झिंझोड़ते हुए कहा, "क्या बात है सुंदरी?" तो सुंदरी की आँखों में आँसू भर आए छलक पड़े।

अपने कड़वे बोलने पर बचन सिंह पछता हुआ। वह कुर्सी से उठकर चारपाई पर बैठ गया और सुंदरी के दोनों हाथ अपने दोनों हाथों में दबाकर कहने लगा, "मेरी बात बुरी लगी है?"।

सुंदरी उस वक़्त कहाँ थी। किसी सपने या तसव्वुर के सुनहरी देश में।

"बचन सिंह को उसकी कितनी फ़िक्र है। कितनी मोहब्बत है जो मामूली ठंडा हाथ देखकर ही घबरा गया है। ओह! मैं कितनी ख़ुश-किस्मत—नहीं, बद-किस्मत...!"।

इस तरह के ख़यालात सुंदरी के ज़हन पर छाए हुए थे। बचन सिंह के जवाब में बोलने के बजाय वह छलक पड़ी।

बचन सिंह ने उसके हाथों को दबाया और फिर बोला,

"सुंदरी," "इसके बाद क्या कहना है उसका उसे होश नहीं था"। वह किसी अनकहे नशे में डूब चुका था। यही वजह है कि वह सुंदरी के हाथों को ही ज़रा देर दबाता रहा।

सुंदरी की आँखों के सामने बचन सिंह मौजूद होता हुआ भी कुछ देर के लिए उसे दिखाई नहीं दे रहा था। उसे दिखाई दे रहा था, अपनी झोपड़ी में पड़ा हुआ उसका ख़ाली जिस्म। बचन सिंह के बिना वह ख़ाली होगी और शायद सुबह का सूरज चढ़ते ही, क्योंकि बाबा रोडू ने आज कहला भेजा था, "कल सुंदरी को भेज देना"।

वह महसूस कर रही थी अपने अंदर की कमी। सुंदरी को ऐसा लगा था, जैसे बचन सिंह उसकी मुस्तक़बिल की ज़िंदगी में दाख़िल होकर किस तरह घुल-मिल गया है कि अलहदा (अलग) करने से भी अलग नहीं किया जा सकेगा और अगर बिछड़ गई तो शायद वह ज़िंदा न रह सकेगी—।

"क्या ये फ़ज़ूल बातें बचन सिंह पर ज़ाहिर करने वाली हैं?" सुंदरी अभी इन्हीं ख़यालात में ग़र्क थी कि उसे अपने दबे हुए हाथों में से नरमी बहती हुई महसूस हुई। जो सारे जिस्म में जज़्ब हो रही थी। साथ ही उसके कानों में आवाज़ आई,

"मेरी सुंदरी तो बोलती क्यों नहीं, मुझे तू अभी..."।

तुमसे बहुत-सी बातें करनी थीं।

"सुंदरी," या ज़्यादा प्यार के लहजे में "सुंदरां," तो वह पहले ही बचन सिंह के मुँह से सुनती रही थी लेकिन आज इसमें जो नया इज़ाफ़ा (जुड़ाव) हुआ, उसने सुंदरी के दिल को ताज़े फूल की तरह खिला दिया। इसमें सरूर (आनंद) भर दिया—ये लफ्ज़ था "मेरी"।

उसने सिर उठाकर बचन सिंह की तरफ देखा। साथ ही देखा, उसकी आँखों में, जिनमें बहुत ही संजीदा और कुछ मानी-खेज़ शीर्षक लिखा हुआ महसूस हुआ। सुंदरी उसकी आँखों में आँखें डाल कर इस शीर्षक को पढ़ने लगी। लेकिन पढ़ते-पढ़ते उसे यह भी याद न रहा कि वह बचन सिंह की आँखें पढ़ रही है या अपनी।

इस मज़मून का शीर्षक था "मोहब्बत"।

काफी देर तक ये "मोहब्बत" जारी रही। बचन सिंह ने जब अपनी कलाई की घड़ी की तरफ देखा तो वह सोचने लगा—ये डेढ़ घंटा कब गुज़र गया? घड़ी में साढ़े बारह बज चुके थे।

आख़िर यह ख़ामोश कहानी ख़त्म हुई और बचन सिंह ने दोबारा अपनी बात को दोहराया।

"सुंदरां—मुझे आज तेरे साथ बहुत सी बातें करनी थीं।"

"करनी थीं?" सुंदरी ने मुस्कुराते हुए कहा, "और अब नहीं करनी क्या?"

"रात बहुत चली गई है।"

"अच्छा, अगर आपको नींद आती है तो..."

"मुझे तो नींद नहीं आ रही, लेकिन तेरी नींद की फ़िक्र है।"

"मेरी नींद की—मुझे तो नींद आनी ही नहीं आज।"

"आनी क्यों नहीं आज?"

सुंदरी के पास कोई जवाब नहीं था।

बचन सिंह ने फिर कहा, "सुंदरी!"

"हाँ जी।"

"तुम चली जाओगी?"

सुंदरी कुछ न बोली, सिर्फ हाथ की पहली उंगली को दाँतों के नीचे आहिस्ता-आहिस्ता दबाती रही।

"सुंदरी—अगर तुझे जाना था तो आई क्यों थी?"

सुंदरी ने ठंडी साँस भर कर रह गई।

बचन सिंह ने कहा, "सुंदरी! तूने मेरी ज़िंदगी में आब-ए-हयात भर दिया है।"

वह फिर भी चुप रही। चुप होते हुए भी वह बचन सिंह की सारी बातों का जवाब दे रही थी। लेकिन ज़ुबान से नहीं, चेहरे के भाव से। ज़ुबान से भी वह जवाब देना चाहती थी लेकिन नहीं दे सकी। बचन सिंह की बात वह समझ सकती थी, समझ रही थी लेकिन अपनी ज़ुबान में वह नहीं समझा सकती थी —या यह कह लीजिए कि अपने एहसास बताने के लिए ज़ुबान उसका साथ नहीं दे रही थी, वह ख़ामोश थी।

बचन सिंह ने फिर पूछा, "सुंदरी! तुम नहीं बोलोगी क्या? अच्छा तो मैं जाता हूँ," और वह चारपाई पर से उठ खड़ा हुआ।

सुंदरी ने उसकी क़मीज़ पकड़ी और बिठाने की कोशिश करते हुए बोली, "आप आज इतनी देर से क्यों आए?"

जो सुंदरी ख़ुद ही बचन सिंह से बातें करने के लिए बे-चैन थी, वही जब मौक़ा आया तो बातों का रुख पलट कर इस मौज़ू (विषय) को ही छोड़ना चाहने लगी। इसी वजह से उसने बचन सिंह की बातों का जवाब न देते हुए और ही बात शुरू कर दी,

"आज आप देर से क्यों आए?"

असल में सुंदरी बचन सिंह के मुँह से उसी क़िस्म की बातें सुन रही थी, जिस तरह की वह ख़ुद उससे कहना चाहती थी। लेकिन कुदरत ने औरत का दिल किस क़दर कुशादा (विशाल) बनाया है, उसे कितना ज़बरदस्त बर्दाश्त का माद्दा (क्षमता) दिया है कि वह समंदर से गहरे पानी और पहाड़ों से अटल ख़यालात को अपने सीने के छोटे से कूज़े (घड़े) में बंद करके रख सकती है!

सिर्फ़ इस ख़याल से कि उसका और बचन सिंह का प्यार बे-जोड़ और नामुमकिन है, सुंदरी ने अपनी ज़ुबान पर मुहर लगा ली और दिल के न रुकने वाले तूफ़ान को गले से आने से रोक रखा। सुंदरी ने चाहे --देर से आने वाला सवाल, इसलिए किया था कि बातचीत का मौज़ू बदल जाए लेकिन बचन सिंह इस सिलसिले को कहीं और ले आया।

उसने फिर चारपाई पर बैठते हुए जवाब दिया,

"देर लगा कर आने की वजह भी सुंदरी तुम ही हो। शाम को रोटी खाकर सीधा कुएँ पर चले गया और वहाँ ऐसा तुम्हारे ख़यालों में डूब गया कि दस बज गए।"

"मेरे ख़यालों में?"

पृष्ठ 104

"हाँ सुंदरां, तेरे ही ख़यालों में।"

"यही सोचते हो कि सुंदरी को लाकर क्या मुसीबत गले डाल ली?"

"नहीं-नहीं, यह नहीं!"

"तो फिर?"

"मैं सोचता था—कल तुम चली जाओगी!"

"तो फिर?"

"सुंदरी, मैं..."

"बताइये—झिझकते क्यों हैं?"

"मैं तुमसे अलग नहीं रह सकता। मेरा दिल—"

"आप का दिल? हाँ, आप का दिल?"

"सुंदरी, तेरी उम्र छोटी है। तू प्रेम से अनजान है। अगर तू समझ सकती कि प्रेम क्या होता है तो बिना बताए ही मेरी हालत को समझ जाती।"

"मैं समझती क्यों नहीं। आप और ज्ञानी जी ने मुझे सब कुछ पढ़ाया है। फिर मैं प्रेम को कैसे नहीं जानती? मैं जानती हूँ—हर एक से हमें प्रेम करना चाहिये। गुरबाणी में लिखा नहीं है कि 'जिन प्रेम कियो तिन ही प्रभ पायो'?"

इस सीधे-सादे जवाब ने बचन सिंह को ला-जवाब कर दिया और कुछ मायूस भी। लेकिन फिर वह एक बार अपने ख़यालात का सिलसिला जारी रखते हुए बोला,

"मेरा मतलब दूसरे प्रेम से है।"

"दूसरा प्रेम?" सुंदरी ने फिर पहले की तरह हैरानी से उसकी तरफ देखते हुए कहा, "वह कैसा होता है? आपने मुझे पढ़ाते हुए तो कभी नहीं बताया।"

"ये बातें पढ़ाई नहीं, बताई नहीं जातीं।"

"अच्छा, सुकूनों का लफ्ज़..."

"नहीं पगली, नहीं—तुम तो बस..."

"तो फिर आप बताते क्यों नहीं हैं?" बचन सिंह को जब कोई जवाब न सूझा तो उसने और आसान ढंग से अपने ख़यालात का इज़हार करने के लिये कहा,

"अच्छा, इस बात को छोड़—तो बता, कल तो तुझे चली जाना है?"

पृष्ठ 105

"हाँ! बाबा ने पैगाम जो भेजा है।"

"और अगर पैगाम न भेजता तो?"

"फिर न जाती।"

"अच्छा! लेकिन वहाँ जाकर मुझे कभी याद किया करोगी?"

"क्या आप आया नहीं करेंगे?"

"नहीं।"

"नहीं?" सुंदरी ने ना-काबिल-ए-बर्दाश्त दर्द का एहसास करते हुए कहा, "क्यों? तो फिर मुझे पढ़ाएगा कौन?"

"पढ़ाने का कोई और इंतज़ाम कर दूँगा।"

"मैं किसी और से नहीं पढ़ूँगी।"

"और तुम्हें ज़्यादा पढ़ कर क्या करना है। गुरमुखी तो तुम अच्छी तरह पढ़ सकती हो। गुरमुखी तुम्हें बहुत अच्छी तरह याद है।"

"आप खुद ही कहते थे कि दसवीं तक पढ़ाऊँगा।"

"अगर तेरी और पढ़ने की मर्ज़ी हुई तो तुझे शहर में किसी लड़कियों के स्कूल में दाख़िल करवा दूँगा।"
"और आप भी वहीं जाकर रहेंगे?"

"मैं? मैं किस तरह रह सकता हूँ, घर छोड़ कर और कहीं?"

सुंदरी चुप हो गई—जैसे उसने कोई ग़लत सवाल किया था। बचन सिंह ने फिर कहना शुरू किया, "सुंदरी, तुम मेरे पास नहीं रहना चाहती हैं?"

"आपके पास—आपके पास लोग मुझे रहने देंगे?"

"अच्छा सुंदरी, तुम मुझे प्यार नहीं करतीं?" प्यार का नाम सुनते ही सुंदरी के होंठों पर मीठी-सी मुस्कुराहट आ गई और वह उसके कंधे से सर टिका कर कहने लगी,

"आप... आप..." और वह कोशिश करने के बावजूद अपना जुमला मुकम्मल न कर सकी।

लेकिन बचन सिंह को अपने सवाल का जवाब मिल गया था—सुंदरी के आँख से झलकते हुए प्रेम के बहाव ने बचन सिंह को ख़ुशी से भर दिया। दोनों प्रेमी-प्रेमिका एक-दूसरे के कहने के लिये जो कुछ अपने दिलों में लिये बैठे थे, वह

पृष्ठ 106

सब कुछ वैसा का वैसा ही था और इसे खोलने, दिखाने की ज़रूरत ही न रही। दोनों महसूस कर रहे थे कि वे असल दो नहीं एक हैं!

इसके बाद बचन सिंह ने घड़ी देखी तो ढाई बज चुके थे। उसने कहा, "अच्छा सुंदरी, अब सो जा। रात बहुत बीत गई है। ढाई बज गए हैं।"

इसके बाद उसने सुंदरी का हाथ चूम लिया। होठों के स्पर्श ने सुंदरी को इतना मदहोश कर दिया कि बचन सिंह कब चला गया उसे पता न लगा।

(20)

शाम का अंधेरा आहिस्ता-आहिस्ता हर तरफ फैलता जाता है। पौस माघ की ठंडी हवा चल रही है और दीवान पुर के बाहर एक कुएँ पर कुछ चहल-पहल है। कुआँ चल रहा है और गद्दी पर बैठा लगभग तेरह बरस का एक लड़का थोड़े-थोड़े वक़्फे के बाद "हो हो , तत्ता - तत्ता -- " कहता हुआ सफ़ेद बैलों की जोड़ी को हाँके जा रहा है। कुएँ की "रीं -रीं " की आवाज़ बड़ी दिलकश मालूम होती है।

गाँव की बहुत सी मुटियार लड़कियाँ ने अऊलू (वह जगह जहाँ से पानी गिरता है), और निसार (लोहे या लकड़ी की नाली जिससे पानी अऊलू में गिरता है) के आस पास में डेरा डाल रखा है और उनके साथ के छोटे-छोटे बच्चे नज़दीक ही बैठे कंकड़-पत्थर से खेल रहे हैं।

रहट से थोड़ा सा फासला है , कपास का एक खेत है लेकिन इस वक़्त उसे कपास का न कह कर ख़ाली कपास के सूखे पौधों यानी झाड़ियों का खेत कहना ही मुनासिब होगा क्योंकि किसी भी बूटे के साथ एक भी फूल या हरा पत्ता नहीं है। हाँ, कपास से निकले हुए ख़ाली डोडों से सारे पौधे लदे हुए हैं और हवा के झोंकों के टकराने से खड़-खड़ की आवाज़ दे रही है।

इसके नज़दीक वाले निचले खेत में मूलियों की हरी भरी क्यारियाँ पूरे जोबन पर हैं। ज़मीन से आधी बाहर निकली हुई मूलियों के सिरों पर हरे पत्तों के गुच्छे इस तरह झूम रहे हैं जैसे शहज़ादियों के सिरों पर चुनर झूल रहे हों।

सूखी कपास के खेत की गोद में यह हरियाली का हिस्सा इतना दिलकश मालूम होता है जैसे किसी बूढ़े पिता की गोद में उसकी लाड़ली बेटी खेल रही हो।

किसी वक़्त जब तेज़ हवा का झोंका लगता है तो यह मूलियों के कोमल बूटे इस तरह कपास के सूखे पौधों की तरफ झुकते हैं जैसे कोई बच्चे डर के मारे अपने बाप की तरफ हाथ फैलाते है।

पृष्ठ 107

उस वक़्त हम मूलियों के खेत के किनारे तीन आदमियों को बैठे देख रहे हैं।

क्यारी से एक नराम सी मूली उखाड़ कर उसकी मिट्टी झाड़ते हुए एक ने दूसरे की तरफ देख कर कहा, "अब इस का काम तमाम भी होगा किसी तरह कि वह इसी तरह हमारी छाती पर मूँग दलता रहेगा ?"

दूसरा बोला, "लेकिन भाई पाला सियाँ। इसमें हमारा क़सूर—तुम ख़ुद ही टाल-मटोल किए जा रहे हो। तुम्हें तो कहा था कि भई इधर या उधर वाली बात हो तो भी काम रास आ जाएगा।"

पाला सिंह: "इधर या उधर करने से क्या होगा। तुम निकम्मे ख़ुद ही किसी लायक नहीं। इस कल के छोकरे बचन सिंह को तुम ठीक न कर सके तो और तुम लोगों से क्या होगा, ख़ाक!"

तीसरा: "लेकिन जो पाला सिंह बड़े-बड़ों को मारने से कभी नहीं झिझका, वह बचन सिंह से इस तरह क्यों डरता है। मेरी समझ में तो यह बात नहीं आई।"

दोनों साथियों के तअने (ताने) पाला सिंह को तीरों की तरह चुभने लगे।

वह तैश में आकर साथियों से कहने लगा, "मैं डरता हूँ ? कसम गुरु की। अगर कभी मेरा बस चलला तो चौथे पल ही उसका हुलिया बिगाड़ कर रख दूँ लेकिन देखते नहीं कि वह सुंदरी -लड़की, उस पर किस तरह मरती है। मैं कहता हूँ, अगर वो न हो तो हम उसे बचने का काम तमाम कर दें लेकिन जिसके लिए सब कुछ किया है, वो ही बिन मौत मर गई तो। सोआया सियाँ मैं चाहता हूँ कि कोई ऐसा

ढंग सोचें जिससे एक निशाने से दो शिकार किए जाएँ। बचन सिंह का भी काम ख़त्म हो और वह परी भी क़ाबू में आ जाए।"

"वीरो-भाई और वह जो तीसरा काना खिलाड़ी है।"

"पाला- इसकी ख़ैर है। हमें तो डर है अपनी जान का। उस बूढ़े को हम क्या समझते हैं। उस को मैं हाथ की उंगलियों से मसल कर फेंक दूँगा। उसकी फ़रियाद कौन करेगा? आज मरा कल दूसरा।"

"सोआया: अच्छा अब ये झगड़े छोड़ो— अब ये बता, भला बुलाया किस काम के लिए है। बड़ी ग़ज़ब की सर्दी पड़ रही है।"

"पाला- सर्दी क्यों—सीधा क्यों नहीं कहता कि मुँह कड़वा करने को जी चाहता है।"

पाला सिंह की बात सुनकर दोनों साथी होंठों पर ज़बान फेरते हुए मुस्कुराने लगे।

पाला सिंह ने अपनी बात को जारी रखते हुए कहा, "सर्दी भी मिटा दूँगा। क़रीब डेढ़ बोतल रखी है, उस दिन की बची हुई।"

पृष्ठ 108

"डेढ़ बोतल!" उसके दोस्तों के चेहरों पर लाली आ गई।

वीर कहने लगा, "भाई! हम कब तुम से इंकारी हैं। जब तक तुम्हें दूल्हा न बना लें तब तक हम आराम से बैठने वाले नहीं?"

सोवाया: "लेकिन हमारी भाभी के आते ही कहीं वह बात न हो कि इधर कोठा बना और उधर तरखान की बात भूल गई।"

पाला सिंह ने अपने साथियों की बातें सुन कर बिना शराब पिये ही नशा तारी हो गया। वह बोला: "लड़की खेत बचा पेट । वह बीबी रानी तो अभी बचने के घर की चारदीवारी में क़ैद है और इनको भाभी के सपने आ रहे हैं।"

"कौन कहता है?" वीर सिंह ने जल्दी से कहा, "उसे तो पांच दिन हुए बूढ़ा घर ले आया है।"

"अच्छा—" पाला सिंह ने हैरानी से कहा, "चली गई होगी। तुम्हें पता ही है मैं तो आज सात दिन बाद बाहर आया हूँ।"

वीरो: "तो जब से ज़ख़्मी हुई है, उसके बाद से तुमने उसे देखा ही नहीं?"

"नहीं।"

"अब तो भाई सों कसम गुरु की, देखने वाली चीज़ है। सुंदरी का रंग ऐसा निखरा है जैसे मैदा और सिंदूर होता है और चंद ही दिनों में बढ़ी भी बेल की तरह है। तुम्हारी तो भाई किस्मत खुल जाएगी अगर मोर्चे फ़तह हो जाए तो..."

पाला सिंह: "मुझे तो उसने पहले ही दीवाना बना रखा है। अब बचा-खुचा भी खाना-हराम कर देगी और क्या... अगर तुम्हारे राज में मेरा इतना काम भी न बना तो याद रखना कि तुम दोनों के सिर चढ़ कर मर जाऊंगा।"

सोवाया: "पगलों के सर कोई सींग होते हैं भला। ये कौन सा इतना बड़ा काम है। ये तो रब ने चाहा तो चुटकी बजाते हो जाएगा लेकिन पहले बचने (बचन सिंह) की फ़िक्र करो। बचने के होते हुए वह क़ाबू नहीं आएगी।"

पाला: "लेकिन सोवाया सियाँ, तेरा क्या ख़याल है? बचने उससे शादी कर लेगा?"

वीरो: "तो क्या ऐसे ही पढ़ा-पढ़ा कर ज्ञानी बन रहा है?"

पाला: "लेकिन मुझे तो हैरानी इस बात की है कि बचने को क्या कमी है लड़कियों की ? बारह जमात (कक्षा) पढ़ा हुआ है। सुना है उस को बड़े-बड़े सरदारों के यहाँ से रिश्ते आ रहे हैं। वह भी मेरे जैसे एक-तन्हा के लायक है जिस बेचारे का कोई आगे-पीछे नहीं है।"

पृष्ठ 109

सोवाया: "बात तो भाई तुम्हारी सच्ची है लेकिन कहने पर न कोई गठरी नहीं उठाता न। अब तो खुले मैदान का मुकाबला है, जो जीते सो पाए।"

वीर: "तुमने तो जवान फ़ज़ूल बकवास में ही सारा वक़्त ज़ाया कर दिया। काम की कोई बात करनी है तो करो। मेरी तो घुटने से टांगें भी अकड़ी हुई हैं।"

सोच-सोच कर पाला सिंह कहने लगा: "मेरी सलाह है, बचने को किसी मुक़दमे में फंसाया जाए। बस फिर तो तली पर ही सरसो जमेगी।"

वीरो: "मेरा भी यही ख़याल है।"

सोवाया: "मेरा भी यही ख़याल है, बल्कि मैं तो तुम लोगों से कहने वाला था—लेकिन बूढ़े को?"

इसके बाद पाला सिंह ने बारी-बारी दोनों के कानों से मुँह जोड़ कर कुछ कहा। थोड़ी देर फिर खुसुर फुसुर होती रही और फिर तीनों किसी फ़ैसले पर पहुँच कर एक तरफ को चल दिए।

(21)

सुंदरी को बचन सिंह के घर से गए काफी दिन हो चुके हैं और इन दिनों में बचन सिंह का बाबा रोडू के घर आना-जाना बराबर जारी रहा था, जिस की वजह से सुंदरी की पढ़ाई भी अच्छी तरह हो रही थी।

आज जब दोपहर को बचन सिंह कुएँ से घर आया तो माँ को उसने बहुत उदास पाया। जब बचन सिंह ने इस की वजह पूछी तो सदा-कौर ने ठंडी साँस भर कर कहा,

"क्या बताऊं बेटा, तुम से क्या छिपा है?"

"तब भी क्या बात है माँ?"

सदा-कोर: "बेटा तुम देखते नहीं—यही घर है जिस में आठों पहर लोगों का आना-जाना रहता..."

पृष्ठ 110

था। और आज कोई इधर रुख ही नहीं करता। आज सुबह सरने का लडका होशियारपुर से छपी आया था। दरवाजे के सामने से गुजरता हुआ मुझे लस्सी पिलाने के लिए अंदर आ गया। मुझे क्या पता था। लस्सी का कटोरा लाकर दे बैठी। लस्सी पीकर वह घर चला गया। बाहर दरवाजे में से किसी ने उसे लस्सी पीते हुए देख लिया। घर जाते ही सारे उसके पीछे पड़ गए कि तूने उनके घर की लस्सी पी? उनके साथ जात-बिरादरी में से कोई मिलता-जुलता ही नहीं। फिर क्या, ब्राह्मण के घर से गंगा जल मंगवा कर उसे पिलाया गया, तब जाकर वह अपनी रसोई में दाखिल हुआ।"

बचन सिंह अपने बारे में लोगों के रंग-ढंग का कई दिनों से देख रहा था। अब कुछ लोगों की ज्यादती और उस पर माँ के दुख को महसूस करके उसके दिल पर गहरी चोट लगी। लेकिन बिना हौसला दिखाते हुए बोला,

"तो माँ फिर क्या करें? हमें कौन सा किसी के घर खाने जाना है।"

"खाने को तो काका कहीं नहीं जाना। लेकिन आदमी, जात-बिरादरी में ही अच्छा लगता है। जो मजे-कूँज को कतार में सब के साथ आकर आता है वह अलग रहकर नहीं आता। मरना-जीना, दुख-सुख, आदमी के साथ है, जहां आदमियों से काम चलता है, वहां पेड़ों से काम थोड़ी होगा। अभी तो खैर से

तेरी भी सब कुछ करना-धरना है। कहां तो नए से नए रिशते ल ल कर लोगों ने हमारे घर की दहलीज घिस दी थी और अब कोई हमारे दरवाजे की तरफ देखता भी नहीं। बताओ—अब मैं किस तरफ जाऊं?"

बचन सिंह अब तक मामूली तौर पर अपने ख्याल के मुताबिक सब कुछ कर रहा था। लेकिन माँ के दिल को इतनी चोट लगी है, इस बात को आज ही समझ सका। माँ की बातों का क्या जवाब देता? उसके पास कोई जवाब नहीं था।

इधर-उधर देख कर वह बोला, "फिर अब क्या करना चाहिए?"

"करना क्या है। बिरादरी को छोड़ कहीं नहीं जा सकते। उस कलंदरों की लड़की के बिना हमारा क्या नुकसान हो जाएगा। वही तो सब मुसीबतों की जड़ है। न वह इस गांव में आती और न हमारे लिए ये मुसीबत खड़ी होती।"

बचन सिंह तैश में आकर बोला, "माँ, उस बेचारी गरीब के सर इल्जाम थोपने से क्या फायदा? अगर एक गरीब लाचार लड़की की जान बचाना भी इतना बड़ा गुनाह है जिस के लिए ये सजा दी जा रही है तो (जोश में), सौ बार ऐसी सजाएं भुगतने को तैयार हूं।"

माँ ने जब बेटे को आपे से बाहर होते हुए देखा तो उठ कर घर के धंधे में

पृष्ठ 111

लग गई। और बचन सिंह भी मिजाज ठीक करने के लिए घर से बाहर निकल गया। आखिर घूमता हुआ फिर बाबा रोडू की झोपड़ी की तरफ जा निकला। जाकर देखा। रोडू वहां नहीं था और सुंदरी किसी गहरी फिक्र में पसीने में तर थी।

बचन सिंह ने दरवाजे में खड़े होकर आवाज दी, "सुंदरी!"

चौंक कर सुंदरी बोली, "हां जी!"

"आज कौन सी गहरी सोच में अर्क (पसीने) में हो?"

"आप आ गए—मैं आप ही का इंतजार कर रही थी।"

बचन सिंह ने जब उसके मुंह की तरफ देखा तो वह समझ गया कि सुंदरी रो कर बैठी है।

उसने बेकरारी से पूछा, "सुंदरी मालूम होता है तू रोती रही है।"

सुंदरी ने कोई जवाब न दिया। बचन सिंह की बेताबी और बढ़ गई।

उसने फिर पूछा, "अगर तुम कुछ हर्ज समझती हो तो नहीं पूछटा लेकिन..."

"आप को बात बताने में क्या हर्ज है," सुंदरी ने जबरदस्ती मुस्कुराने की कोशिश करते हुए और बचन सिंह की तरफ देखते हुए कहा, "हमारी लच्छो गुम हो गई है।"

"गुम हो गई? वह किस तरह? वह तो कभी कहीं जाने वाली नहीं थी। खुली फिरती रहती थी।"

"क्या पता," ठंडी सांस भर कर सुंदरी ने कहा, "जाने वाली तो नहीं थी लेकिन कोई ले ही गया। रात से नहीं मिल रही। बाबा ने रात से खाना नहीं खाया और सारी रात रोता रहा। सुबह से ढूंढने निकला है और..."

"हां और क्या?"

"बाबा—आप के घर जा रहा था लेकिन मैंने उसे नहीं जाने दिया। मुझे मालूम था आप आएंगे।"

"क्यों?" बचन सिंह ने पूछा, "कोई जरूरी काम था?"

सुंदरी के चेहरे पर फिर उदासी छा गई। उसकी आंखें भर आईं। बचन सिंह का दिल डबडब आने लगा। उसने जेब से रुमाल निकाल कर उसकी आंखों से आंसू पोंछते हुए कहा, "सुंदरी हम यहां से चले जाएंगे।"

"चले जाएंगे?" हैरानी से उसकी तरफ देख कर बचन सिंह ने पूछा, "कहां?"

"किसी और बस्ती में जाकर रहेंगे।"

पृष्ठ 112

"लेकिन क्यों?"

सुंदरी रुमाल के कोने को उंगली से लपेट रही थी, जैसे इस शगल में मसरूफ रहकर वह अपने दिल के दर्द को भूल जाना चाहती थी। उसने क्यों का जवाब देने के लिए सर ऊंचा उठाया लेकिन बात उसके गले में ही फंस कर रह गई।

बचन सिंह ने उसके हाथ की उंगली पकड़कर आहिस्ता से झिझकते हुए कहा,

"बता सुंदरी, जल्दी बता?"

"नहीं—रहने नहीं देते? हमारे साथ रोज़ शरारत करते हैं।"

बात का मतलब बचन सिंह अब भी पूरा नहीं समझा था लेकिन अब उसमें इससे ज्यादा सुनने की हिम्मत नहीं थी।

सुंदरी की तवज्जो दूसरी तरफ दिलाते हुए बोला, "लेकिन तुम्हारी बंदरिया को जाकर किसी को क्या करना था?"

सुंदरी ने भी शुक्र किया कि उसे और कुछ न कहना पड़ा। वह बोली, "क्या पता क्या करना था।"

इसी वक्त बाबा रोडू अंदर आया। बचन सिंह के आगे झुक कर उसने फ़तह बुलाई और एक तरफ हो कर बैठ गया। उसने पूछने पर कि बंदरिया का पता लगा या नहीं, रोडू ज़ोर से रो पड़ा और उसके मुँह से कोई बात न निकली।

सुंदरी जल्दी से उठी और उसके गले में बाज़ू डाल कर घबराई हुई बोली, "ये क्या बात है बाबा?"

"सुंदरी," रोडू ने धोती के पल्लू से आंसू पोंछते हुए कहा, "सुंदरी, तेरी लच्छो मर गई।"

"मर गई," सुंदरी ने चीख मारी और झिंझोड़ती हुई बोली, "ये किस तरह मर गई बाबा?"

"किसी ने उसे कुएँ में फेंक दिया।"

"हाए, हाए—कुएँ में? मैं मर गई!"

जिस तरह एक ही दूरबीन से कोई दो चीजें देखता है, इसी तरह बचन सिंह एक ही दिल से दोनों के दर्द को महसूस कर रहा था। दोनों रो रहे थे।

थोड़ी देर रोने के बाद जब बूढ़े का दिल कुछ हल्का हुआ तो हाथ जोड़कर बचन सिंह से कहने लगा,

"सरदार जी! आप ने हम पर बहुत करम किए हैं। आप के अहसानों का बदला मैं सौ बार जन्म लेकर भी नहीं

पृष्ठ 113

चुका सकता। मेरी बच्ची को आप ने जानवर से आदमी बना दिया। फिर उसकी जान बचाने के लिए अपने सर आप ने जो कुछ झेला है उसके लिए मैं किस ज़बान से शुक्रिया अदा करूँ। दिल तो यही चाहता था कि आप के चरणों में ही जहाँ इतनी ज़िंदगी गुज़ारी है, वहाँ बाकी के चार दिन भी काट लूँ लेकिन मालूम होता है, दाना पानी हमें यहाँ और नहीं रहने देगा। हमें ख़ुशी से इजाज़त दीजिए कि किसी और जगह चले जाएँ।"

बचन सिंह के दिल पर जैसे तीर बरस रहे थे, उसका कलेजा मुट्ठी में आ गया। वह बोला, "लेकिन बाबाजी क्यों?"

"सरदार जी, क्या बताऊं—(सुंदरी की तरफ देख कर) इस लड़की को मैंने बड़े दुखों से पाला है। मुट्ठी में पकड़ कर, चिड़िया के बच्चे जितनी थी , जब मैं इसे लाया था।"

इसके बाद उसने सुंदरी की किस तरह सारी दर्दभरी कहानी कही और फिर बोला, "मुझे नहीं मालूम कि सगी औलाद के साथ लोगों की किस तरह की मोहब्बत होती है लेकिन मेरे दिल में इसके लिए जो मोहब्बत है वह कहने से बाहर है। जब यह नादान थी तब मुझे इसके पालने-पोसने की ही फ़िक्र थी लेकिन अब तो आप जानते हैं, इसकी उम्र की बच्ची वाली नहीं। और मैं सरदार जी, ठहरा एक कमीन (नीच) मंगता (भिखारी) । गलियों के तिनकों में हिलने-जुलने की ताकत होगी लेकिन मुझे नहीं है। मैं कहता हूँ, मैं किसी का क्या बिगाड़ लूँगा।"

वह फिर सिसक-सिसक कर रोने लगा। फिर बोला, "कई महीनों से मैं देखता चला आ रहा हूँ कि गाँव के लोगों का सलूक हम से अच्छा नहीं है। रात को कई जवान इकट्ठे होकर झोंपड़ी के गिर्द घेरा डाले आवाज़ देते रहते हैं और फिर आप का भी नाम ले लेकर..."

बचन सिंह से उसकी माँ ने जो बातें कही थीं, उनको वह खुद ही दुखी था और इस मुसीबत का हल सोच रहा था लेकिन रोडू का हाल सुनकर वह अपने दुख भूल गया।

काफी देर वह ग़लतफ़हमी में रहा। फिर बोला, "मुझे ये सुनकर बड़ा दुख हो रहा है, लेकिन समझ में नहीं आता कि इसका इलाज क्या किया जाए। अच्छा तो फिर आप ने क्या सोचा है?"

"चले जाने का," रोडू ने आंखें पोंछते हुए कहा, "सरदार जी! क्या बताऊं—अगर सुंदरी की फ़िक्र न होती तो मरते दम तक यहाँ से न जाता। इस जगह से और इस तिनकों की झोंपड़ी से मुझे बहुत प्यार हो गया है। इसको छोड़ते वक़्त पता नहीं मेरा क्या हाल होगा। लेकिन क्या करूँ? जवान लड़की के दरवाजे पर हो तो फिर बताइए आदमी से किस तरह बातें बर्दाश्त..."

हो सकती हैं। और फिर इसकी भी कोई फिक्र करनी ठहरी । आखिर रूड़ी का कूड़ा, सरदार जी कूड़े पर फेंकना ही है न।"

कुछ देर ठहर कर रोडू फिर बोला, "और सरदार जी—इस हीरे को मैं रूड़ीयों के कूड़े में बंद कर दूं, ये भी मुश्किल बात है। आपकी मेहरबानी से इतनी पढ़ी लिखी लड़की कलंदरों या बाजीगरों के घर जाए

ये मुझसे कैसे बर्दाश्त होगा। मैं तो चाहता था, जैसी सुंदरी है वैसा ही इसके लिए मिले। लेकिन ऐसी किस्मत कहां?"

बचन सिंह इस वक्त कुछ और ही सोच रहा था। आखिर वह किसी नतीजे पर पहुँचने के बाद बोला, "बाबाजी! मैं आप को नहीं जाने दूंगा।"

रोडू ने कोई जवाब नहीं दिया। बचन सिंह फिर बोला, "सुंदरी को कुदरत ने इस तरह खाक छानने के लिए नहीं बनाया। मैं चाहता हूं ये अभी और पढ़े लिखे।"

रोडू ने यह बात इस तरह सुनी जैसे उम्रकैद पाने वाले मुजरिम से कोई वकील यह कहे कि मैं तुझे बरी कराने का ज़िम्मा लेता हूं। वह धड़कते दिल से बोला, "सरदार जी! आप ने पहले कौन सी कमी छोड़ी है। हमारे लिए आप को कौन सी मुसीबतें देखनी पड़ी हैं। आप की ज़िंदगी और इज़्ज़त कायम रहे और आप फलें फूलें। लेकिन मेरे लिए आप क्यों फिक्र और परेशानी में पड़ते हैं। मेरी किस्मत में तो जो लिखा है बर्दाश्त कर लूंगा। आप कोई फिक्र न कीजिए और हमें जाने दीजिये।"

बचन सिंह एतमाद से बोला, "लेकिन बाबाजी! मैं लोगों का यह जुल्म बर्दाश्त नहीं कर सकता।"

खुश होते हुए रोडू ने कहा, "जो आप को अच्छा लगे। मैं तो..."

"लेकिन जो हाल आप सुन चुके हैं। वह..."

सुंदरी जवाब तक चुप बैठी थी इस तरह बचन सिंह की तरफ देखने लगी कि जैसे ज़िंदगी से ना उम्मीद बीमार को कोई ज़िंदगी बख्श दे। उसने मुस्कुराते हुए बचन सिंह की तरफ देखा और बचन सिंह भी उसी तरह जवाब दे कर वहां से चला गया।

पृष्ठ 115

(22)

बाबा रोडू की बात सच निकली।

सारा अंदेशा सुंदरी की मौजूदगी से ही था। जिस दिन से सुंदरी दीवान पुर से गई है हर तरह का ज़िक्र तकरीबन खत्म हो गया है। लेकिन पाला सिंह के दिल पर बड़ी चोट लगी है। कहाँ तो वह सुंदरी को उड़ा ले जाने और बांध कर रखने की तरकीबें सोच रहा था और कहाँ सुंदरी का साया देखने को भी तरस गया।

पाला सिंह के दिल में पहले ही बचन सिंह के खिलाफ आग भड़क रही थी अब तो वह और भी दहक उठी क्योंकि वह समझ रहा था कि बचन सिंह ने इसका शिकार छीन लिया है। वह और सब कुछ भूल गया सिवाय इसके कि किस तरह सुंदरी को वापस लाया जाए। लेकिन किस तरह लाया जाए? हजारों तरफ सोच के घोड़े दौड़ाने पर भी इसके लिए कोई रास्ता न सूझा।

आखिर सोच-सोच कर वह इस नतीजे पर पहुंचा कि जब तक बाबा रोडू और बचन सिंह पर कोई बड़ी मुसीबत नहीं पड़ती तब तक सुंदरी का पढ़ाई छोड़ कर आना या इसके जाल में फंसना मुश्किल है।

आहिस्ता-आहिस्ता उसने अपनी कोशिश जारी रखी लेकिन इस कोशिश का नतीजा निकलने में थोड़ी मुद्दत नहीं बल्कि तीन साल लग गए।

सुंदरी को लाहौर के एक कन्या आश्रम में दाखिल करा कर बचन सिंह सोचने लगा कि न सिर्फ उसके सर से जिम्मेदारियों का बोझ हल्का हो गया है बल्कि वह कई और आने वाली मुसीबतों से भी बच गया है। लेकिन अंदर ही अंदर इसके मुखालिफ (विरोधी) क्या कर रहे थे और क्या सोच रहे थे इसका उसे कुछ इल्म नहीं था।

सुंदरी का अलग होना बचन सिंह को ऐसा लग रहा था जैसे उसकी दुनिया में से कोई चीज़ गुम हो गई है।

वह हर महीने सुंदरी की पढ़ाई का खर्च भेज देता और साथ ही बाबा रोडू का ख्याल भी रखता था। रोज़ एक आध बार उसकी झोंपड़ी में पल दो पल जा बैठता और इधर उधर की बात चीत से सुंदरी के हिज्र (वियोग) में तड़पते हुए रोडू का दिल बहलाया करता, वक्त का चक्कर अपनी रफ़्तार से चलता रहा।

****

सुंदरी ने पूरे तीन बरस अपनी पढ़ाई जारी रखी और इसके बाद दसवीं का इम्तिहान पास करके इसके वापस दीवान पुर लौटना पड़ा। वह किस तरह और क्यों आई; ये तीन बरस दोनों महबूब और महबूबा के लिए किस तरह गुज़रे; इसका हाल उनकी तहरीर करदा चिट्ठियों से मालूम होगा। इन बहुत से खतों से जो मुख्तलिफ वक्तों में एक दूसरे को भेजते रहे थे, ये सच्चे और आतिश ए प्यार में डूबे हुए ख़त लुत्फ़ से खाली नहीं हैं। यही वजह है कि हम अपने नावल की कहानी को आगे बढ़ाने।

पृष्ठ 116

से पहले इन खतों को अपने पाठकों के सामने रखना जरूरी समझते हैं। हमारे कुछ पाठकों को ये चिट्ठियाँ शायद बेकार मालूम हों। ऐसे दोस्तों से हम यही कहेंगे कि वे कुछ पन्ने बिना पढ़े भी आगे बढ़ सकते हैं लेकिन हमारे लिए ये नामुमकिन है कि हम दो प्रेमियों के खतों को बिना पढ़े ही छोड़ दें जिनमें न सिर्फ उनकी रूह समाई हुई है बल्कि प्यार के वो वलवले (उत्साह) और जज्बे इन चिट्ठियों में से फूट कर निकलते हैं जिनका इंसानी दिलों पर गहरा असर पड़ता है।

(पहला खत)

कन्या आश्रम, लाहौर

सत्कारयोग्य! मेरे...

उस्तानियाँ सब ही मुझ पर जान छिड़कती हैं। जमात की लड़कियाँ मुझसे बहनों सा प्यार करती हैं। बोर्डिंग की सुपरिटेंडेंट तो एक पल भी मुझे आँखों से ओझल नहीं होने देती। किसी बात की तकलीफ नहीं, लेकिन सब कुछ होते हुए भी दिल की परेशानी लम्हा-ब-लम्हा बढ़ती जाती है। कुछ भी अच्छा नहीं लगता। जी सुनसान सा लगता है। दिल को कुछ इस तरह महसूस होता है जैसे कोई चीज़ गुम हो गई है और अंदर की सारी ताकतें उसे ढूंढने में मशरूफ हैं। क्या आप मुझे बता सकेंगे कि ये क्यों होता है और ये हालत दूर करने के लिए मुझे क्या करना चाहिए?

दिल हर वक़्त डूबा डूबा सा रहता है लेकिन इस वक्त जब मैं खत लिख रही हूँ, दिल को बहुत ढाढ़स सी है और ये जी चाहता है कि इसी तरह लिखती चली जाऊं लेकिन फिर कुछ रुक-रुक जाती हूँ। आप के खत का इंतज़ार बड़ी बेसब्री से करती हूँ। बाबा को मेरी तरफ से सत श्री अकाल! और आप से ये कहने की ज़रूरत ही नहीं कि इस संसार में रोडू के बाद आप के अलावा और कोई नहीं है। **—सुंदरी**

(दूसरा खत)

दीवानपुर

सुंदरी जी! आप का भेजा हुआ खत ठीक उस वक्त मिला जब मैं आप की फिक्र में डूबा हुआ था। किस तरह की फिक्र? बना नहीं सकता। खत पढ़ कर दिल को खुशी या क्या महसूस हुआ, नहीं कह सकता—

बल्कि मैं इस बात को खुद भी नहीं समझ सका। अपनी जो हालत आपने अपने खत लिखने से पहले बयान की है, पढ़ते वक्त मेरी हालत भी शायद वैसी ही थी। हाँ, दिल को दुख ज़रूर हुआ जब आप की उदासी का जिक्र पढ़ा। ये कोई नई बात नहीं। नई जगह, अपनों की याद उदास कर ही देती है, और फिर जिसने उम्र तक घर से बाहर कदम न

पृष्ठ 117

निकाला हो उसका नई जगह पर उदास हो जाना एक कुदरती बात है। उम्मीद है बहुत जल्द आप दीवानपुर की गलियों को भूल जाएंगी और फिर आप के मन में प्यार की मोहब्बत भी कोई मामूली बात नहीं, आप की उदासी की वजह से आप की ऐसी हालत न होती—!

फिर भी इतनी ताकीद ज़रूर करता हूँ कि खूब दिल लगा कर पढ़ना

और सुंदरी जी! अब आप बच्ची नहीं है अपने फायदे और नुकसान को समझ सकती हैं। मैं चाहता हूँ कि जल्द से जल्द तालीम से फुर्सत पा जाएं ताकि जब कल को आप किसी घर में जाएं तो उन को भी आप की मौजूदगी से सच्ची खुशी मिले और आप को हासिल करने वाला ये देख कर फुले न समाए कि सुंदरी सिर्फ हुस्न की देवी ही नहीं, इल्म और अक्ल की भी मूरत है—! आप के बाबाजी राज़ी खुशी हैं। किसी बात की फिक्र न करें। **—बचन सिंह**

(तीसरा खत)

कन्या आश्रम, लाहौर

बड़े इंतज़ार के बाद आप का खत मिला। मुझे उस का इंतज़ार इसी वक्त से था जब से मैंने अपना खत डाक में डाला था। क्या बताऊं कि आप का खत पढ़ कर मेरा दिल कैसा हो रहा है। जब खत लिखने बैठी थी तो ये ख्याल था कि आज कई वरक (पन्ने) काले करके रख दूंगी लेकिन जब लिखना शुरू किया है तो जो कुछ लिखने लगती हूँ वो लिखा नहीं जाता। पता नहीं क्या चीज़ कलम को थाम लेती है। कई कागज़ लिखे और कई फाड़ दिए।

आप को मेरी फिक्र? और फिर आप बता नहीं सकते कि काहे की फिक्र, लेकिन मैं कोई अनजान नहीं। जैसा कि आप ने खुद ही लिखा है कि तू बच्ची नहीं है। एक बेसहारा लड़की की जान बचाने के लिए और फिर ये कि उसे जहालत के अंधेरे से निकाल कर इल्म की रौशनी और ऊंची गद्दी पर बिठाने के

लिए आप ने जो मुसीबतें उठाई हैं, उनका बदला चुकाना तो दूर रहा, उनका शुक्रिया अदा करना भी मेरे लिए मुहाल है और फिर आप के ही आगे ?

आप ने जितने खतरों में से मुझे निकाला है उन से दस गुना खतरों में आप खुद घिर गए हैं, अभी और पता नहीं क्या-क्या मुसीबतें आप के सर पर आएं। क्या मैं इन सारी बातों को समझ नहीं सकती? ये हालत होते हुए भी अगर आप को फिक्र होगी तो किस को होगी। मैं जब इन बातों के बारे में सोचती हूँ तो यही जी चाहता है कि धरती माँ मुझे अपने में छुपा ले और मैं आप के दुखों और फिक्रों को हमेशा के लिए खत्म कर दूं लेकिन क्या करूं, मैं ढीठ बन कर जी रही हूँ।

आप ने जो लिखा है कि नई जगह होने की वजह से मेरा दिल उदास है, ये गलत है। जिस जगह भी आप का साया मेरे सिर पर होगा, वो चाहे आतिश फ़शां की चोटी ही क्यों न हो, मेरे लिए स्वर्ग है। मैं आप को यकीन दिलाती हूँ कि मेरी उदासी

पृष्ठ 118

की वजह ये नहीं है।

ये क्या लिखा आपने कि दीवानपुर की गलियों को भूल जाऊंगी? मुझे माफ़ कीजिए, ये बात जानबूझकर आपने मेरे दिल की गहराई नापने के लिए लिखी है। दीवानपुर की गलियाँ तो मैं इस जन्म में तो क्या, सौ जन्मों में भी नहीं भूल सकती। धर्म पिता की मोहब्बत कोई मामूली चीज़ नहीं, लेकिन... आप के खत की आखिरी सतरें पढ़कर दिल डूबने सा लगा है। ब्याह के बारे में मैंने आज तक कभी नहीं सोचा। क्या मुझे वो दिन देखना होगा जब मेरी सारी उम्मीदों का खून हो जाएगा? लेकिन मैं आप को यकीन दिलाती हूँ कि मैं उस वक्त आने से पहले ही इस दुनिया में नहीं रहूंगी। क्या इस बदकिस्मत पर इतनी मेहरबानियां इसीलिए करते हैं कि उसे ज़िंदा ही भट्टी में झोंक दें? आह! इस सिलसिले में लिखने के लिए तैयार हो गई हूँ लेकिन होश अभी कायम है—ऐसी हिमाकत नहीं करूंगी। खत यहीं पर खत्म करती हूँ।

—सुंदरी

(चौथा खत)

सुंदरी जी!

आप का खत मिला—मेरी हिमाकत ने आप के दिल को इतना दुख दिया है, इस ख्याल से मैं इस वक्त पानी पानी हो रहा हूँ। आज तक मेरा ही ख्याल था कि मैं कितना गैरमुनासिब और गैरमज़हब काम कर रहा हूँ। मेरा दिल कैसी उल्टी तरफ जा रहा है कि जिस फूल को मैंने किसी और के लिए इसलिए नहीं तोड़ने दिया, कि ऐसा करने से उसकी खूबसूरती ज़ाया हो जाएगी, जिसे बोने को सींचने और उसकी रखवाली करने के लिए मैंने सारा ज़ोर लगा दिया, उस फूल की महक ने मुझे इस कदर दीवाना बना दिया कि मैं उस पर अपना हक जमाने के लिए ही तैयार हो बैठा।

सुंदरी जी! इंसान का दिल किस कदर गैर-यकीनी और चंचल है, जो एक वक़्त में तो आसमान पर परवाज़ कर रहा होता है तो दूसरे वक़्त पांव में गिरा हुआ होता है। असल में इस दिल की कमज़ोरी को मैं आप से छुपाना चाहता था। आप से नहीं बल्कि खुद से भी, और वजह है कि मैं आप को जो कुछ लिखता था, अपनी छाती पर पत्थर रख कर लिखता था। इस के लिए आप मुझे ज़हीन समझें और यही फर्ज कर लें कि आप का किसी गैरमज़हब आदमी से वास्ता पड़ गया है। मेरा अब तक यही ख्याल था कि मैं अपने दिल के महसूसात को कभी आप पर ज़ाहिर नहीं होने दूंगा और अपनी सारी ताकत खर्च करके आप के रास्ते का रोड़ा नहीं बनूंगा लेकिन सबसे बड़ी फिक्र ये थी कि कहीं मैं उसूलों से गिर जाऊं और सारे किए धरे पर पानी फिर जाए। इसी फिक्र में मैंने खतों में किया था, जिसका मतलब आप कुछ और निकाल लिया।

पृष्ठ 119

बाकी जो आप मेरी तरफ से कोई मेहरबानी समझकर अपने दिल को नाखूश (असंतोष) किए बैठी हैं, मैं समझता हूँ ये आप मेरे साथ सख्त नाइंसाफी कर रही हैं। आप की इस गलती को मैं कभी माफ़ नहीं करूंगा। क्या मैंने आप के साथ जो कुछ किया है वह इंसानी फर्ज से कुछ ज़्यादा था?

लेकिन सुंदरी जी! अब जब मैं देखता हूँ कि जिस चीज़ को हासिल करने के लिए मैं बेचैन हो रहा हूँ और वो चीज़ खुद-ब-खुद मेरी तरफ खींची चली आ रही है। यही नहीं बल्कि मेरे पीछे हटने के सच्चे या झूठे तसव्वुर से ही उस के सब खत खत्म हो जाने का खतरा है तो क्यों न आप के सामने अपने आपको असली रूप में ज़ाहिर कर दूँ।

सुंदरी जी! आप की खूबियों ने तो मेरे दिल में उस दिन ही घर कर लिया था जिस दिन मैंने आप को गुरुद्वारे के बाहर ज़मीन पर हरफ लिखते देखा था, लेकिन अब तो आप की रूहानी अज़मत और सीरत के भी सारे पहलू एक-एक करके मेरे दिल पर आहिस्ता-आहिस्ता कब्ज़ा जमा चुके हैं। इस लिए अब तो कोशिश करने के बावजूद भी मैं आप से दूर नहीं रह सकता। लेकिन ये सब कुछ होते हुए भी एक ऐसी रुकावट हम दोनों के रास्ते में है, जिस का ख्याल करके मैं सोचता हूँ कि क्या कुदरत को

हमारा साथ मंजूर नहीं? और हम दोनों को एक-दूसरे से अलग ही रहना पड़ेगा? क्या ये मुनासिब न होगा कि इस रास्ते पर आगे बढ़ने की बजाय हम अभी से पीछे हटने की कोशिश करें—!!!

आप का, बचन सिंह

(पांचवां खत)

मेरी दौलत-ए-जां!

आप के साथ मैंने इस ज़िंदगी को एक नए सांचे में ढाल दिया है। जो कुछ इस बार आप ने लिखा है ठीक उसी तरह का मज़मून मैंने अपने खत में कल शाम को लिखा था। मेरा ख्याल है जिस वक्त आप ये खत लिख रहे होंगे, ठीक उसी वक्त मैं भी यही कुछ लिख रही थी। जिस वक्त आप के दिल का शीशा अपने असली रंग में ज़ाहिर होकर कागज़ पर अपनी श्वायें (किरणें) डाल रहा था। उस वक्त मेरे दिल की नदी भी अपने किनारों से ऊपर चल रही थी। सारे शक सारी बेचैनियां और सारे वहम इसमें बह रहे थे और बाकी रह गए थे दिल के पाक व पुर-महसूसात!

मैं आप को क्या लिख रही थी, सुनना चाहते हैं? तो लीजिये मैं बताती हूँ। मैं लिख रही थी और खत के जवाब का इंतज़ार करने से पहले लिख रही थी।

मेरे मालिक! मैं नहीं बर्दाश्त कर सकती कि आप से धोखा करूं कि दिल में कुछ हो और ऊपर से कुछ और कह कर दिखाऊं। ये मैं गुनाह कर रही थी लेकिन अब नहीं करूंगी। दुनिया में एक आप ही हैं जिस को मेरे दिल ने प्यार किया है।

पृष्ठ 120

इस की शुरुआत कब हुई इसका मुझे कुछ पता नहीं, लेकिन इतना जानती हूँ कि इस दिल में अब किसी और के लिए जगह नहीं, न ही कभी इस जन्म में होगी—लेकिन मैं पहाड़ की जिस ऊंची चोटी पर चढ़ने के लिए तरस रही हूँ क्या वहां तक मेरी पहुंच भी है? इस बात को भी अच्छी तरह जानती हूँ और ये भी जानती हूँ कि वहां पहुंचना तो दूर, वहां पहुंचने का तसव्वुर (कल्पना) करना भी मेरे लिए अनहोनी बात है—!

लेकिन ये सब जानते हुए भी मैं मायूस नहीं हूँ, मुझे एतमाद (विश्वास) है कि जहां मेरा दिल पहुंच चुका है, जहां मेरे हर एक सपने, मेरे हर एक एहसास और हर एक सांस का मरकज़ (केंद्र) वाकया है,

वहां अगर मेरा जिस्म न पहुंचे तो बेशक न पहुंचे, मैं जिस्मानी दूरी पर बैठी भी उस चमन की बागवानी की खुशबू से ही खुद को चंदन बना सकती हूँ। ये है मेरी इस खत का निचोड़!

क्या कहा? हमारे दरमियान रुकावट? नहीं प्रीतम मैं इस बात को नहीं मानती। रुकावट यही न कि ब्याह... ओ मेरे भोले प्रीतम, इस बात को दिल से निकाल दीजिये। इस बात का जवाब तो आप को मेरे ऊपर के जुमलों से ही मिल गया होगा लेकिन इतना और कहती हूँ कि आप अपनी शादी ज़रूर कर लीजिये। बल्कि मैं आप को मजबूर करूँगी कि जल्दी से जल्दी घर का दरवाज़ा खोलिये और माता जी की पुरानी ख्वाहिश पूरी कीजिये। आप के ब्याह की खबर सुन कर मुझे कितनी खुशी होगी इसका जवाब वक्त ही देगा—!

आप की सुंदरी

(छठा खत)

सुंदरी जी!

मैं किस कदर खुश किस्मत हूँ कि आप जैसी महान देवी की मोहब्बत को जीत सका हूँ। मेरी अंधेरी दुनिया को सुंदरी जी आप के पाक एहसास ने, आप के ऊंचे ख्यालात ने और आप की सच्ची मोहब्बत ने जगमगा दिया है। मुझे ऐसा मालूम होता है कि मेरे अंदर किसी मीठी रागनी का अनोखा आलाप हो रहा है जिस ने दिल की हर एक को छेड़ कर मेरे रोम-रोम में कभी न खत्म होने वाली गूंज पैदा कर दी है। आप के खत का एक-एक लफ्ज़ मेरे लिए स्वर्ग की फुलवारी का एक एक फूल होता है जिस ने मेरे दिल व दिमाग को इतना महका दिया है कि इस के मुकाबले में मुझे दुनिया के सारे ऐश और आराम तुच्छ मालूम होते हैं।

सुंदरी जी! आप के ख्यालात इतने ऊंचे हैं कि आप के तसव्वुरात (कल्पनाओं) में कायनात का सारा प्रेम बसा हुआ है और आप के नन्हे से दिल में कुर्बानी का इतना बड़ा जज़्बा! ये बात मुझे मालूम नहीं थी।

आप ने मेरा मतलब गलत समझा है। मैं ने जो लिखा था कि हम दोनों के दरमियान एक बहुत बड़ी रुकावट है, वो रुकावट दूसरी है। और ये जो जात-बिरादरी के डर की वजह से आप के साथ ब्याह न करना, इस तसव्वुर को मैं कब का छोड़ चुका हूँ। मेरे इस तरह लिखने का मतलब था कि मैं आप जी के उम्मीदों और अपने फ़रायज़ (कर्तव्यों) को सामने रख कर अपने दिल में एक कस्म खा चुका हूँ कि अपनी सारी ज़िंदगी समाज सुधार के लिए ही गुजार दूंगा। जब तक मां का दम है तब तक ही मैं यहां

बैठा हूँ। इस के बाद घर की मोहब्बत को तिलांजलि (त्याग) देकर इसी काम में खुद को लगा दूंगा।

सुंदरी जी! मैं देख रहा हूँ अपने बे-रहम और मूर्ख समाज की हालत। किस तरह आए दिन अनगिनत मासूम जानें इस के हवन कुंड में राख हो रही हैं। इसी वजह से मैं सोचता हूँ कि ब्याह के बंधन में जकड़े जाने के बाद मुझे अपनी मंज़िल से भटक जाने का अंदेशा है। अगर मैं दिल पर पत्थर रखकर इस बंधन से पीछे न हटूं तो उस के नतीजे के तौर पर आप की ज़िंदगी के सुख और आराम तो एक तरह से खत्म होकर रह जाएंगे और आप को या तो हमेशा के लिए मुझसे बिछड़ना पड़ेगा या मेरे साथ ही भूखे प्यासे और बे-आरामी की ज़िंदगी गुज़ारनी होगी।

लेकिन आप का खत पढ़ कर मेरे सारे अंदेशे दूर हो गए बल्कि मैं ये सोच कर शर्मिंदा भी हो रहा हूँ कि एक एल्फ-बे (अक्षर) पढ़ने वाला तालिब-ए-इल्म होते हुए भी अपनी जमात के सयाने और काबिल मानिटर से कहे कि तेरी मेरी दोस्ती नहीं निभ सकती, क्यों कि मैं सिर्फ एक साल में ही सारा सबक खत्म करने की कसम खा चुका हूँ।

सुंदरी जी! मुझे सारे सवालों और तमाम शक का तसल्ली बख्श जवाब मिल गया है। अब मैं खुद को इस दिन खुश किस्मत समझूंगा जिस दिन देखूंगा कि आप पर समाजी तौर पर भी मेरा पूरा हक है और आप मेरी हैं। मुझे अगर सारी दुनिया भी इस काम से बाज़ रखेगी तब भी नहीं रुकूंगा। चाहे मुझे कितने ही दुखों और मुसीबतों का सामना करना पड़े और आप के साथ को अपने लिए फख्र और बड़ी बात समझूंगा।

आप का,

बचन सिंह

(सातवां खत)

कन्या आश्रम,

लाहौर

ज़िंदगी के सहारे!

मेरी ज़िंदगी की नदी का बहाव जैसे-जैसे आप की तरफ बढ़ता जाता है, मुझे यही मालूम होता है कि मैं जन्नत के करीब होती जा रही हूँ। दिल में प्रेम के नए झरने उमड़ते आ रहे हैं।

हम जिस मज़मून को एक-दूसरे की तरफ शक भरी नज़र से देखते हैं, एक-दूसरे से इसका जवाब मांगते हैं, तो आख़िर बातों के बारे में ऐसे नतीजे पर पहुंचते हैं कि ये शकुक जो ऊपर से शकुक मालूम होते थे, असल में वो दोनों दिलों की वो ख्वाहिश और उमंग हैं जिनका दुनिया में कोई मुकाबला ही नहीं।

मेरी ज़िंदगी के मालिक! आप की फ़राख-दिली ने मेरी आंसुओं और उम्मीदों से हज़ार गुना ज़्यादा मुझे सुखी और खुश किस्मत

पृष्ठ 122

बना दिया है। ये कैसी खुशी है? इसका इज़हार शब्दों में मुमकिन नहीं।

कहते हैं कि हद से आगे जाकर हर एक चीज़ अपनी खूबसूरती, अपनी तरक्की और ऊंचाई से वापस लौटना शुरू हो जाती है। कहते हैं कि अगर कोई आदमी बेतहाशा हंसता चला जाए तो आखिर में उसकी हंसी रोने में बदल जाती है, उसकी आंखों में आंसू भर आते हैं। इसमें कुछ सच्चाई है, तो उसके तसव्वुर से ही दिल दहल जाता है। डर से सहम कर मैं बड़बड़ा उठती हूँ और मेरे तन मन में कपकपी तारी हो जाती है। मैं देख रही हूँ कि मेरी खुशियां और मेरे दिल की भावनाएं)अब दिल की आखिरी हदों तक जा पहुंची हैं, इतनी ज्यादा कि उन्हें संभालने के लिए मुझे अब दिल में जगह नहीं मिलती और वह इस तरह फूट-फूट कर बाहर निकल रही हैं जैसे घड़े में पानी डालें तो वह छलकने लगता है।

आह प्रीतम! यहां पहुंचकर पता नहीं कहां से निकलकर एक अनजानी सी फिक्र मेरे इर्द-गिर्द छा जाती है और मैं बेचैन हो जाती हूँ। यह फिक्र कभी-कभी किसी वक्त इतनी डरावनी शक्ल अख्तियार करके मेरे सामने खड़ी हो जाती है कि मेरे दिल में सब सुखों और खुशियों का भंडार इसकी तह के नीचे बिल्कुल ही दब जाता है। यह चंचल मन तरह-तरह की दलीलें गढ़ने में मशरूफ हो जाता है। वह कहता है कि सुबह के वक्त नसीम-ए-सहरी (सुबह की हवा) जब बाग की कलियों को अपनी नज़र किए अपनी तरफ मुस्कुराते और खुशबू की लपटें छोड़ते हुए देखती है, तो वह खुद को भूल जाती है और कलियों से छेड़छाड़ करने लगती है। इस प्यार के खेल के अनोखे रस को कली का नाज़ुक दिल बर्दाश्त नहीं कर पाता और वह खुशी और मस्ती में आकर आपे से बाहर हो जाती है। फिर उसके खिलते ही मद्धम हवा का प्रेम उसकी नाज़ुक पंखुड़ियों को बिखेर कर रख देता है और उसकी ज़िंदगी का खात्मा हो जाता है।

ए मेरी ज़िंदगी के सहारे! मुझे बचाइए, इस ख्याल फिक्र के पंजे से। मुझे अपने वजूद में छुपा लीजिए और ऐसी जगह छुपा कर रखिए जहां ऐसे बे-मानी ख्यालात मेरे नज़दीक न फटक सकें। होश ही नहीं रहता कि क्या खत में लिखा है और क्या लिख गई हूँ। यही मालूम होता है कि लिखने के लिए अब

कोई और बात नहीं रह गई। या ये कि इतना कुछ बाकी है कि जिसे सारी उम्र लिखती रहूं तो भी शायद खत्म न हो। जो कुछ लिखने लगती हूँ, उसे लिखने से पहले ही आप के वजूद में झलक हो पाती हूँ। तो फिर बची बात को क्या बताऊं?

प्रीतम! ब्याह का ज़िक्र बार-बार करते हैं। लोग कहते हैं कि ब्याह ही एक ऐसी चीज़ है जो इंसानी ज़िंदगी को सुख और स्वर्ग के बराबर बना सकता है। अगर ये ठीक है तो मैं इससे बहुत दूर जाना चाहती हूँ, क्योंकि जो खुशियां और सुख मुझे आप की फराख-दिली, उदारता और आप की मोहब्बत के सदके में इस वक्त तक मिल चुके हैं, इनके होते हुए मैं किसी और सुख का तसव्वुर ही नहीं कर सकती, हासिल करने की ख्वाहिश तो दूर रही। जैसा कि पहले कह चुकी हूँ, यहां और की गुंजाइश ही नहीं।

आप ने अपनी ज़िंदगी को जिस सांचे में ढालने का इज़हार किया है, मेरे जीते जी प्रीतम! अकेले ही इस सफर पर आप नहीं चल सकते। एक कदम भी नहीं उठा सकते। ओह! इतना अज़ीम (महान) और मुस्तकम (दृढ़) इरादा है आप का! जिस समाज ने आप को

पृष्ठ 123

इस हालत तक पहुंचाया है, उसके लिए आप के दिल में रहम का जज़्बा है? आप पिछले जन्म के कोई तपस्वी मालूम होते हैं। जानते हैं कि इस सिलसिले में मेरा क्या ख्याल था, जो आप की लिखी हुई सतरों ने बदल कर रख दिया है? इसलिए कि अपने सीने में एक ज़हर छुपाए बैठी थी कि इस समाज से, जिस ने मेरे दिल के मालिक के साथ इस बे-गुनाह होते हुए जुल्म किए हैं, बदला लूंगी; इसके दोगले और पाखंडी रहनुमाओं को वो नाक रगड़ने पर मजबूर कर दूंगा या रखूं और ये भी सोचा था कि ऐसा करने के लिए आप को तैयार कर दूंगी।

लेकिन अब मेरे प्रीतम! मेरी ज़िंदगी आप में जज़्ब हो चुकी है। इसलिए आप जिस तरफ आप लगाएंगे, मैं उसी तरफ लगूंगी। बस एक बार फिर गुज़ारिश करती हूँ कि जिस मुश्किल रास्ते पर आप चलने वाले हैं, उस पर अकेले न चल देना। मुझे भी साथी बना लेना। आप देखेंगे कि मैं आप की राह का रोड़ा नहीं बनूंगी, इस बात पर बेशक न कीजिए।

हां शादी के बारे में फिर लिखकर इस ख्याल को अभी दिल से निकाल दें। हमें इसकी कीमत चुकानी है, कुछ त्याग करना है और फिर हम हमेशा के लिए एक हो जाएंगे, कयामत तक के लिए और उसके बाद भी हम एक ही रहेंगे। इसके अलावा यह भी बता दूँ कि मेरे ऊपर बताए हुए शक को भी बे-मानी न समझें। इतनी खुशियों को एक बार ही न ही हम और न ही कोई और हज़म कर सकता है।

आप की --सुंदरी

(आठवां खत)

दीवानपुर

सुंदरी जी!

आज मैं आप को जिस तकलीफ-देह वाकये का हाल लिख रहा हूँ, इसको पढ़कर दिल की चोट को आप कैसे बर्दाश्त करेंगी? यह सोचकर मेरा दिल डूबता जा रहा है। लिखते हुए हाथ कांप रहे हैं। अच्छा होगा कि यह बुरी खबर आप को कोई और ही सुनाता, लेकिन बदकिस्मती से यह काम मेरे ही सुपुर्द है। मैं क्या लिखूं सुंदरी जी! आप का बाबा। आह! हर वक्त आप के नाम की माला जपने वाला आप का धर्म-पिता, आप को आखिरी प्यार भेजकर, आप को देखने की ख्वाहिश को दिल में लिए ही हमेशा के लिए इस दुनिया से चला गया है!

इससे भी बढ़कर दिल को तकलीफ देने वाली बात यह है कि बेचारे की मौत कितनी भयानक हुई। सुंदरी जी! मैं आप को क्या बताऊं? कई दिनों से उसका जिस्म इतना कमज़ोर हो रहा था कि झोंपड़ी से कम ही बाहर निकलता था। हमेशा की तरह जब परसों शाम को रोटी देने गया तो वह रो रहा था। मेरे पूछने पर उसने बताया, "सुंदरी से मिलने के लिए दिल बहुत बेचैन है। पता नहीं कितने दिन जीवित रहूं। एक बार लड़की को देख लेता तो अच्छा होता।"

पृष्ठ 124

मैंने कहा, "बाबाजी! यह कौन सी मुश्किल बात है, मैं सवेरे जाकर सुंदरी को ले आता हूँ।"

लेकिन उसने इसे रोकने हुए कहा, "इसकी पढ़ाई का हर्ज होगा और फिर इसको यहां लाना खतरे से खाली नहीं। गांव का बदमाश पाला सिंह मेरे पीछे पड़ा हुआ है कि मैं सुंदरी का उसके साथ ब्याह कर दूँ। पहले तो उसने मुझे लालच दिए लेकिन जब मैं नहीं माना तो फिर कई तरह की धमकियां देने लगा। आखिर यहां तक कह दिया कि अगर तुम सीधी तरह से मेरी बात नहीं मानोगे तो मैं अपने आदमियों से तुझे मरवा डालूंगा और जब सुंदरी तेरे मरने की खबर सुनकर आएगी तो उसे जबरदस्ती उठा ले जाऊंगा।"

सुंदरी जी! जिस वक्त बाबा ये बातें कर रहा था, उस वक्त उसकी हालत देखी नहीं जाती थी। मेरा जिस्म भी गुस्से से कांप रहा था। मैंने उसे हौसला देते हुए कहा, "बाबाजी! मेरे होते हुए किसकी हिम्मत है जो सुंदरी या आप की तरफ मैली आंख से देख जाए?"

इसके बाद मैंने उसे अपने घर ले जाने की बड़ी कोशिश की, लेकिन वह न माना और कहने लगा, "सरदार जी! मेरा क्या है, मैं तो पहले ही दरिया के किनारे आ गया हूँ। आज मरे, कल दूसरा दिन। पर परमात्मा के आगे दोनों हाथ जोड़ता हूँ कि मुझे चलते-फिरते ही उठा ले। जिस्म अब बिल्कुल ही रह गया है। ज्यादा फिक्र सुंदरी की थी, सो वह आप की मेहरबानी से दूर हो गई है।"

फिर मैंने उससे कहा, "बाबाजी! आप मेरे साथ लाहौर चलकर सुंदरी से मिल आइए।"

इस पर वह राज़ी हो गया और दूसरे दिन मेरे साथ लाहौर चलने की सलाह पक्की हो गई।

उसी रोज़ करीब आधी रात के वक्त शोर की आवाज़ से मेरी नींद खुल गई।

"आग! आग!" की चीख-पुकार सुनकर मैं भी घर से बाहर निकला। गली में आया तो बाबा रोडू की झोंपड़ी में आग लग गई थी। मैं तेज़ी से भागा। जाकर देखा तो बहुत से लोग इकट्ठे हो चुके थे। लोगों ने बाबा का झुलसा हुआ जिस्म बाहर निकाल कर एक तरफ रख दिया था। झोंपड़ी राख का ढेर बन चुकी थी। पानी पड़ने की वजह से उसकी आधी लकड़ियाँ सुलग रही थीं। मैं भीड़ को चीरता हुआ बाबा के पास पहुंचा।

आह सुंदरी जी! उस वक्त उसका हालिया बयान करने में आप के दुखों में जो मुझे आग लगी है, उसका वर्णन नहीं हो सकता। मुझमें देखने की ताकत नहीं थी। मैंने दिल कड़ा करके उसके जिस्म को टटोला। थानेदार और दो-तीन सिपाही मौजूद थे। पहले काफी देर तक तो सब यही समझते रहे कि वह मर चुका है। लेकिन कुछ देर बाद उसके जिस्म में हरकत पैदा हुई। मैंने उसे कई आवाज़ें दीं। उसने नज़र भर कर मेरी तरफ देखा और आहिस्ता से बोला, "सरदार जी।"

मैंने कहा, "हाँ जी।" कह कर मैं उससे कुछ और पूछने लगा तो थानेदार ने इस मौके को गनीमत समझकर उससे सवाल करना शुरू कर दिए। बाबा थोड़ा बहुत होश में मालूम होता था। थानेदार ने पूछा, "बाबा" उसने सिर हिलाया।

पृष्ठ 125

थानेदार ने पूछा, "आग किसने लगाई थी?"

बाबा ने इसके जवाब में एक बार आसमान की तरफ देखा, जिससे मालूम होता था कि वह अपने कातिल को ज़ाहिर नहीं करना चाहता था और इस वारदात को एक होनी समझकर सबर का इज़हार कर रहा था।

उसने थानेदार को कोई जवाब नहीं दिया। इसमें अब इशारा करने की भी ताकत नहीं थी। उसने अपने पास खड़ी भीड़ की तरफ एक नज़र भर कर देखा और फिर उसकी नज़र ठहर गई। मैंने सर झुका कर कहा,

"क्यों बाबाजी, क्या कहना है?"

वह कुछ न बोल सका और उसकी आंखों में पानी भर आया। फिर मालूम हुआ जैसे कुछ कहना चाहता है लेकिन बोल नहीं पा रहा। कई बार उसके होंठ फड़फड़ाए लेकिन मैं उसका कुछ भी मतलब न समझ सका। फिर उसने मुझे नज़दीक आने का इशारा किया। मैं ने कान बिल्कुल उसके होंठों से जोड़ दिए तो बड़ी मुश्किल से सिर्फ इतना ही समझ आया, "स-स-सुंदरी।"

मैंने पूछा, "बाबाजी! सुंदरी से मिलना है?"

उसने हाथ को आहिस्ता आहिस्ता इस तरह घुमाया जैसे कोई डमरू बजाने वाला घुमाता है। मैं इसका मतलब समझ गया। वह कह रहा था,

"अब खेल खत्म हो गया है, सुंदरी से मैं नहीं मिल सकता।"

फिर मैंने पूछा, "सुंदरी से कुछ कहना है?"

उसने कोई जवाब न दिया, लेकिन उसकी चमकती आंखें एक टक मेरे चेहरे पर टिकी थीं जैसे वह मुझसे किसी बात का जवाब हासिल करना चाहता हो। मैंने कहा, "बाबाजी! सुंदरी की फिक्र न कीजिए, मैं उससे शादी करूँगा।"

यह बात कहने की देर थी कि उसकी आंखों में चमक पैदा हो गई और होंठों पर हल्की सी मुस्कुराहट। फिर शायद मेरा शुक्र अदा करने के लिए उसने दोनों हाथों को इस तरह मिलाया जैसे जोड़ना चाहता हो। आहिस्ता-आहिस्ता वह अपने हाथों को एक-दूसरे के नज़दीक लाने की कोशिश करने लगा, लेकिन हथेली भर का फासला बाकी था कि उसके दोनों बाजू बेजान होकर छाती पर गिर पड़े और उसकी गर्दन कंधे की तरफ ढुलक गई। ऐसा मालूम होता था कि मेरे मुँह से यही बात सुनने के लिए उसकी सांस अटकी हुई थी।

आह सुंदरी जी! वह हमेशा की नींद सो गया!

पुलिस ने शक में पाला सिंह और उसके चारों साथियों, सवाई सिंह वगैरह को घर पर जाकर गिरफ्तार कर लिया। वह कितना डरावना वाकया था। अभी तक उसकी शक्ल मेरी आंखों के सामने है। मेरी माँ ने जब से यह बात सुनी है, उनके आंसू नहीं रुक रहे। मालूम होता है कि उनके दिल में बड़ी तब्दीली आ गई है।

सुंदरी जी! परमात्मा की मरजी में कोई दखल नहीं दे सकता। हमें किसी से बदला लेने का ख्याल कभी दिल में नहीं लाना चाहिए। बदला लेना भगवान के हाथ में है। दुनिया की कोई ताकत हमारे उसूलों से नहीं टकरा सकती, हमारी बहादुरी इसी में है। आज का खत पढ़कर आप के दिल की क्या हालत होगी, इसको मैं समझ रहा हूँ। इसी वजह से और कुछ नहीं लिखता। मैं आप को ताकीद करता हूँ कि दिल को ज्यादा दुखी न करें बल्कि हौसले और साबित-कदमी से इस दुख का सामना करें।

पृष्ठ 126

अभी-अभी खत लिखते हुए खबर मिली है कि पाला सिंह और उसके साथियों को पुलिस ने मामूली ज़मानतों पर छोड़ दिया है। इसकी वजह एक तो रुपए का चमकदार होना और दूसरे गांव के लोगों की नादारी बताई जाती है, जो बचाने के लिए एड़ी-चोटी का जोर लगा रहे हैं। मुझे पहले ही यह उम्मीद थी।

आपका, --बचन सिंह

(नवां खत)

कन्या आश्रम

प्राण नाथ!

चिट्ठी मिली। आह बाबा की मौत की खबर ने मेरे दिल में जो हलचल मचाई है, इसका मैं क्या ज़िक्र करूँ? सब से बड़ी हसरत यह है कि उसके साथ आखिरी मुलाकात भी न हो सकी कि वह प्यार भरा हाथ मेरी पीठ पर फेरता और मैं पितृवत प्यार का आखिरी प्यार पाती, लेकिन किस्मत में नहीं लिखा था। दिल रो रहा है और हजार कोशिश करने के बाद भी दिल को तसल्ली नहीं होती। हर लम्हा अंदर से कोई उबाल सा उठता है और दिल को चीरता हुआ अंदर ही अंदर गुम हो जाता है, लेकिन जब आप का ख्याल आता है तो मुझे गिरती को सहारा मिल जाता है।

आह एक मरे हुए गरीब को, जिस का इस दुनिया में कोई नहीं था, जो गली के तिनकों को भी तकलीफ देने से डरता था, जालिमों ने जीने न दिया। इस को मारने वाले जालिमों को सज़ा दिलाने के बजाए

लोग एड़ी-चोटी का जोर लगा कर इस वजह से बचाने की कोशिश कर रहे हैं कि उन के समाज में जालिमों और खूनियों की कमी न हो जाए।

आह मेरे मालिक! आप इस समाज के सुधार के लिए तड़प रहे हैं और इस को सुधार लेने की उम्मीद रखते हैं? क्या आप ने इतना कुछ देखने के बावजूद यह नतीजा नहीं निकाला कि जिन लोगों की आग से झुलसे पड़े हैं, इनका कोई इलाज नहीं? क्या आप इन लोगों के सुधार के ख्वाब देख रहे हैं, जिन के दिल की आग में झुलसे हुए हैं, जिन के दिमाग गुस्से से भरे हुए हैं और जिन के बाजू सफेद लहू से मुर्दा हो चुके हैं? क्या इस पथरीली ज़मीन में सुधार के बीज बोने और फिर इस के उगने की उम्मीद रखते हैं?

नहीं, नहीं मेरे सर के ताज! इस ख्याल को दिल से निकाल दीजिये। जिस पहाड़ को आप सरों से तोड़ना चाहते हैं, वह इस तरह कभी नहीं टूटेगा, बल्कि आप खुद ही आप को गिना देंगे। इस पहाड़ को तोड़ने का तरीका यह है कि इस की जड़ें खोदी जाएं और इन लोगों के जिस्मों में दौड़ते हुए सफेद खून को निकाल कर ज़मीन पर गिरा दिया जाए। जब तक इन के जिस्मों में सफेद खून की एक बूंद भी बाकी रहेगी तब तक आने वाली नस्लों पर इन का असर पड़ने से नहीं रुकेगा।

पृष्ठ 127

ओह! मैं गुस्से में क्या-उलटा-पुलटा लिखे जा रही हूँ। प्रीतम! मेरी गलती माफ कीजिये। इस वक्त मेरी दिमागी हालत ठीक नहीं है। बेशक आप को इस में मेरे दिली जज़्बात का रंग झलकता महसूस होगा, लेकिन यह मेरी कम-अक्ली की वजह से है। इस वजह से मैं इन बे-ढंगे ख्यालात को हर वक्त दिल से निकालने की कोशिश करती रहती हूँ। शायद मैं इसका इज़हार ही न करती और किसी जामा पहनाने की भी कोशिश करती, लेकिन यह आप हैं जो मुझे हर एक ख्याल को अपने दिल से निकालने के लिये मजबूर कर देता है।

मेरी ख्वाहिश है कि वाहेगुरु आप के ख्यालात को कामयाबी बख्शे और मुझे भी ऐसी ही ताकत दे कि मेरे दिल में कोई ऐसा ख्याल आए तो मैं सांप की तरह इस के सर को कुचल कर खुद को इस से निजात दिलाती हुई आप के ही उसूलों पर चलने की कोशिश करूँ।

मेरे सरताज! मुझे अपने इस चंचल मन पर भरोसा नहीं रहा। यह मुझे गुमराह की तरफ ले जाने की कोशिश करता है और बदले की आग किसी वक्त मेरे दिल में ऐसी भड़क उठती है कि मैं आपे से बाहर हो जाती हूँ। इसलिये अब मेरी आप से ही गुज़ारिश है कि मुझे अपने हुक्म के तहत और अपने ही साये में रखें।

आज जी बहुत खराब है। और कुछ नहीं लिखती, जो कुछ लिखा है वह भी भेजना नहीं चाहती थी लेकिन भेज रही हूँ। मुझे पता है कि आप का दिल कितना कुशादा और वसीह है। संजीदगी आप में किस कदर कूट-कूट कर भरी है। आप मेरी हर एक गलती को माफ कर सकते हैं। मुझे आकर ले जाइए, मैं अपने धर्म पिता की जली हुई झोंपड़ी देखने के लिये बेचैन हूँ और मेरी पढ़ाई भी लगभग खत्म हो चुकी है।

आप की --सुंदरी

(दसवां खत)

दीवानपुर

सुंदरी जी!

इतनी बेकरारी! इतना गुस्सा? लेकिन फिर भी आप की तहरीर इस कदर बा-मानी दलीलों से भरी है कि उन के सामने मैं सब कुछ भूल जाता हूँ। लेकिन मेरी सुंदरी जी, आप ने जो मिसाल पहाड़ की दी है, उसे पढ़ कर मुझे हंसी आ रही है। इस में आप खुद ही फंस गई हैं। जब आप कहती हैं कि पहाड़ माथा टकराने से नहीं टूटेगा, जड़ें खोदने से ही टूटेगा और इस सिलसिले में आप का जो प्रोग्राम है वह बिल्कुल सर टकराने वाली बात है। यानी समाज में किसी के खून का बदला किसी के खून से लेकर , सुधार की उम्मीद रखनि तो सचमुच पहाड़ से सिर मारने के बराबर है। इस के

इसके विपरीत, अमली प्रचार और ऊँचे ख्यालात से इस पर असर डालना, यह हुआ इस पहाड़ की जड़ों को खोखला करना। लेकिन इसके साथ ही आप की उदार दिल की भी दाद देता हूँ, आप अपने ख्यालात पर यकीन रखते हुए भी इन्हें छोड़ कर मेरे पीछे चलने की बात सोचती हैं। मुझे पूरी उम्मीद है कि जब आप मेरे इस सफर की साथी बनेंगी तो आप को अपने आज के ख्यालात उतने ही गलत मालूम होंगे, जितने कि आज दिन।

ये मैं देखता हूँ कि हमारे समाज का खून दिन-ब-दिन सफेद होता जा रहा है लेकिन इसका सुधार करने के लिये जो इलाज आप करना चाहती हैं, वह इतना ही भयानक है जितना कि पागल कुत्ते के काटने वाले को नहला कर ठीक करना। हमें प्रचार के तरीके से ऐसे सफेद लहू वाले बीमारों के अंदर ऐसी दवाई डालनी होगी जिसकी मदद से लोगों के खून में शामिल सफेद (बेजान) कीटाणु बाहर होते जाएं और उनकी जगह लाल (जिंदा) कीटाणु पैदा होते जाएं।

इस काम के लिये मैं हर तरह से कमर कस ली है और अब हम इस काम के लिये एक और एक दो नहीं बल्कि ग्यारह होंगे। मैं चार-पांच दिनों बाद आप को लेने आऊँगा। माँ जी को मैं ने रजामंद कर लिया है कि वह मेरे काम में कोई रुकावट नहीं डालेंगी, न ही आप के साथ मिलकर काम करने में उन्हें कोई एतराज़ होगा, लेकिन इसके एवज में उनकी एक शर्त मुझे ज़रूर माननी पड़ी है कि जब तक वह ज़िंदा हैं, तब तक मैं कहीं दूर नहीं जा सकता। इसलिये मुझे उम्मीद है कि आप भी खुद को इस काम के लिये तैयार कर लेंगी।

हमारी इस सिलसिले में क्या मंज़िल होगी, यह तो हम दोनों इकट्ठे बैठकर फैसला करेंगे, लेकिन अभी तो घर पर ही एक छोटा सा काम मिल गया है, जिससे हम अपनी नई ज़िंदगी की शुरुआत करेंगे। थोड़े दिनों के बाद हमारे गाँव के लाला रलाराम की लड़की का ब्याह है। मैं ने मना लिया है कि इस ब्याह के मौके पर नाच-गाना, भांडों का खेल, शराब के दौर और कई तरह की फिजूल खर्चियों में हज़ारों रुपये पानी की तरह बहाये जाएंगे।

सुंदरी जी, कितनी शर्म वाली बात होगी जब हमारे बड़े-बुज़ुर्ग घेरा बनाकर बेसवा का नाच देख रहे होंगे और उनकी बेटियाँ, बहनें ऊपर बैठकर यह सब कुछ देख रही होंगी? क्या इनके लिये चुल्लू भर पानी में डूब मरने की बात नहीं होगी? मेरा ख्याल है कि शायद समझाने-बुझाने से वे इस ज़लील काम से बाज़ आ जाएं। बस और ज़्यादा क्या लिखूँ, आज से पांचवें दिन आप के पास ही हूँगा।

आप का, ---बचन सिंह

पृष्ठ 129

एक बात और, चिट्ठी खत्म कर चुका था कि आप को मुबारकबाद देने का ख्याल आया। आप के नाम से 'पंजाबी रिसाले' में आज कल कहानी छप रही है। उस दिन शहर गया तो देखकर दंग रह गया, यह तो आप ने कमाल कर दिया। अपने समाज की संग-दिली (पत्थर-दिली) बयान करने में आप ने हद कर दी है। मेरा दिल कह रहा है कि किसी दिन मेरी सुंदरी बहुत ऊँचे दर्जे की कलाकार बनेगी।

बस सुंदरी जी! जहां आप के लिखने की कामयाबी के लिये मैं दिल से मुबारकबाद देता हूँ, वहाँ मामूली सा मशविरा देने की भी इजाज़त चाहता हूँ कि आप की तहरीर में कुछ और ठहराव की ज़्यादा ज़रूरत है। माना कि समाज के हाथ से सताई हुई दुखी रूह के कलम से यही कुछ निकल सकता है, लेकिन मुझे

आप से ऐसी तहरीरों की उम्मीद है जिसमें हँसना और रंग देने के लिये कोई गुंजाइश न रहे, लहू से लहू नहीं धोया जाता। क्या आइंदा अपनी तहरीरों में इतनी-सी तब्दीली लाने की कोशिश नहीं करेंगी?

(23)

सुंदरी ने दीवानपुर पहुँच कर सब से पहले अपने धर्म पिता की आगज़दा (जली हुई) यादगार को नमस्कार किया और उसकी राख माथे पर लगाई। जली हुई लकड़ियों के टुकड़े और कुछ राख वहां अभी तक मौजूद थी। सुंदरी के लिये यह मामूली राख नहीं थी, उस की बीती ज़िंदगी की तस्वीर थी। होश संभालने से लेकर लाहौर जाने के दिन तक एक-एक पल का अक्स उसके सामने था। रोडू की पितृवत मोहब्बत का एक-एक लम्हा आता और उसके दिल को पाश-पाश कर देता था। वह कितनी ही देर तक बुत बनी बैठी आंसू बहाती रही और फिर बचन सिंह के बार-बार कहने पर वहां से उठी।

सुंदरी के रहने का इंतज़ाम बचन सिंह ने पहले ही कर रखा था। उसे अपने घर ले जाकर माँ का दिल दुखी नहीं करना चाहता था। गाँव के कुछ बाशिंदों ने कुछ अर्से से अपने गाँवों में एक कन्या पाठशाला खोली हुई थी। वहां के कुछ आदमी बचन सिंह का काफी सम्मान करते थे। वहां चार-पांच आदमियों की हिम्मत से अच्छी जागृति पैदा हो गई थी, इसी वजह से बचन सिंह की वहां बड़ी इज़्ज़त थी। अपने प्रचार का केंद्र बनाने के लिये उसने इसी जगह को पसंद किया था।

सुंदरी को इस स्कूल में शिक्षिका नियुक्त किया गया है। उसे मनपसंद जगह मिलने पर बहुत बड़ी फिक्र दूर हो गई और फिर दीवानपुर से गाँव का ज़्यादा फासला भी नहीं था, सिर्फ पौन मील की दूरी थी।

****

लाला रलाराम के घर बारात आने वाली थी। उस वक्त होने वाले शोर-शराबे को रोकने के लिये बचन सिंह कितने ही दिनों से भाग-दौड़ कर रहा था लेकिन उसे कामयाबी नहीं मिली थी। सारा गाँव एक तो वैसे ही बचन सिंह का मुखालिफ (विरोधी) था, दूसरे वे लोग बेसब्री से इंतज़ार कर रहे थे कि वह वक्त जल्दी आए जब वे दो पल की मौज-मस्ती के लुत्फ-अंदोज़ हों।

इस के लिये लाला रलाराम ने सारे गाँव को दावत दे रखी थी। गाँव के लोग जैसे-जैसे सुनते थे, दिल्ली की एक मशहूर नर्तकी आने वाली है, उनकी शराब-सी चढ़ती जाती थी और वे एक-एक पल गिन-गिन कर वक्त गुज़ार रहे थे।

पृष्ठ 130

इधर जिस वक्त सुंदरी रवानगी (पहुंचने) के बाद अपने रिहायशी मकान में अपनी चीजों को तरतीब (व्यवस्थित) से रख रही थी, उसी वक्त बचन सिंह सारा दिन दौड़-धूप करने के बाद मकान पर आया और बाहर से आवाज़ दी। सुंदरी हाथ का काम वहीं छोड़ उसके पास आ गई, बोली, "सुबह जब से गए लौट कर मुंह नहीं दिखाया?"

प्यार भरी मुस्कुराहट के साथ बचन सिंह बोला,

"क्या बताऊं सुंदरी जी! मैं तो परेशान हो गया हूँ, टकरें मार मार कर।"

यह कहते हुए वह अंदर जाकर एक चारपाई पर बैठ गया।

सुंदरी ने घबराते हुए पूछा, "क्यों?"

उसने कमीज के बटन खोल, रूमाल से पसीना पोंछते हुए कहा, "आप को बताया था कि मंगलवार के दिन लाला रलाराम के यहां बारात आने वाली है।"

"जी बताया था।"

"और आज रविवार है।"

"फिर?"

"कल बारात आएगी।"

"तो फिर?"

"यही कि हमें काम की फिक्र करनी चाहिए।"

सुंदरी प्यार से उसके चेहरे की तरफ देखती हुई बोली, "तो फिर ढील क्यों करते हैं?"

"मैं सोच रहा हूँ शायद मुझे इसमें कामयाबी नहीं मिलेगी।"

"क्यों?"

"अगर अकेले रलाराम को रजामंद करना होता तो बात मुश्किल नहीं थी, लेकिन यहां तो मुद्दई सुस्त , और गवाह चुस्त वाली बात है। सारा गाँव ही आने वाली नर्तकी के लिए बेकरार है।"

"तो क्या हमारे इस नए बीजारोपण (प्रयास) का पहला ही सौदा घाटे वाला रहेगा?"

"घाटे वाला नहीं, सारी की सारी पूँजी बर्बाद।"

"फिर आप ने क्या सोचा है?"

"यही कि एक बार फिर लाला रलाराम के यहां जाऊं, शायद तीर लग ही जाए।"

"और अब कहाँ से आ रहे हैं?"

"कई जगहों पर धक्के खाकर आ रहा हूँ।"

"फिर क्या जवाब मिला?"

पृष्ठ 131

"बस टाल-मटोल।"

"और रलाराम की तरफ होते हुए क्यों न आए, अब फिर मील भर सफर करना पड़ेगा।"

"आने की वजह सिर्फ आप से मिलना नहीं था, बल्कि यहां के एक-दो मोतबर (विश्वसनीय) आदमियों को साथ ले जाने का इरादा है।" थोड़ी देर और बातचीत करने के बाद बचन सिंह चला गया और सुंदरी अकेली बैठी किसी गहरी फिक्र में मग्न हो गई।

***

कुछ देर बाद बचन सिंह दीवानपुर पहुंच कर रलाराम की बैठक में जा पहुंचा। गाँव के कई आदमी उसके साथ थे। ब्याह की तैयारियां बड़ी सरगर्मी से हो रही थीं। एक तरफ दर्जी बैठे जहेज के कपड़े सी रहे थे। दूसरी तरफ गाँवों के चौधरी पंच के इंतज़ार में खड़े थे। शाह का लड़का दीन नाथ इन के ज़िम्मे काम सौंप रहा था। अंदर से मिठाइयों और पकवानों के पकने की खुशबुएं आ रही थीं और लड़कियों ने ढोलकों पर धूम मचाया हुआ था।

गाँव के पंचों में पाला सिंह भी बैठा था और उसके साथी भी। उसकी तरफ देख कर पाला सिंह का खून एक बार खोल उठा लेकिन उसने अपनी इस हालत को छुपाने की कोशिश की। उसे अंदर आते देख कर इशारे होने लगे।

उसने सब को फतह भुलाई और फिर एक तरफ हो कर बैठ गया। किसी को दम मारने की फुर्सत नहीं थी। सब अपने काम धंधे में लगे हुए थे, बचन सिंह के दिल को जैसे कोई चीर रहा था। वह जिस काम के लिए आया था, उस काम का होना तो दूर रहा, यहां तो उसका ज़िक्र छेड़ने का मौका भी नहीं मिल सकता था।

काफी देर वह दिलों में डूब रहा। इतने में उसने देखा कि घड़ा लेकर खट-खट करते भाई जी भी अंदर आए। बचन सिंह बे-शक भाई जी की हरकतों और इरादों से ना-वाकिफ नहीं था, फिर भी उसे कुछ उम्मीद थी कि मेरी बात की ये ताईद (समर्थन) ज़रूर करेंगे।

जितने आदमी बैठे थे, सब ने बड़े अदब और एहतराम से भाई जी को फतह भुलाई और "यहाँ बैठिये" का शोर मच गया। लाला रलाराम को उस वक्त थोड़ी सी फुरसत थी, वह आकर भाई जी से बातें करने लगा।

बचन सिंह ने भी मौका देख कर दिल को मज़बूत किया और बोला, "शाह जी?"

शाह जी ने लापवाही से बल्कि मुँह साफ़ बना कर उसकी तरफ देखा और बोला, "हाँ जी, क्या बात है बचन सिंह जी?"

वह बचन सिंह के मुताल्लिक (बारे में) पाला सिंह से शायद बहुत कुछ सुन चुका था।

उसकी तीखी नज़रों ने बचन सिंह के पाँव के नीचे से पूरी तरह ज़मीन निकाल दी और वह घबरा गया। जैसे गिरती हुई छत को आदमी बाजुओं के सहारे थोड़ी देर के लिए रोक लेता है, उसी तरह बचन सिंह ने ज़बरदस्ती दिल को थाम कर कहा, "मैं वही अर्ज़ करने आया था।"

पृष्ठ 132

"बताइये?"

"आप को पता है इस में मेरा कोई फायदा तो है नहीं। बिरादरी के नफे-नुकसान का सवाल है। और कुछ नहीं तो कम से कम इतना तो ज़रूर होना चाहिए कि गाँव में रंडी न आए। इस का सब से बुरा असर हमारी बहनों-बेटियों पर पड़ेगा।"

शाह जी के चेहरे पर गुस्से के आसार पैदा हो गए और वह ज़रा तेश में आकर बोले, "बचन सिंह जी! आप से पहले भी कहा था कि आप ख्वामख्वाह हमारी खुशी के काम में रुकावट न डालें। और फिर जिस काम में मेरा हाथ नहीं, ताल्लुक नहीं, उसे मैं रोक किस तरह सकता हूँ? आप जानते हैं कि संबंधों

का प्यार, सूत के कच्चे धागे सा होता है। अगर थोड़ा सा भी दिलों में नील (मैलापन) आ जाए तो सारी उम्र की नाराज़गी पैदा हो जाती है। किसी ने कहा है 'मंहगी का मज़ा ब्याह तक और ब्याह का मज़ा उम्रों तक'—इसे..."

उसने अभी बात खत्म नहीं की थी कि पास से एक बोला, "और ये कोई बात है? नाच-गाने वाले पैसे वालों का सत्कार होता है। बचन सिंह इस खुशी के काम में अड़चन नहीं डालनी चाहिए और फिर शाह जी के यहां चारों तरफ खैर है, एक ही लड़की है, अगर इसकी खुशियां न देखें तो और किसकी देखें? भाई जी! क्यों भाई जी, मैंने बात ठीक कही या झूठी?"

भाई जी, जवाब तक नाखून से दांतों की मैल उतारते हुए पूछे, आगे निकले हुए दांतों पर ज़ुबान फेर कर बोले, "ठीक है महाराज, आन कर के, ऐसे दिन कोई बार-बार आते हैं?"

बचन सिंह घबरा कर बोला, "भाई जी! क्या यही गुरु-धर्म का उसूल है कि आप ऐसे शरीफ आदमी ये बीच में बैठ कर रंडियों और शराब का प्रचार करें। आप गुरुद्वारे के ग्रंथी थे। अपने फ़राज़ (कर्तव्यों) को इस तरह नहीं भूलना चाहिए।"

भाई जी तो ज़रा सहम गए लेकिन पाला सिंह से न रहा गया।--- बोला, "बड़े गुरु-धर्म का उसूल ये है कि जिन बेचारों की कमाई करने वाला कोई और साधन नहीं, उनके मुँह से निवाला छीन लिया जाए? और वो पैसा कोई ऐसे तो नहीं ले जाते। सैकड़ों आदमियों का दिल खुश करती हैं, राग सुना कर और फिर शराब में बताइये कौन सी बुरी चीज़ पड़ती है, बबूल के छिलके और गुड़।"

पाला सिंह की बात का बचन सिंह ने कोई जवाब न दिया। और देता भी क्या?

जहां "खुदा नजदीक कि लाठी वाली बात हो। उधर पाला सिंह कि मदद से भाई जि को हौसला हो गया - और टांगें खुजलाते हुए बोला, "शराब तो अन-कर के एक दवाई है। यह चीज़ बुरी नहीं लेकिन ज़्यादा पीनी ज़रूर बुरी होती है अन-कर के।"

बचन सिंह का जवान खून खौल रहा था, लेकिन उसने सोचा कि इन तिलों में तेल नहीं।

तब भी भाई जी की भद्दी दलील का जवाब देने से वह ज़रा सका और उनकी तरफ घूर कर बोला, "ठीक है। बुरी चीज़ नहीं, बहुत अच्छी चीज़ है, लेकिन क्यों जी! इस सतर (पंक्ति) के क्या मायने हैं?"

पृष्ठ 133

"झूठा मद मूल न पीछे जीका पारो साये।"

कुछ देर सोच कर भाई जी कान के छल्ले को घुमाते हुए बोले, "महाराज, इस के मायने तो अन-कर के ठीक हैं कि शराब नहीं पीनी चाहिए, जहां तक बस चले। लेकिन अगर आदमी की बस न हो तो अन-कर के वहां क्या किया जाए?"

गुस्से में बचन सिंह को ज़बरदस्ती हंसी आ गई। अब सब लोग अपनी-अपनी दलीलें देकर साबित करने लगे कि दोनों काम बुरे नहीं हैं।

बचन सिंह ने अपनी हालत से समझाने की काफी कोशिश की लेकिन आख़िर वह सोच कर चुप हो गया कि यहां इसकी कोई पेश नहीं जा सकती। आख़िर पानी को बिलोने की बजाय उसने चुप रहना ही मुनासिब समझा और वह दबे पांव वहां से उठ कर चला गया। उसके बाहर निकलते ही सब खिलखिला कर हंस पड़े।

उसी वक्त पाला सिंह ने एक साथी के कान में मुंह लगा कर कहा, "वीर! देखिये इस गधे की अकल!" वह बोला, "अकल की बात छोड़। यह जान-बूझकर शैतानी करने में लगा है कि जहां हम बैठे हैं, वहां तो ज़रूर ही कोई शोशा (शरारत) छोड़ना है। बेशर्म के साथ होती तो है और फिर भी बाज़ नहीं आता।

"और ये इस तरह थोड़े ही बाज़ आएगा। टेढ़ा-तकला भाई जुत्ती से ही सीधा होता है।"

"मेरी राय है कि यह इस का रोज़-रोज़ का काम..."

हाथ की उंगली से इशारा करते हुए पाला सिंह बोला, "चुप-चुप! तू देखत जा। अगर कहीं मेरा दांव चल गया तो फिर इसका कहीं नाम-ओ-निशान भी मिल जाए तो मेरे मुँह पर थूक देना और फिर जब तक इस का काम तमाम नहीं किया जाता, तब तक वह " मटकी" कैसे काबू आएगी।"

(24)

शाम का वक्त था। बारात की आमद की खबर सुनकर और यह सुनकर कि मशहूर रंडी नूरजहां आ रही है, क्या बच्चा, क्या जवान, सारा गाँव इकट्ठा होकर बाहर निकल आया। यह नहीं, इर्द-गिर्द के गाँव भी खाली हो गए। लाला रलाराम के घर बारात का आना कोई मामूली बात नहीं थी और फिर जो ब्याहने आ रहे थे वो भी अपने इलाके के माने हुए साहूकारों में सर बुलंद (प्रतिष्ठित) थे।

शाम के पांच बजे की गाड़ी से जब बारात उतरी तो बड़ी सज-धज से गाँव पहुंची। जिस ने नूरजहां को देखा, बस मजनू ही बन गया। उम्र उसकी तीस-पैंतीस साल के लगभग थी, लेकिन बाज़ारी ग़ाज़ा (मेकअप) और सुर्खी के इस्तेमाल से वह

बीस से कम ही लगती थी, उसका सुडौल बदन, गुलाबी पाउडर से रंगा चेहरा, बड़ी आँखें, सुर्ख होंठ और लंबे बाल। ये सब चीजें लोगों के दिलों को काबू करने के लिए काफी थीं।

बारात गाँवों से बाहर बाग में ठहरी थी। लोग सब कुछ भूल गए, बस मुजरा देखने के लिए वे इस कदर बे-चैन हो गए कि हर तरफ बाराती मुजरे की फरमाइश करने लगे। बारातियों को भी इसका कुछ कम इंतजार नहीं था। सबने कह कर दूल्हे के भाई को रजामंद कर लिया और बाग में मुजरे की तैयारी होने लगी। काफी बड़ा गोल दायरा बनाया गया। इसमें दरियां बिछ गईं और उस दायरे के बीच कालीन बिछाकर उस पर साज-संभालने वाले बैठ गए।

सब से अगली कतार में दूल्हा, उसका बड़ा भाई और उनके साथ अहम सलाह का एक बुड्ढा पंडित जी बैठे हुए थे। उनके साथ ही आठ-दस चौधरी और बाकी सारी बारात दर्जे-ब-दर्जे अपनी-अपनी जगहों पर बैठ गई। दायरे के ज़्यादा हिस्से में बाराती थे और बाकी हिस्से में दूसरों को इस अंदाज़ से बिठाया गया कि बाराती और गैर-बाराती अलग-अलग पहचाने जा सकें।

जब सारा इंतज़ाम ठीक हो गया तो दूल्हे के भाई ने अपने साथ बैठे पंडित जी से इजाज़त चाही। पंडित जी ने बड़े मीठे अंदाज़ में कहा, "तथास्तु"।

पंडित जी महाराज ज़िंदगी की आखिरी सीढ़ी पर खड़े थे। उनकी कमर पीछे की तरफ और ऊपर का धड़ आगे की तरफ झुक चुका था। जब चलते तो ऐसा लगता जैसे ज़मीन को नमस्कार कर रहे हों। उनका फूला हुआ पेट घुटनों तक चला गया था। रुखसारों और आँखों के नीचे की चमड़ी भी ढलकी हुई थी और सिर की चढ़ी हुई चमड़ी भी कहीं-कहीं से छूट चुकी थी।

महफिल में बादल से गरजने की आवाज़ आई और साथ ही बादलों की ओट से चाँद निकल आया। नूरजहाँ के पहले ही गाने से उसने ऐसा रंग बांधा कि सारे लोग बुत बन गए। कमर लचकाती, लंबी चोटी को लहराती हुई और मोटी-मोटी आँखों से तीर चलाती हुई नूरजहाँ जिस तरफ बढ़ती, गज़ब ही ढहा देती थी। उसने गाना शुरू किया:

"तमाशा तेरी कुन का ए मसीहा हम भी देखेंगे ,

मुर्दा होते हैं कितने ज़िंदा, ये हम भी देखेंगे"।

सब तो उसकी अदाओं ने दीवाना बना दिया, लेकिन दूल्हे के भाई और पंडित जी पर जैसे इश्क़ की बिजली ही गिर पड़ी। नूरजहाँ अब गाने के साथ-साथ तिरछी नज़रों से यह भी देख रही थी कि उसके तीरों की बौछार से कौन ज़ख्मी हुआ है, किसको कम चोट लगी है और कौन पानी मांग रहा है। लेकिन जब उसने देखा कि निशाना अच्छी जगह पड़ा है, यानी जहां उसे सब से कम कामयाबी की उम्मीद थी , वहीं पर तो उसका निशाना सबसे ज़्यादा ठीक बैठा, तो वह उन दोनों पर ही ज़रा और तेज़ निगाहें फेंकती और मुस्कुराती हुई उठी:

"कहा मैंने कि मरता हूँ, किया अफ़सोस कातिल ने,

कल मरना है आज मर जा, जनाज़ा हम भी देखेंगे"।

करम चंद (दूल्हे के भाई) का दिल हाथ से जाता रहा और पंडित जी भी उस से पीछे नहीं रहे। गरम-गरम, दस रुपये का नोट निकाल कर हाथ आगे बढ़ाया। नूरजहाँ ने नोट को कुछ नखरेली अदा से पकड़ा कि करम चंद मतवाला ही बन गया।

दूल्हा पास बैठा भाई की हालत देख रहा था। पंडित जी का इशारा पाकर करम चंद ने कुछ नोट आहिस्ता से हाथ पीछे करके उनकी मुट्ठी में थमा दिए। फौरन ही पंडित जी ने एक नोट नूर की तरफ बढ़ा दिया।

नोट पकड़ते हुए उसने पंडित जी की उंगली को ज़रा सा छू लिया। बस उतने से ही पंडित जी का दिल बेकाबू हो गया। अब तो चारों तरफ से नोटों की बारिश होने लगी, यहाँ तक कि नूरजहाँ के लिए समेटना मुश्किल हो गया और गाने व नाचने की फुर्सत ही न रही। वह अजीब-सी कटार-सी नज़रों से पंडित जी और फिर करम चंद की तरफ देखती हुई गाने लगी:

"ज़रा तीरे नज़र फेंको, जिगर और दिल भी हाज़िर है ,

कैसे मारते हो तुम, निशाना हम भी देखेंगे"।

पंडित जी बे-बस होकर "कुर्बान-कुर्बान" कहते उठे और उसके साथ ही उन्होंने हाथ में पकड़े सारे नोट उसकी तरफ उछाल दिए। करम चंद भी कहाँ कम था। उसने नोटों पर झपट्टा दे मारा। उनकी फराख-दिली देख कर लोग खुश हो रहे थे और नूरजहाँ की अनोखी ताकत की दाद दे रहे थे।

अब नूरजहाँ ने दूसरी ग़ज़ल शुरू की:

"साकिया! घनघोर पर काली घटा छाई न हो,

मय की प्याली बन के दुल्हन बाग में आई न हो"।

साथ ही उसने बोतल में से गिलास भर भर के नए सिरे से शुरू किया, जिसकी इब्तिदा पंडित जी से हुई। "वाह-वाह! क्या कहने! शाबाश!" की आवाज़ों से माहौल गूंज उठा।

इधर शराब का दौर और संगीत का बहाव, दूसरी तरफ रुपयों की झंकार और फिर शराब भी बे-हिसाब, भले अंदाज़। छोटे से लेकर बड़े तक, गरीब से लेकर अमीर को, सब के हिस्से में पेट भर आई। बिल्ली ने गिलास गिराया तो चूहों को भी कुल्ली करने का मन आया ।। जिन लोगों ने आज तक शराब की शक्ल नहीं देखी थी, मुफ्त मिलती देख कर वे भी न रह सके। खूब हाथ साफ किए। गैर

बरातियों की टोली के सरताज सरदार पाला सिंह और उनके बहुत से साथी भी मौजूद थे और उनमें हमारे ग्रंथी साहब भी शामिल थे

पृष्ठ 136

जब सब शराब के नशे में झूमने लगे तो उधर से आवाज़ें आनी शुरू हुईं, कोई पंजाबी "चोंदा चोंदा (रसीला)" गीत हो जाए।

नूर ने पंजाबी गीत शुरू किया:

"मैनु कमली कमली आखदे,

कमली वाला तूँ ,

मेरे दिल कोलों पुच्छ के देख ले

बहुत नहाला तूँ,

हूँ कलियां सेज विछानी आं,

भर-भर जाम पिलानी आं,

मैं साकी मैखाने दी,

बन मतवाला तूँ ।"

गीत गाती हुई नूर असली रूप में मैखाने की साकी बन गई। उस वक्त कौन बदनसीब था जो उसके हाथ से जाम पीकर मतवाला न बनता।

पाला सिंह और उसके साथी तो शराब के कीड़े ही थे, लेकिन भाई जी को कभी एक छटांक से ज्यादा नसीब नहीं होती थी। ऐसा खूबसूरत मौका जहाँ शराब पीने की तो बात ही छोड़िए, उन्हें पीने की इजाज़त थी, भाई जी ने आज पेट को अच्छी तरह भरा।

करम चंद और पंडित जी बस यही समझ रहे थे कि संसार में आना आज ही सफल हुआ है। नूर दूसरों को तो गिलास पकड़ा ही देती थी, लेकिन उन दोनों को अपने होठों से लगाकर खुद ही पिलाती थी। आहिस्ता-आहिस्ता नूर का नाज़ और ग़मज़ा एक कदम और आगे बढ़ा। इस बार वह दो गिलास लाती थी, उनमें से पहले एक घूँट खुद पीती, फिर दोनों के होठों के साथ गिलास लगा देती और उस अदा से कि जिसने दोनों को घायल कर दिया।

आहिस्ता-आहिस्ता जलसे का रंग बदलने लगा। हमारे बाराती अब किसी और दुनिया में थे। कोई आँखें बंद किए झूम रहा था, तो नूर के लिए नए-नए और अर्थपूर्ण शब्दों में प्यार का इज़हार कर रहा था, लेकिन उनमें से ज्यादा गिनती उन लोगों की थी जो बिल्कुल बे-सुध हो चुके थे। नूर ने आखिर अपना खेल खत्म किया और साज़िंदों को साज़ बांधने का इशारा किया। सारंगी ने आज ज्यादा मेहनत की थी।

पृष्ठ 137

इस लिए इसे पेट भर रुपयों और नोटों से भर गया था। साज़िंदों ने अपने साज़ संभालते हुए अपने चौबारे में—जो उनके लिए मखसूस (निश्चित) किया गया था, वहाँ पहुँच गए और दूसरे लोग भी झूमते हुए चल दिए। कई लोग बहुत ही ज़्यादा पी गए थे और वहीं लेट रहे।

(25)

रात के आठ बजे जब बचन सिंह सुंदरी के मकान पर पहुंचा, तो मायूसी से उसकी अजीब हालत हो गई थी।

सुंदरी ने उसकी हालत देखकर बड़ी घबराई और प्यार से उसका हाथ पकड़ कर बोली, "क्यों इतने परेशान हैं, खैर तो है?"

ठंडी सांस भरकर बचन सिंह ने चारपाई पर बैठते हुए कहा, "सुंदरी जी, मैं नाकाम रहा।"

और उसके बाद उसने बताया कि किस तरह वह सारा दिन फिरता रहा, लेकिन हर जगह उसे मुंह की खानी पड़ी। फिर उसने आज के तजुर्बे का हाल सुनाया कि दीवानपुर में किस तरह शराब की नहरें बही हैं और चांदी सोने की बरसात हुई है।

सुंदरी का गुलाबी चेहरा पीला पड़ गया। वह इस ख्याल से परेशान हो रही थी कि अपने महबूब के इस काम में वह कुछ भी मदद नहीं कर रही थी, जिस काम का बोझ दोनों का उठाना था। उसे बचन सिंह अकेला ही यह सब करते हुए देखकर कष्ट हो रहा था।

सोच-सोच कर आखिर उसके दिल में कोई ख्याल आया तो वह अचानक बोल उठी,

"तो फिर मेरी बारी है।"

"आप की?" बचन सिंह ने हैरानी से पूछा, "सुंदरी जी, आप इसे संवार सकती हैं? जिस काम को मैंने इतने दिनों की कोशिश के बावजूद नहीं किया, उस काम में आप किस तरह कामयाब हो सकती हैं?"

सुंदरी ने एतमाद (विश्वास) से बोली, "अगर कामयाब न होंगी तो भी क्या हर्ज है? मैं भी लौट आऊंगी। अपनी तरफ से कोशिश तो करनी चाहिए। कामयाबी देना या न देना वाहेगुरु के हाथ में है।"

"नहीं सुंदरी जी, मैं आपको इस खतरनाक काम में हाथ डालने की सलाह नहीं दे सकता।"

"आप सुनिए तो सही।"

"हाँ।"

"मुझे एक तरकीब सूझी है।"

"क्या?"

"टहनियां पकड़ने का ख्याल छोड़कर जड़ पर ही हाथ डाला जाए तो?"

"माने?"

पृष्ठ 138

"यानी इस रंडी से ही क्यों न जाकर समझाया जाए।"

बचन सिंह बेतहाशा हँसता हुआ बोला, "वाह सुंदरी जी! जिस मन्त्र से भिरड़ों (ततइयों) का छत्ता काबू में नहीं आ सकता, उस मन्त्र से आप साँप पकड़ना चाहती हैं। भला यह भी कभी हो सकता है?"

"बन्दूक की जिस गोली से आदमी किसी वक्त खरगोश को नहीं मार सकता, हो सकता है वही गोली शेर को मारने के काम आ जाए। आप मुझे इजाज़त दे दीजिए।"

"अच्छा, अगर आपकी यही मर्ज़ी है तो मैं आपको रोकना नहीं चाहता, लेकिन यह पानी बिलोने (मथने) वाली बात है। जो कुछ भी हो।"

"बहुत अच्छा। जैसी आपकी मर्ज़ी।"

"तो चलिए। मुझे अभी दीवानपुर ले चलिए। मैं भी एक बार अपना ज़ोर लगा कर देखूँ।"

"लेकिन इतनी रात गए आप यहाँ वापस कैसे आ सकेंगी?"

"वापस आने की ज़रूरत नहीं। मैं रात का बाकी हिस्सा आपके घर में ही रह कर गुज़ार लूँगी।"

"अच्छा चलिए।" कहने के बाद बचन सिंह ने सुंदरी को साथ लिया और दोनों दीवानपुर की तरफ़ चल दिए।

(26)

रात के दस बज चुके थे। नूरजहाँ के चौबारे पर अब तक बहुत से शरीफ़ज़ादों की भीड़ थी, लेकिन उसने सिरदर्द का बहाना करके बड़ी मुश्किल से इन लोगों से अपनी जान छुड़ाई। उसकी नौकरानी ने दरवाज़ा बंद करके नूर के लिए बिस्तर तैयार किया और वह जाकर लेट गई। उसकी आँख लगने ही वाली थी कि नीचे से फिर दरवाज़ा खटखटाने की आवाज़ आई। वह तंग आकर बुदबुदाने लगी, "कमबख्त दो पल नींद भी नहीं लेने देते, बड़ी मुश्किल से दफ़ा हुए थे।"

पहले तो उसके दिल में आई कि नौकरानी से कहलवा दे कि सो गई है, लेकिन फिर उसने दरवाज़ा खोलने के लिए भेज ही दिया। आने वाले के कदमों की आवाज़ सुन कर नूर उठ बैठी। इस वक्त उसने देखा तो नौकरानी के पीछे-पीछे एक सोलह-सत्रह साल की जवान लड़की चली आ रही है। पतली, लंबी, शाख़-सी (डाल जैसी) - बड़े प्यारे नाक-नक्श वाली। वह हैरान थी कि इस लड़की का यहाँ क्या काम? उसने इज़्ज़त से उसे अपने पास आने का इशारा करते हुए कहा, "आओ बेटी, तुम कहाँ से आई हो इस वक़्त?"

सुंदरी ने किसी औरत के मुँह से अपने लिए 'बेटी' का संबोधन शायद अब तक की ज़िंदगी में आज पहली बार सुना।

पृष्ठ 139

बचपन में जब वह देखती थी कि लड़कियों की माएँ 'बेटा-बेटी' कह कर बुलाती हैं, तो उसके दिल में कुछ होने लगता था। अगर मेरी माँ होती, तो मुझे भी ऐसे ही बुलाती; जैसे उसके कानों को यह छोटा सा लफ्ज़ सुनने का जनम ही से चाव (लालसा) था। वह जिन ख्यालात को दिल में लिए सीढ़ियाँ चढ़ी थी, वह इस 'बेटी' लफ्ज़ के सुनते ही इस तरह गायब हो गए जैसे आग जल जाने पर धुआँ। वह सोचती हुई आई थी कि औरत जात की इज़्ज़त को मिट्टी में मिलाने वाली इस नीच और बदचलन रंडी के सामने मैं कैसे जाऊँगी? जिसके कमरे की हर एक चीज़ पर बदकारी की परत चढ़ी हुई है, मैं उससे किस तरह बात करूँगी? उसका ख्याल था कि वह दूर ही खड़ी रहकर उससे बात करेगी, लेकिन अब वह खुद-ब-खुद खिंचती हुई उसकी चारपाई के पास जा पहुँची। इस वक़्त नूर की नौकरानी अपनी कोठरी में जा चुकी थी।

सुंदरी चुपचाप खड़ी रही। नूर ने फिर पूछा, "बच्ची! मुझसे कोई काम था?"

इस पहले लफ्ज़ ने सुंदरी के दिल पर कुछ ऐसा असर छोड़ा कि उसकी सारी नफ़रत धुल गई थी, लेकिन उसके दोबारा 'बच्ची' कहने पर सुंदरी के दिल में मोहब्बत की खिड़की सी खुल गई और वह सिर नीचा किए हुए बोली,

"हाँ माँ जी, काम था।"

नूर को उसकी अदा बड़ी प्यारी लगी और इस तरह 'माँ जी' के लफ्ज़ ने जैसे उसके कानों में मिसरी (मिठास) घोल दी। उसने सुंदरी का हाथ पकड़ कर उसे चारपाई पर बिठाते हुए बोला: "बताओ।" सुंदरी किसी हिचकिचाहट के बगैर चारपाई पर बैठ गई और उसकी तरफ़ देखती हुई बोली, "माँ जी, मैं एक अर्ज़ करने के लिए आई हूँ, लेकिन..." वह चुप हो गई।

नूर ने उसके चेहरे पर एक गहरी नज़र डाल कर उसके चेहरे के भावों को जानने की कोशिश की, लेकिन वह कुछ न समझ सकी। बाजू बढ़ा कर सुंदरी की कमर पर हाथ फेरते हुए, थोड़े प्यार से उसे अपनी तरफ़ खींचती हुई बोली, "बताओ बच्ची, बताती क्यों नहीं?"

रंडी के जिस हाथ को वह नापाक और नफ़रत के क़ाबिल समझती थी, वह हाथ अपनी कमर से छूते ही उसे अपने जिस्म में लतीफ़ सी (कोमल) गर्मी महसूस हुई। सुंदरी ने अपना दूसरा हाथ अपने दोनों हाथों में ले लिया और सिर को उसके बाजुओं से जोड़ कर बोली,

"माफ़ करना माँ जी, मेरा काम बहुत मुश्किल है। कहते हुए मुझे शर्म आती है।"

नूर ने दूसरा हाथ उसके हाथों से छुड़ा कर उसकी कमर के गिर्द लपेटते हुए कहा,

"नहीं बेटी, झिझक काहे की? तुम जो कहोगी मैं मानूँगी।"

लेकिन शायद वह यह जुमला जल्दी में कह गई थी, तभी सोचने लगी, मुझे बगैर बात पूछे इसे पूरा करने का वादा नहीं करना चाहिए था।

सुंदरी उसके जिस्म के साथ चिमटी हुई बैठी थी। वह बोली, "माँ जी..." और उसके मुँह से और कुछ न निकला।

पृष्ठ 140

वह अपने आप में इस तरह महसूस कर रही थी जैसे यह "माँ जी" लफ्ज़ कहने से वह रस के घूँट भर रही है और उसकी रग-रग में मोहब्बत और प्यार की सनसनाहट सी चढ़ जाती है। फूलों को सूंघने से

जिस तरह आदमी की प्यास नहीं मिटती और वह बार-बार उसे सूंघता है, उसी तरह सुंदरी का दिल चाहता था कि वह बार-बार इस लफ्ज़ को दोहराती रहे।

वह फिर बोली "माँ जी"।

नूर ने शायद उसकी बात नहीं सुनी। उसने उसे वैसे ही खींचकर अपनी चारपाई पर बैठा लिया और प्यार भरे अंदाज़ से उसके बालों को संवारने लगी। उसे कुछ देर के लिए इस बात का ख्याल ही न रहा कि वह उससे क्या पूछ रही थी। उसे कुदरत की कारीगरी का यह नाज़ुक सा खिलौना बहुत प्यारा लग रहा था। उसे इसमें से मिठास मिलने का एहसास हो रहा था - मातृ-मिठास का, जिस की गैर-मौजूदगी में उसका कलेजा हर वक्त जलता रहता था।

सुंदरी ने उसके सीने से अपना सर जोड़ लिया और फिर उसकी आँखों में आँखें डालकर बोली "माँ जी"।

नूर ने ध्यान से देखा।

सुंदरी की आँखें डबडबा रही थीं, तो उसने सिरहाने के नीचे से रुमाल निकालकर उसकी आँखें पोंछीं और फिर न जाने उस वक्त उसके होंठ सुंदरी के माथे पर जा जुड़े। बेबस और ज़बरदस्ती। सुंदरी ने अब अपने दोनों बाज़ू उसके गले में डाल दिए। नूर का दिल भर आया था।

उसे फिर बात पूछने का ख्याल आया और वह प्यार से उसकी कमर पर हाथ फेरते हुए बोली "बेटी! बता क्या कहना चाहती है, जो कहेगी, वह मानूँगी"।

सुंदरी उसके चेहरे से उसके वाक्यों की सच्चाई का अंदाज़ा करते हुए बोली "माँ जी, क्या आपको इस काम से नफ़रत नहीं होती?"।

"नफ़रत?" नूर ने उसकी आँखों में कुछ ढूँढने की कोशिश करते हुए बोली "मुझे इस काम से उतनी ही नफ़रत है जितनी तुम्हें है"।

"तो फिर आप यह काम छोड़ क्यों नहीं देतीं माँ जी?"।

"क्यों कि मेरे लिए इस दुनिया में और कोई जगह नहीं"। नूर की आँखों से एक बेगुनाह मज़लूम के तास्सुरात (भाव) झलक रहे थे।

"इसका मतलब?" सुंदरी ने सवाल किया।

"इसका मतलब तू नहीं समझ सकती बेटी"।

"क्यों माँ जी?"।

"तो शायद अभी कुंवारी है। क्यों?"।

"हाँ" सुंदरी ने आँखें नीचे करके जवाब दिया।

"इसी वजह से मैंने कहा है कि तुम अभी मेरी इस हालत को नहीं समझ सकतीं। वही औरत समझ सकती है जो शादीशुदा होकर ब्याहते ही विधवा हो गई हो, जिसे घर वालों ने दूध में से मक्खी की तरह निकालकर फेंक दिया हो और फेंकने वाला भी वही बदमाश, मक्कारों और शैतानों की दुनिया है"।

यूँ कहते-कहते नूर के चेहरे से बाग़ियाना (विद्रोही) और तेज़ जज़्बात झलकने लगे। उसके माथे की नसें फूल गईं और आँखों में जैसे ख़ून उतर आया था।

सुंदरी को अब उससे डर लगने लगा। जैसे उसके सामने कोई भूखी शेरनी दहाड़ रही हो। उसका दिल घबराने लगा। वह आँख बचाकर वहाँ से भाग निकलने की सोचने लगी।

नूर अपने दुःख पर आग बरसाते हुए बोली "इस दुनिया में जहाँ कदम-कदम पर धोखे की बाज़ी, बेईमानी, दोस्त-दुश्मनी और बेहयाई इंसानी शक्लों में बोल रही हो, जहाँ मेरी जैसी बदक़िस्मत औरत को रोटी हासिल करने के लिए सिवाए अस्मत (पवित्रता) फरोशी (बेचने) के और कोई चारा न रहे, जहाँ कोई बाप बनकर और कोई भाई बनकर मुझे वग़ैराह-वग़ैराह, घर के लोगों की इज़्ज़त से खेलना चाहता हो, जहाँ किसी माँ के कलेजे के टुकड़े [बच्ची] को उसकी छाती से नोचकर और कुत्तों के सामने बे-दरेग फेंक दिया जाए। इस दुनिया में सिवाए इस पेशे के और क्या बाकी बचता है। शायद मैंने अभी कहा था कि मुझे इस पेशे से नफ़रत है... नहीं-नहीं, बिल्कुल नहीं। मुझे इस पेशे से नफ़रत नहीं है, मैं क्यों नफ़रत करूँ उस चीज़ से, जिसकी मेहरबानी से आज शराफ़त का लबादा ओढ़े बड़े-बड़े अमीर, बड़े-बड़े लीडर और चौधरी मेरी देहलीज़ पर सजदे करते हैं। मैं तो इस पेशे को एक मोजज़ा, करामात, ख़ुदा की रहमत समझती हूँ"। इस पेशे ने मुझे क्या नहीं दिया? इज़्ज़त, दौलत, ऐश, शोहरत, सब ही कुछ तो दिया है। हाँ अगर इस ने किसी चीज़ से मुझे महरूम (वंचित) रखा है, तो सिर्फ़ मेरी ज़िंदगी के उन दिनों में ही, किसी ज़ालिम, किसी शैतान ने धोखे से मुझसे छीनकर... वह कितनी आग जल रही है मेरे अंदर...। नूर इस तरह हाँफने लगी जैसे उसका जिस्म टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा। वह सिरहाने पर मुँह के बल गिर पड़ी और फूट-फूट कर रोने लगी।

यह हालत देखकर सुंदरी का दिमाग चकरा गया। डर और परेशानी की वजह से उसकी आँखों के सामने गोल दायरे से बनने लगे और बिना कुछ कहे, असफलता की थकान से चूर-चूर होकर वहाँ से उठकर सीढ़ियाँ उतर आई। नूर को उसी हालत में छोड़कर। नीचे उतरकर वह जहाँ से आई थी, उधर ही चल दी लेकिन दस-पंद्रह कदम जाकर वो रुकी और फिर उसे पता ही न लगा कि वह कब...।

पृष्ठ 142

लौटकर नूर के दरवाज़े पर पहुँची।

ऐसा क्यों हुआ इसकी कोई वजह उसे नहीं मिल रही थी। सीढ़ियों का दरवाज़ा अभी तक खुला था। उसने जैसे ही पैर रखा, अंधेरे में उसे किसी चीज़ की ठोकर लगी और सुंदरी डरकर इस चीज़ से यूं चिमट गई जैसे सोया हुआ बच्चा डर कर मान से चिमट जाता है!

इधर सुंदरी के चले जाने के बाद नूर वैसे ही अपने दिल का गुबार आँखों और गले के रास्ते निकालती रही और जब उसने सीढ़ियों से उतरकर कमरे में नज़र दौड़ाई और देखा तो वह मुटियार वहाँ नहीं थी।

नूर को लगा जैसे कलेजे से जान खींची जा रही है और वह बिना कुछ कहे सीढ़ियाँ उतर गई। नीचे उतरते ही उसे अंधेरे में किसी बाहर से आई चीज़ की ठोकर लगी, जो उसकी छाती से चिमटी हुई थी। यह वही मुटियार थी—सुंदरी!

दोनों बिना कुछ बोले ऊपर चढ़कर वापस अपने कमरे में जा पहुँचे। कुछ देर बाद सुंदरी नूर की गोद में थी।

कुछ देर और ठहरकर नूर ने उसकी आँखों में झाँकते हुए पूछा, "बेटी, तेरा नाम क्या है?"

"सुंदरी"

"और तुम कहाँ रहती हो? बेटी, पता नहीं क्यों तुझसे मेरा दिल मोहब्बत करने लगा है। अगर तुम नीचे दरवाज़े में न मिल जातीं, तो मुझे दूर तक पीछे जाना पड़ता। हाँ, तेरा बाप क्या करता है बेटी?"

सुंदरी बोली, "वह मर गया है।"

"क्या काम करता था?"

"एक कलंदर था।"

"कलंदर? बंदर नचाने वाला?"

"जी।" नूर ने एक बार फिर नज़र भरकर उसके चेहरे की तरफ़ देखा और सोचने लगी। इतनी ख़ूबसूरती कलंदरों के घर? फिर बोली, "और तेरी माँ?"

"माँ नहीं है मेरी।"

"ओह बिचारी यतीम बच्ची! बेटी, कितनी मुद्दत हुई माँ को मरे?"

"पता नहीं जी।"

"पता नहीं?"

"मेरी कोई माँ नहीं थी।"

पृष्ठ 143

नूर इस जवाब को सुनकर हैरान रह गई और बोली, "तुम्हारे पैदा होते ही मर गई थी क्या?"

"नहीं।"

"तो फिर?"

"वह थी ही नहीं।"

"तो फिर तू कैसे पैदा हुई?"

"मैं पैदा नहीं हुई।" जल्दी से सुंदरी के मुँह से निकल गया, लेकिन फिर वह अपने इस बेवकूफाना जवाब का ख्याल करके दिल में शर्मिंदा सी होने लगी। उसने कहा, "हाँ सच, मेरा बाबा मुझे झाड़ी के नीचे से उठा लाया था।"

नूर के चेहरे पर उतार चढ़ाव देख सुंदरी सोचने लगी मैं उसकी नींद भी खराब कर रही हूँ। मुझे अब जाना चाहिए। वह उठती हुई बोली, "अच्छा माँ जी, मुझे अब इजाज़त दीजिए। आपका बहुत वक्त लिया। आपको शायद तकलीफ हो रही है। फिर कभी मिलूँगी।"

उसका बाज़ू पकड़कर बिठाते हुए नूर ने पूछा, "और बेटी, वो तुम्हें कौन से गाँव की झाड़ी से उठा कर लाया था?"

सुंदरी बोली, "और किसी गाँव से नहीं, इसी गाँव से बाहर अपनी झोपड़ी के नज़दीक से।"

इसके बाद सुंदरी ने उस जगह का अता-पता बताया और फिर अपने आज तक के हालात एक-एक करके सुनाए। जब उसने नूर की तरफ़ देखा, तो वह ज़ार-ज़ार रो रही थी। उसकी हिचकी बंधी हुई थी।

सुंदरी ने सोचा इसका भी कोई लड़का या लड़की मर गया होगा जिसे याद करके यह रो रही है। उसने प्यार से उसके साथ लिपटकर कहा, "माँ जी, आप क्यों रोती हैं?"

नूर से अब न रहा गया। उसने सुंदरी को ज़ोर से अपने गले से चिपटा लिया। रोते-रोते उसका जिस्म बेजान हो गया। वह कुछ कहना चाहती थी, लेकिन हलक (गले) से आवाज़ नहीं निकलती थी।

बड़ी मुश्किल से वह बोली, "मेरी बदनसीब बेटी! मैं ही तेरी माँ हूँ, जिसे धोखे से छीनकर तुम्हें जंगल में फेंक दिया गया था।"

"क्या सच?" कहने के बाद सुंदरी पर बेहोशी सी तारी होने लगी। इसके बाद ही कुछ देर तक वे एक दूसरे से गले लगकर रोती रहीं।

और जब दोनों के पास एक भी आँसू बाकी न रहा तो ख़ामोशी की हालत में वे एक दूसरी को देखती रहीं।

सुंदरी अंदर से प्यार की नदी उमड़ पड़ी और वह चीख मारकर नूर के गले से लग गई, "माँ जी... आप...।"

लेकिन नूर ने कोई जवाब न दिया। उसे पता नहीं क्या सूझा कि अचानक उठकर सुंदरी से अपना आप छुड़ाते हुए कई कदम पीछे हटकर बोली, "अरे मेरी बच्ची! मेरे इस नापाक और गुनाह-आलूदा (पाप से भरे हुए) जिस्म को छूकर तुमने कितनी बड़ी गलती की है।"

पृष्ठ 144

"बदकिस्मत माँ की बेटी! इस गन्दगी से नफ़रत कर, जिस जगह की हर चीज़ बड़ी गंदी और गुनाह से आलूदा (दूषित) है। इस जगह, ऐ मेरी पाक-दामन बेटी! तुझे एक मिनट भी नहीं ठहरने का हक़ नहीं। बस जल्द से जल्द तू यहाँ से..."

उसके साथ ही वह अपने दोनों हाथों से मुँह छुपाकर अपने आप को इस तरह समेट रही थी जैसे हवा में विश्लेषण होकर कमरे से उड़ जाना चाहती हो। अभी-अभी उसके दिल में जो प्यार की लहरें उछल-उछलकर शराब का काम कर रही थीं, उनकी जगह उसके दिल में शर्मिंदगी थी, पछतावा था—

"मेरी बेटी, अपने आप को रंडी की बेटी समझकर दिल में क्या ख्याल कर रही होगी: यह ख्याल आते ही वह पागलों की तरह दौड़कर एक कोने में छिप गई और सिसक-सिसक कर रोने लगी।

सुंदरी को उस वक्त कुछ देर के लिए पता ही नहीं चला कि वह क्या देख रही है। उसे यह सब कुछ सपना ही मालूम हो रहा था।

नूर की आवाज़ आई—वह पागलों की तरह बड़बड़ा रही थी जैसे कोई परीक्षा में विफल होने वाला छात्र अपने माता-पिता का गुस्सा दूर करने के लिए खुद को निर्दोष साबित करने की कोशिश कर रहा हो—उसकी आवाज़ थरथरा रही थी।

सुंदरी की तरफ़ उसने दोनों बाज़ू फैलाकर हिचकियाँ लेती हुई कहा—"नहीं बेटी! इसमें मेरा ज़रा भी क़सूर नहीं। मैंने जानबूझकर कुछ नहीं किया। यह सब कुछ मुझसे किसी ने कराया था, जब बात सुनोगी तो खुद मान जाओगी कि मैं बे-क़सूर हूँ।"

सुंदरी के जिस्म के जैसे कोई बोटियाँ नोच रहा था , उसके कलेजे पर बरछीयाँ चल रही थीं, वह फ़ौरन भागकर नूर के पास गई और उसे संभालते हुए बोली—

"माँ जी! आप के बे-क़सूर होने में मुझे ज़रा भी शक नहीं, लेकिन आप मुझे ये बताइये कि किस ज़ालिम ने आपको इस हालत तक पहुँचाया है?"

नूर ने बेटी के सवाल का जवाब देने के लिए खुद को संभाला और बिस्तर की तरह चारपाई पर बैठ गई। इसके बाद उसने शुरू से लेकर उस दिन तक सुंदरी को सारा हाल सुनाया, जिस दिन वह उसे उसी जंगल में छोड़कर चली गई थी।

यह सब सुनकर सुंदरी के दिल में आग की लपटें भड़कने लगीं। जिस समाज के ज़ुल्म-ओ-सितम से वह रूबरू हुई थी, जिस समाज ने उसके महबूब को और उसके पिता को सताया था, उसी समाज ने उसकी माँ का भी यह हाल किया है। यह जानकर सुंदरी के सिर से पाँव तक आग लग गई। इस वक़्त बचन सिंह के सारे उपदेश उसके दिल से ओझल हो गए। उसके लिए वहाँ रहना मुश्किल हो गया और वह उठकर भाप छोड़ते हुए इंजन की तरह लंबी साँसें लेने लगी। उसका जिस्म कांपने लगा और हाल सुनाते-सुनाते उसने खुद को काबू में रखने की कोशिश की।

फिर धीरे से बोली "माँ जी, फिर?"

नूर ने कहना शुरू किया: "बेटी, तेरी नन्हीं सी जान के लिए मेरे दिल में कितनी मोहब्बत थी, यह बताने की मुझमें ताकत नहीं।

पृष्ठ 145

खुले आसमान के नीचे तुझे चील और गिद्धों की खुराक बनने के लिए छोड़ दिया गया। जब तेरा ज़ालिम बाप (ताराचंद) मुझे बीमारी की हालत में छोड़कर चला गया, तो उस वक़्त मेरे पास घर में न कोई पैसा था और न रसोई में बर्तनों के अलावा कोई चीज़—सब कुछ वह पहले ही समेट कर जा चुका था।"

नूर ने देखा कि ताराचंद का ज़िक्र करते-करते नूर के चेहरे पर ही वो भाव आ जाते हैं जो किसी का ख़ून करने के लिए आते हैं। उसकी सांसें तेज़ हो गई थीं और छाती लोहार की धौंकनी की तरह फूल-पिचक रही थी।

यहाँ तक कि बात करते-करते उसे पानी पीने के बाद फिर बोलना पड़ा—"वह चला गया और मैं ज़मीन पर पड़ी एड़ियाँ रगड़ती रही। रात के कोई दो बजे थे—दूर-दूर तक झोंपड़ियों का कोई घर नहीं था। इतने में दो मुसलमान औरतें छतें फांदकर आईं। शायद उन्होंने मेरे घर से बच्चे के रोने की आवाज़ सुन ली थी। भला हो उनका जिन्होंने मुझे संभाला—जान बहुत ढीठ थी कि इतनी होने पर भी न निकली और मैं बच गई। उनमें से ही एक थोड़ा बहुत दाई का काम जानती थी। उसने बड़ी मेहनत से मेरी देखभाल की।

दूसरे दिन उन आदमियों ने करीब के खेतों के मोहल्ले में ख़बर की और मोहल्ले के चौधरी को साथ ही ले आए, लेकिन जब वह मेरे पास पहुँचा तो बदकिस्मती से एक मुसलमान ने, जिसकी बीवी ने वाकई मेरी जान बचाई थी, कह दिया कि हम रात से इसकी खिदमत कर रहे हैं। उसने यह भी कहा कि पहले इसके मुँह में पानी डालकर हम होश में लाए, फिर गर्म दूध पिलाया और कई तरह से इसके जिस्म को गर्माई दी, तब जाकर बड़ी मुश्किल से इसकी जान बची है।"

"यह सुनते ही मोहल्ले का चौधरी कानों पर हाथ रखकर वहाँ से भाग गया और जाते हुए कह गया कि मुसलमानों के हाथ का खाना अब हमारी देहलीज़ के अंदर नहीं आ सकता—इसका धर्म भ्रष्ट हो गया है। मुसलमान बेचारे हक्का-बक्का रह गए और अपने किए पर पछताने लगे। मैं उस वक़्त ज़रा भी होश में न थी। कुछ तो मेरे साथ ही गुज़री थी और कुछ अब चौधरी की बे-रहमी ने मेरे दिल को पत्थर कर दिया।

मैंने जोश में आकर मुसलमानों से कहा, 'भाई जी! अगर हिंदू मुझे सहारा देने के लिए तैयार नहीं, तो क्या आप भी दस दिन मुझे अपने घर में नहीं रखेंगे?'

उनमें से एक बोला, 'बहन जी! दस दिन छोड़ो, आप दस साल हमारे पास रहें, तो जैसी हमारी अपनी बेटियाँ-बहनें सूखी खा रही हैं, वही सब से पहले आपके सामने रखेंगी, लेकिन क्या करें, हमें तो फ़िक्र है कि आपके यहाँ रहने पर हिंदू समाज एतराज़ करेगा।'

मैंने गुस्से से तिलमिलाकर कहा, 'हिंदू समाज? जिस समाज ने मुझे गली के तिनकों की तरह हल्का बना कर रख दिया है!'"

"जिसने मुझे बिना किसी कसूर के मिट्टी में मिला दिया, क्या आप उस समाज को इंसानों की जमात समझते हैं? मैं ऐसे समाज से नफरत करती हूँ और मरते दम तक नफरत करती रहूँगी। अगर आपके दिलों में परमात्मा के बनाए किसी आदमी के लिए दर्द है, तो मुझे कुछ दिन यहीं रहने दीजिए।"

"फिर एक दूसरे ने कहने लगा, 'बहन, तो हमारी माँ जैसी ही बढ़कर है। जहाँ तक हमारा बस चलेगा, हम तुझे सुखी रखने में कोई कसर नहीं रखेंगे, लेकिन क्या करें, हम मज़दूर पेशे के लोग हैं और इतने गरीब हैं कि तेरे लिए किसी हिंदू रसोई का इंतज़ाम नहीं कर सकते।'

मैंने उनसे कहा, 'मुझे इसकी ज़रूरत नहीं। मैं आप ही के हाथों का पका हुआ खाऊँगी, मैं हिंदू धर्म से नफरत करती हूँ।'"

"उस दिन के बाद से वे मेरी खिदमत करने लगे और मेरा रोवाँ-रोवाँ उन्हें दुआएं देने लगा। तकरीबन दो हफ्ते मैंने उनके यहाँ गुज़ारे।"

नूर ने अपना बयान जारी रखा, "मेरे पैदा होने के पंद्रह दिन बाद, वही मोहल्ले का चौधरी मेरे पास आया और बड़े प्यार से कहने लगा, 'बीबी जी! मैं उस दिन से तेरे लिए गौर-ओ-फिक्र कर रहा था और अब तुझे दिल्ली के एक विधवा आश्रम में भेजने का इंतज़ाम किया गया है। वहाँ तुझे हर तरह का आराम मिलेगा और तालीम (शिक्षा) भी दी जाएगी।'"

"मैं पहले तो रजामंद न हुई, क्योंकि उस दिन का उसका सुलूक मुझे याद था, लेकिन मेरे मुसलमान भाइयों ने भी मजबूर किया और मैं जाने के लिए तैयार हो गई।"

"दूसरे दिन वह आया और मुझे तांगे में साथ बैठा कर ले गया। उसी दिन हम दोनों दिल्ली का टिकट ले रेलगाड़ी में बैठ गए। इसके धीरज दिलाने और मीठी ज़बान से मुझे काफी तसल्ली हुई। गाड़ी तेज़ चली जा रही थी। मैं खिड़की की तरफ़ पीठ किए बैठी थी। वह मेरे सामने वाली सीट पर था। आश्रम के सिलसिले में वह मुझे वहाँ के बढ़िया इंतज़ाम के बारे में कई बातें सुना रहा था। आखिर वह कुछ फिक्रमंद सा होकर बोला, लेकिन एक बात का तो अब ख्याल तक नहीं आया।"

"मैंने पूछा, 'क्या?'"

"वह बोला, 'इस आश्रम का यह उसूल है कि वहाँ दाखिल होने वाली की गोद में दूध पीता बच्चा नहीं होना चाहिए।'

"बेटी! तुझे उस वक़्त मैं दूध पिला रही थी। तेरे चेहरे की तरफ़ अरमान भरी नज़रों से देखती हुई बोली, 'फिर?'"

"वह बोला, 'अगले स्टेशन के नज़दीक ही मेरा एक रिश्तेदार रहता है। अगर तुम कहो, तो अभी लड़की को उनके हवाले कर दिया जाए, जब यह दूध छोड़ देगी, तो फिर हम इसे मंगवा लेंगे।'

मैं उसकी बात सुनकर कुढ़ गई और मेरे दिल पर पता नहीं क्या गुज़रने लगी। आखिर उसने कई तरह के धोखे से मुझे इस काम के लिए राज़ी कर ही लिया। इसके बाद अगले स्टेशन पर वह उतर पड़ा और मुझे भी उतरने के लिए कहा। एक तांगा करके हम एक गाँव पहुँचे।"

पृष्ठ 147

"यह वही दीवानपुर था, जिसके बारे में मुझे बाद में पता चला।"

"मुझे इस गाँव के बाहर दरख्त (पेड़) के नीचे बैठाकर वह खुद चला गया और थोड़ी देर बाद आकर कहने लगा, 'मैं अपने रिश्तेदारों के फलां लड़की को पालने का काम सौंप आया हूँ। तू जाकर उस झाड़ियों के पीछे, जो उस झोंपड़ी के नज़दीक ऊँची सी झाड़ी है, उसके नीचे बच्ची को रख आ। वे खुद आकर ले जाएंगे।'

मैंने अनजान ने डरते-झिझकते, दिल को काबू में करके इसी तरह किया, लेकिन बाद में मुझे पता चला कि यह काफिर था। असल में वह किसी को भी बच्ची नहीं सौंप कर आया था।"

"इसके बाद उसने मुझे दिलासा देकर इस बात का भरोसा दिलाया कि थोड़े दिनों के बाद जब लड़की ज़रा सयानी हो जाएगी, तो वह उसे मेरे पास पहुँचा देगा। मेरा ख्याल है कि अगर वह मुझे ऐसा न कहता, तो मैं वहीं पर बेहोश हो जाती।"

"दिल्ली पहुँचकर हम एक बड़े बैठक में ठहरे, जो कीमती सामान से सजी हुई थी। इसमें और कोई नहीं था।"

"वह मुझसे कहने लगा, 'यह मेरे एक दोस्त का मकान है।'"

"रात को वह एक नौकरानी को मेरे पास छोड़कर खुद यह कहकर चला गया, 'सुबह अगर तुझे विधवा आश्रम में दाखिल कराऊँगा।'"

"मैं ने रात को वैसे ही आराम से काटी, लेकिन तेरा ख्याल मुझे बार-बार बेचैन कर रहा था। सारी रात नींद न आई। नौकरानी ने हर तरह से मेरी खिदमत की, लेकिन मेरे आँसू नहीं थमते थे।"

"सुबह जब मैं नहाने-धोने से फुर्सत पाई, तो मैंने क्या देखा कि एक बूढ़ी सी औरत, जो लिबास और रहन-सहन से रंडी मालूम होती थी, आकर मेरे पास बैठ गई। मेरे कुछ भी बात करने से पहले ही वह बोली, 'बेटी! रात को किसी बात की तकलीफ तो नहीं हुई, मैं तो काम की वजह से नहीं आई , लेकिन यह बूढ़ी नौकरानी बड़ी वफादार है, उम्मीद है कि तुझे हर तरह आराम पहुँचा होगा।'"

"मैं उसकी बातें सुनकर हक्की-बक्की रह गई और उसे सिर से पाँव तक देखते हुए पूछा, 'यह मकान आप का है?'"

"हाँ बेटी, यह ख़ावंद-ए-करीम (ईश्वर) का है।"

"मैंने उससे पूछा, 'लाला जी अभी नहीं आए?'"

"वह बोली, 'कौन से लाला जी?'"

"मैंने कहा, 'वही जो मुझे विधवा आश्रम में दाखिल कराने लाए हैं।'"

"मेरी बात पर वह हंसती हुई बोली, 'बेटी! इस मकान पर लालाओं और खान साहबों की भला कौन गिनती कर सकता है? जहाँ दिन में सैंकड़ों आते हैं, सैंकड़ों जाते हैं, लेकिन मैंने समझ लिया है, तू उस आदमी के बारे में पूछ रही है जो...'"

पृष्ठ 148

"जो तुझे मेरे पास बेच गया है। वह तो रात की गाड़ी से ही वापस चला गया और अपना वादा—जो उसने तेरे साथ किया था—पूरा कर गया है। बेटी, वो तुझे विधवा आश्रम में ही दाखिल करके गया है और कहीं नहीं! और जिसे तू विधवा आश्रम समझती है, वह तो ऐसे ही ढकोसला है। यह तो असली विधवा आश्रम है, जहाँ हमारे मुल्क की हज़ारों-लाखों विधवाएं परवरिश पाती हैं और ऐश-ओ-इशरत की ज़िंदगी बसर करती हैं।"

"उसकी बातें सुनकर मुझे साँप सूंघ गया, लेकिन अब क्या हो सकता था। मैं बहुत रोई-पीटी, कई दिन भूखी प्यासी भी रही, लेकिन उसका किसी के दिल पर कुछ असर न हुआ। वह बूढ़ी भी मुतवातिर (लगातार) तरह-तरह के लालच देकर और बड़े-बड़े सब्ज-बाग दिखाकर मुझे काबू में करने की कोशिश में लगी रही। इस पर भी जब मैं नरम न हुई तो उसने एक जवान लड़की को यह काम सौंपा, जो दिन-रात मुझे खुश करने की कोशिश में लगी रहती थी। आख़िर मुझे इस रास्ते पर ले ही आई। फिर भी मुझे पत नहीं क्यों मैं अपनी ज़िद नहीं छोड़ी , लेकिन एक दिन उसने मुझे अपनी ज़िंदगी की राम-कहानी सुनाई और बताया कि वह भी एक एक ब्राह्मण की औलाद और बड़े घर की बहू बेटी थी, लेकिन इस समाज ने जो बे-इंसाफियाँ और ज़्यादतियाँ उसके साथ कीं, उसके नतीजे के तौर पर वह इस नीच पेशे में आ बैठी है। इसका हाल सुनकर मेरा दिल नरम हो गया और मैं अपनी इज़्ज़त को हमेशा के लिए बेचकर यह ज़लील पेशा इख्तियार करने के लिए तैयार हो गई।"

"इसके बाद में मैंने भी उसे अपना हाल सुनाया। मेरा हाल सुनकर जैसे वह तड़प उठी। उस से और भी मदद मिली मुझे इसे रास्ते पर लाने की। वह कहने लगी कि तुम उन लोगों के लिए तड़प रही हो, जिन्होंने तुम्हें बिना किसी कसूर के आसमान से गिराकर ज़मीन पर फेंक दिया? अरे! ऐसे लोगों और

ऐसे समाज के लिए तो तुम्हारा यह फ़र्ज़ होना चाहिए कि हम सरे बाज़ार इस समाज की नाक काट कर थैली में सजाएँ और बीच में चार-मुंह वाला दिया जलाकर शहर-दर-शहर गली-गली घूमें..."

"बस उसी दिन से मैंने अपने धर्म-ईमान, अपनी मान-मर्यादा, जो पहले ही एक तरह से खत्म हो चुकी थी, पाओं के नीचे रौंदकर एक तरफ़ फेंक दिया और गुरदई से नूरजहाँ बनकर गाना-बजाना सीखने में लग गई। शक्ल और सूरत तो परमात्मा ने मुझे पहले ही अच्छी दी थी, दिनों में ही अपने काम में इस कदर मशहूर हो गई कि मेरे नाम की धूम मच गई।"

"बेटी! आज तू देख रही है इस समाज की हालत? जब मैं हिंदू धर्म की एक पाक और बे-ऐब लड़की थी, तो मुझे इस समाज ने जूते की ठोकर मारकर इस तरह दूर फेंक दिया जैसे एक मुफ्त की चीज़ को फेंक दिया जाता है, लेकिन आज? मैं मुसलमान हूँ और साथ ही रंडी भी, लेकिन आज वही समाज और उसके बड़े-बड़े ठेकेदार—जो अपने आप को तहज़ीब - सभ्यता और मज़हब के ठेकेदार कहलाते हैं, आज मेरी बैठक पर आकर मेरे जूतों के तले चाटते हैं और इसमें अपनी इज़्ज़त समझते हैं। दूसरे लफ्ज़ों में जब मैं समाज का एक सेहतमंद और सुडौल अंग थी, उस वक़्त उसने मुझे गंदगी में फेंक दिया था और आज इस समाज का वह अंग जो गंदा और सड़ा हुआ है और इसमें..."

पृष्ठ 149

"कीड़े बिलबिला रहे हैं, जिनकी बदबू अच्छे-भले आदमी को भी कोढ़ी बना दे तो समाज के ठेकेदार उसे चूमने और चाटने के लिए सर माथे पर बैठाने के लिए राल टपकाते हुए तैयार हैं।"

"जानती हो बेटी? ये किस के ब्याह की धूम-धाम हो रही है? ये मेरे सौतेले बेटे का ब्याह है। अगर आधे घंटे पहले आतीं, तो मैं तुम्हें एक और तमाशा दिखाती। वही करमचंद दूल्हे का भाई, जिसने एक टुकड़ा रोटी का देने की बजाय मुझे घर से निकाल दिया था और सिर्फ एक रात एक नेक मुसलमान के घर ले जाने का बहाना बनाकर उसने मेरा हमेशा के लिए वहाँ रह जाना बर्दाश्त नहीं हो पाया था और जिसने मुझे घर से निकाल देने की तजवीज़ किया था, वह अभी यहाँ आया था और उसके साथ वो शैतान पंडित भी था। सुनना चाहती हो, वे दोनों किस काम के लिए आए थे? करमचंद आया था अपनी माँ से मोहब्बत के खेल खेलने, एक रंडी के कदमों में अपना सर रखकर उससे मोहब्बत की भीख माँगने और वह बूढ़ा ख़राण्ट पंडित, जिसने पहले मुझे बेटी-बेटी कह कर झूठा सहारा दिया था और बाद में मैं उसी की बदौलत तेरे बाप (ताराचंद) के पास पहुँच गई थी, वह आया था अपनी जवान बेटी से मोहब्बत की भीख माँगने—और सुंदरी! उन दोनों की मोहब्बत का दर्द ---हाय, मैं मर गया , हाय तेरे नैनों के तीरों ने मार डाला , हाय तेरी अदा ने लूट लिया , - अगर कभी तू सुन लेती और फिर ये सुनती कि एक बेटा -माँ से एक बाप-बेटी से मोहब्बत की भीख माँग रहा है—तो मेर ख्याल है की तू

खड़ी खड़ी ज़मीन में धंस जाती—और वो आज सारी रात मेरे दरवाज़े से न हटते, अगर मैं उनको कल के इकरार पर न टालती।"

"और ये भी सुनना चाहती हो कि मैं क्यों और क्या करने आई हूँ? मुजरा करने और फिर उन लोगों के दरमियान—ये तो मैं कभी भी नहीं करने वाली थी, अगर मेरे अंदर एक ऐसी ख़्वाहिश न होती, जिसने मेरा खाना-पीना हराम कर रखा है।

सुंदरी! मेरी बच्ची! मैं इन दोनों का लहू पीने के लिए आई हूँ और इसी लिए मैं कितने दिनों से इस शादी के इंतज़ार में थी। इस काम के लिए मैंने अपने दलाल भी मुक़र्रर किए थे। उस कसाई को जिसने मुझे रंडी के पास बेचा था, उस को तो मैं कब का ठिकाने लगा चुकी हूँ। आज तक उसकी किसी को कानों-कान ख़बर नहीं हुई। ये बहुत लंबी कहानी है और इसके क़त्ल का हाल सुनकर मैं तेरे नाज़ुक दिल को तकलीफ नहीं पहुँचाना चाहती। हाँ, एक अरमान है, जिसे मैं सीने में लेकर मरूँगी और वो है ज़ालिम (ताराचंद) के खून से हाथ रंगना, लेकिन अफ़सोस, हज़ार अफ़सोस—हज़ार कोशिश करने पर भी मैं उसे ढूंढ नहीं सकी। अगर कहीं एक बार मिल जाता—!"

सुंदरी में अब और सुनने की हिम्मत नहीं थी। उसका सारा जिस्म अंगारों की तरह जल रहा था। बचन सिंह के उपदेशों ने जो उसके ख्यालों को बदल दिया था, वह इस तरह निस्तनाबूद (नष्ट) हो गए जैसे कोई पौधे को बाड़ बनाकर बचा रहा हो, लेकिन तूफान का एक झोंका आते ही उसे जड़ से उखाड़ ले जाए—उसे पाओं के नीचे से ज़मीन निकलती हुई मालूम हुई और उस वक़्त मकान की हर चीज़ उसे घूमती हुई सी मालूम हो रही थी।

पृष्ठ 150

नूर की बातें सुनते-सुनते उसकी आखिरी बात को बीच में पकड़कर सुंदरी जोश में आकर बोली, "उसका लहू मैं पियूँगी। अगर हूँ तुम्हारी औलाद, तो उस का लहू पीकर तुम्हारे और अपने दिलों में लगी आग को बुझाऊँगी। मैं अभी से उसे ढूँढने की कोशिश शुरू कर दूँगी!"

यह कहती हुई सुंदरी वहाँ से उठी और जल्दी से सीढ़ियों से उतर गई। सुंदरी को ऐसा लगा जैसे इस पर पागलपन सवार है।

सुंदरी चली गई और नूर बुत (मूर्ति) की तरह बैठी रही। उसके दिमाग में अपने कहे हुए जुमले गूँज रहे थे, "मैं सच्चे दिल से इकरार करती हूँ... आज का वाकया उसे सपना सा लग रहा था।"

सुंदरी ने नीचे उतर कर देखा। बचन सिंह उसके इंतज़ार में इधर-उधर टहल रहा था। रात के दो पहर गुज़रने के बाद तीसरा शुरू हो गया था, जब बचन सिंह ने सुंदरी को आते हुए देखा।

(27)

घर जाकर उन दोनों ने तीसरी पहर बातों में ही बिताया। कमरे में पहुँच कर जब लैम्प की रोशनी में बचन सिंह ने सुंदरी का चेहरा देखा, तो वह डर सा गया। सुंदरी की आँखों में शोले भड़क रहे थे और चेहरे पर डरावनी और भयानक मुस्कुराहट थी।

वह जल्दी से सुंदरी का कंधा झिंझोड़ते हुए बोला, "सुंदरी जी! क्या बात है?"

"कुछ नहीं जी! खैर ही है," यह कह कर और फिर यह सोच कर कि बचन सिंह उसके दिल के ख्यालात को उसके चेहरे से पढ़ने की कोशिश कर रहा है, उसने सारी ताकत से अपने अंदर के तूफ़ान को रोकने की कोशिश की और फिर वह बात का रुख बदलती हुई बोली:

"फिर बारात वालों की तरफ़ गए थे?"

"नहीं घर पर ही रहा था," कह कर बचन सिंह ने पूछा, "सुंदरी जी! आप की आँखें आज बहुत लाल हैं। क्या बात है?"

वह उंगलियों से आँखों को इस तरह मलती हुई जैसे नींद के आने का ढोंग कर रही हो, बोली, "ये सब आप की ही कमाई का फल है।"

"क्यों?"

"आप ने काम जो ऐसा सौंप दिया था।"

सुंदरी के ऊपर के जुमले से ही बचन सिंह समझ गया कि वह अपने मकसद में किसी हद तक कामयाब हो गई है।

पृष्ठ 151

यकीन करने के लिए उसने फिर पूछा, "हाँ तो फिर सुनाइए क्या बना?"

"बना वही जो करने गई थी।"

"कामयाबी?"

"पूरी पूरी।"

"नामुमकिन।"

"मुमकिन से भी बढ़ कर।"

"यानी?"

उस के जवाब में सुंदरी ने इतना ही बताया कि उसने नूर से वादा ले लिया है कि वह मुजरा नहीं करेगी।

बचन सिंह यकीन करते हुए उसकी तरफ़ देख कर बोला, "सुंदरी जी, उसने आप को सुनाने के लिए मालूम होता है, धोखा दिया है।"

सुंदरी के चेहरे पर एतमाद (विश्वास) था। वह फिर बोली, "कुछ भी हो, लेकिन वह मुजरा नहीं करेगी। आप को पता चल जाएगा।"

"सुंदरी जी, अगर वह न नाची तो मैं समझूँगा कि आप ने रेत में से तेल निकाल लिया। मान लिए वह सुबह मुजरा नहीं करेगी, लेकिन बारात तो कहीं परसों वापस जाना है। आप को उस से यह वादा लेना चाहिए था कि जब तक वह दीवानपुर में है, मुजरा नहीं करेगी।"

सुंदरी ने होंठों पर मुस्कुराहट लाते हुए कहा, "बल्कि उस से भी ज्यादा।"

"क्या?"

"वह जब तक ज़िंदा है, यह काम नहीं करेगी। मेरा मतलब है कि यह पेशा हमेशा के लिए छोड़ देगी। समझ लीजिए कि कल वाला मुजरा उस का आखिरी मुजरा था।"

"ये किस तरह हो सकता है सुंदरी जी?" बचन सिंह ने इस शक को दूर करने के लिए कहा, "गिद्ध से हमेशा के लिए मुर्दे खाने की आदत छुड़ाकर, पूरी तरह से वैष्णव हो जाने का वादा लेना, ये नामुमकिन सी बात है।"

सुंदरी ने उसे किसी तरह यकीन दिला दिया, लेकिन जो कुछ इस पर गुज़री थी, उसने उसके बारे में कुछ नहीं बताया। उसे इस बात का खतरा था कि जिस बात का वह अपनी माँ के साथ वादा कर आई है, अगर उसे पता चल गया, तो वो उसकी हँसी उड़ाएगा बल्कि अपना असर डाल कर उसे अपने इकरार से रुकवा देगा।

बचन सिंह मारे खुशी के फूला नहीं समाता था। सब से पहले ही इतनी बड़ी कामयाबी—और फिर सुंदरी के हाथों—वह खुशी से झूमता हुआ बोला, "सुंदरी जी, तब तो हम ज़रूर कामयाब होंगे।"

अपने प्रीतम के लहजे को भांप कर सुंदरी बोली, "नहीं, बल्कि ऐसे कहिए कि हम कामयाब हो चुके हैं।"

"सुंदरी, हम दो से एक हो चुके हैं।"

"ये भी हो चुके हैं।"

"नहीं सुंदरी जी, अभी हम दो ही हैं। इस तरह कामयाबी भी अभी काफी दूर है जिस की तरफ़ हम ने अभी पहला ही कदम उठाया है।"

"क्या कहा है आप ने कि हम दो नहीं, नहीं, नहीं। हम हमेशा के लिए एक हैं। ये मिलन हमेशा कायम और अमर रहेगा।"

"रुमानी नुक्ता-ए-निगाह से ये ठीक है। लेकिन सुंदरी जी! समाज की आँखों को अभी हम एक नहीं दिखाई देते।"

सुंदरी ने प्यार से बचन सिंह का हाथ अपने हाथों में पकड़ कर बोली, "समाज? किस समाज की बात करते हैं? उस समाज के मुताल्लिक कह रहे हैं जिस की आँखों में दुश्मनी, नफरत, शैतानी, बे-कद्री की बीमारियों की वजह से मोतियाबिंद हो चुका है? इस समाज को अगर हम एक नहीं दिखाई देते, तो इसका मतलब ये नहीं कि हम हकीकत में एक नहीं हैं। इस की अपनी ही आँखों को एक के दो दिखाई देते हैं। ये कसूर उस की आँखों का है, जिन्हें करोड़ों जन्मों में भी ठीक नहीं किया जा सकता। समाज... आप इस समाज को आदमियों की जमात समझते हैं... लेकिन मैं..."

बात करते-करते सुंदरी का चेहरा तांबे की तरह लाल हो गया। उस की सांसें तेज़ चलने लगीं। अचानक ही उस का ये रंग-ढंग देख कर बचन सिंह डर गया। जब उस ने सुंदरी के चेहरे और आँखों की तरफ़ गौर से देखा तो उस के पागल होने का शक होने लगा।

कहते हैं जिस बीमारी को असाध्य रोग के नाम से पुकारा जाता है, वह अव्वल तो वो रोग ठीक ही नहीं होता, लेकिन अगर किसी कामिल हकीम की मेहनत से थोड़ा बहुत फर्क भी पड़ जाए, तो भी ज़रा सी बदपरहेज़ी हो जाने से उस की बीमारी का नश्तर सिरे से बढ़ जाना ज़रूरी बात होती है।

यही हालत उस वक़्त सुंदरी की थी। बचन सिंह बड़ी कोशिशों से उसे गलत रास्ते से मोड़ कर सीधे रास्ते पर लाने के लिए महज़ तैयार ही कर पाया था, अभी लाया नहीं था, लेकिन नूरजहाँ वाले वाकये ने उस के ख्यालात को वापस पहली जगह पर लाकर खड़ा कर दिया।

"सुंदरी जी, आज आप को क्या हो गया है?" बचन सिंह ने उस का बाज़ू झिंझोड़ कर कहा, "आज आप फिर हताश नज़र आ रही हैं, क्या बात है?"

पृष्ठ 153

फिर उसे ख्याल आया कि उस वक़्त इस सिलसिले में बात करने से सुंदरी की तबीयत और तेज़ हो जाएगी। ये सोच कर उस ने इस मामले को किसी और वक़्त के लिए उठा रखा और उस की तवज्जो दूसरी तरफ़ करने के लिए कहा, "खैर, इन बातों को अभी छोड़िए। हाँ, सच सुंदरी जी! हमें अब आगे के लिए प्रोग्राम बनाना चाहिए। इस सिलसिले में आप का क्या ख्याल है?"

इतनी देर में सुंदरी ने अपने आप को संभाल लिया था। अपने दिल की कमज़ोरी पर वो पछता रही थी कि जो बात वो बचन सिंह पर हरगिज़ ज़ाहिर नहीं करना चाहती थी, उस की झलक में उस ने अपने ज़ाहिरे से क्यों ज़ाहिर होने दी। लेकिन ये सोच कर कि उस सिलसिले में मज़ीद बात करने पर पता नहीं और क्या क्या मुँह से निकल जाए सुंदरी ने मौका ही मुनासिब समझा और बचन सिंह की बात के जवाब में कहने लगी, "लेकिन आप ने आखिरी खत में लिखा था कि अभी आप कहीं ज़्यादा दूर नहीं आ सकते। फिर इस हालत..."

"ठीक है, लेकिन जब तक यहाँ रहना है, इस दौरान में भी कोई न कोई काम जारी रहना चाहिए। इस पहले काम में कामयाबी देख कर सुंदरी जी! मेरा हौसला बहुत बढ़ गया है। लेकिन अब सिर्फ आप पर ज़्यादा भरोसा है। जिस काम को मैं हफ्तों परेशान रहने पर भी नहीं कर सका, उस को आप ने एक बार में ही कर दिया। इसी लिए मैं कहता हूँ कि हम जल्द से जल्द..."

सुंदरी बोली, "मैं ने तो कुछ भी नहीं किया। जो थोड़ा बहुत किया है, ये सब आप की तालीम और तरबियत का नतीजा है। नहीं, तो एक बंदरिया से भी क्या उम्मीद की जा सकती है। अच्छा तो फिर आप इस सिलसिले में क्या करना चाहते हैं?"

"मैं जो कुछ चाहता हूँ, वो वही सब है जो अभी बात कर रहे थे ।"

"यानी?"

"यानी ब्याह की रस्म, ताकि हम अपने मक़सद के हसूल (प्राप्ति) के लिए खुले आम मैदान में निकल सकें।"

सुंदरी ने हिचकिचाहट भरी हंसी के साथ बोली, "लेकिन क्या हम इस के बगैर अपने मक़सद में कामयाब नहीं हो सकते?"

"नहीं, सुंदरी जी! ये नामुमकिन है।"

"लेकिन मैं तो इसे नामुमकिन नहीं समझती।"

"तब आप अपनी राय ज़ाहिर कीजिए।"

"यही कि हम कुछ देर के लिए एक दूसरे से अलग रह कर काम करें और जब अपना काम पूरा कर लें तो फिर हमेशा के लिए दुनिया में एक हो जाएँ।"

पृष्ठ 154

"सुंदरी जी, आप की बातें सुन कर मुझे डर लग रहा है। मैं आप का मतलब नहीं समझा।"

"प्रेम के रास्ते में डर की कोई गुंजाइश नहीं। ये तो आज मैं ने आप के मुँह से गलत सी बात सुनी है। मेरे कहने का मतलब यह है कि..." बात करते-करते सुंदरी चुप हो गई।

बचन सिंह की घबराहट और बढ़ गई और वह बोला, "हाँ क्या मतलब है?"

"कहने का मतलब यह है कि आप... कुछ अरसे के लिए मुझे भूल जाइए।"

"आप को भूल जाऊँ?" तड़पते हुए बचन सिंह ने कहा, "सुंदरी जी, ये आप क्या कह रही हैं? नूर के मकान पर जाने से पहले तो आप की यह हालत नहीं थी।"

"हाँ, भूल जाइए। अगर भूल नहीं सकते तो मेरी याद को ही सुंदरी समझ कर हमेशा के लिए अपने दिल में रखिए।"

बचन सिंह की आँखों में आँसू भर आए। वह बेचैनी से सुंदरी का हाथ पकड़ कर बोला, "सुंदरी जी, परमात्मा के लिए ऐसी बातें न कीजिए। मेरे हाल पर रहम खा कर मेरी हालत का अंदाज़ा कीजिए।"

सुंदरी ने बचन सिंह का हाथ मज़बूती से दोनों हाथों में पकड़ लिया और दिल की बेचैनी को छुपाती हुई बोली, "आप इस तरह परेशान क्यों हो रहे हैं? मैं आप की और सिर्फ आप की हूँ—हमेशा के लिए आप की। आँसू बहा कर मेरे सब्र का पैमाना लबरेज़ (छलका) न कीजिए। मेरे वजूद का किला न तोड़िए।"

बचन सिंह के दिल की आग बुझाने के लिए उस वक़्त सुंदरी के पास जो पानी था, वो भी जैसे आग में बदल गया था और सुंदरी आग में मज़ीद आग डाल कर उसे बुझाने की कोशिश कर रही थी, जब कि अपने दिल की आग बुझाने के लिए सुंदरी को खुद पानी की ज़रूरत थी। लेकिन दूसरी तरफ़ भी आग ही थी। ये ऐसी ही बात थी कि जैसे एक मकान में आग लग गई हो लेकिन आग को बुझाने वाला भी जल रहा हो!

बचन सिंह फिर बोला, "सुंदरी जी, पहेलियाँ न बुझाइए। अपने दिल की बात साफ-साफ बताइए।"

सुंदरी ने ज़बरदस्ती हंसने की कोशिश करते हुए कहा, "साफ-साफ क्या बताऊँगी। सिर्फ मेरी वजह से आप को जो मुसीबतें उठानी पड़ी हैं, वे मुझसे छिपी नहीं हैं। अगर यहीं पर बस हो जाती तो भी मैं सह लेती। लेकिन मैं देख रही हूँ कि मेरी मौजूदगी के सबब (कारण) अभी आप को और बहुत कुछ देखना होगा, इसीलिए मैं चाहती हूँ कि अभी आप कुछ मुद्दत के लिए मुझे अपने आप से अलग कर दीजिए। जब तक आप..."

पृष्ठ 155

"की माता जी का दम है, उन की सबसे बड़ी ख्वाहिश पूरी कीजिए। घर में बहू देख कर उन्हें अपने सारे दुख भूल जाएँगे।"

बचन सिंह की छाती पर तीर चल रहे थे। वह एक हाथ से अपनी आँखें ढँक कर दूसरे हाथ से सुंदरी को चुप रहने का इशारा करते हुए बोला, "बस, बस सुंदरी जी! परमात्मा के लिए इस बात को खत्म कीजिए। अगर आप के अलावा मुझे किसी और से शादी करनी पड़ी तो वो सिर्फ मौत से होगी। इससे ज़्यादा मैं कुछ नहीं कह सकता और न ही सुन सकता हूँ।"

सुंदरी का इन बातों की तरफ़ ध्यान नहीं था। वह किसी गहरी सोच में ग़र्क थी। बचन सिंह ने भी उस वक़्त कुछ और कहना मुनासिब न समझ कर टालने की तैयारी की। उसका ख्याल था कि फिर कभी और वक़्त जब सुंदरी अच्छे मूड में होगी, तो वह उसके दिल से यह गलत ख्याल निकालने की कोशिश की जाएगी। उधर सुंदरी भी यही सोच रही थी कि ऐसी उम्दा दलीलें सोची जाएँ कि जिन के ज़रिये वह बचन सिंह को अपना हम-ख्याल बना सके। और वह उसके साथ महज़ रूहानी रिश्ता कायम रखते हुए, जल्द ही किसी अच्छे घराने में शादी करा के अपनी कांटों भरी ज़िंदगी को फूलों की खुशबुओं से महका ले।

सुबह की सफेदी आहिस्ता-आहिस्ता अंधेरे की जगह ले रही थी। रात का बाकी हिस्सा छलांगें मारता निकल गया। बचन सिंह उठकर अपने कमरे में जाने के लिए तैयार हुआ तो सुंदरी ने उसकी तरफ़ प्यार भरी मुस्कुराहट से देख कर कहा,

"जा रहे हैं?"

"फिर कभी वक़्त आप के वहम भरे ख्यालात को आप के दिल से निकालने की कोशिश करूँगा।"

"काश परमात्मा की ऐसी मर्जी होती कि ये ख्याल वहम ही होते।"

इसके बाद बचन सिंह उठ कर अपने कमरे में चला गया। सुंदरी की खुली आँखों में नूर घूम रही थी। और फिर उसी हालत में उसकी आँख लग गई!

(28)

तीन पहर जागते रहने के बाद चौथे पहर की ठंडी हवा ने सुंदरी की आँखों में नींद भर दी। लेकिन बड़े डरावने और खौफनाक सपनों वाली नींद, जैसे नींद ने उसे उठा कर किसी खूनी दुनिया में ले जा कर फेंक दिया हो, जहाँ की ज़मीन, आसमान, चाँद, सूरज, सब कुछ खून का बना हुआ था। उसकी आँखों और कानों के रास्ते जैसे छुरियाँ, तलवारें, नेज़े, भाले उसके दिमाग में उतरे जा रहे थे। ज़मीन का चप्पा-चप्पा खून पुकार रहा था। दरख्तों पर बैठे हुए पंछी भी खून ही खून गा रहे थे और नदियों, कुओं, तालाबों का सारा पानी खून...

पृष्ठ 156

में तब्दील हो गया था। वह जिस तरफ भी जाती, उसे खून के नगमें ही सुनाई पड़ते थे। उसके कपड़ों, बालों, उसकी आँखों और उसकी ज़बान से खून ही टपक रहा था। खून की नदी में बहती हुई वह गहरी गहराई में उतर रही थी, जहाँ छोटी-छोटी मछलियों से लेकर बड़े-बड़े मगरमच्छों के पेट खून से भरे हुए थे। पानी के उन इंसानों की ज़बानें इंसानों जैसी नहीं थीं और वह खून का शोर मचाते हुए एक-दूसरे के पीछे दौड़ रहे थे। शिकार और शिकारी, सब की ज़बान पर एक ही लफ्ज़ था,

'खून! खून! खून!'"

सुंदरी खुद को उस वक़्त खूनी नदी की तह तक पहुँची हुई महसूस कर रही थी। उसकी सांसें घुट रही थीं। उसने घबराकर बड़बड़ाते हुए नींद में चीख मारी, लेकिन शायद यह चीख उसके होंठों से बाहर नहीं निकली और अंदर ही अंदर गुम होकर रह गई। उसने डरकर करवट बदली तो उसे महसूस हुआ कि उसके दोनों हाथ छाती पर रखे थे। कमरे में सूरज की किरणें चमक रही थीं, जो सुंदरी को पीले रंग की बजाय लाल-लाल खून के रंग में रंगी हुई सी लगीं। खून का शोर अभी तक उसके कानों में गूँज रहा था।

उसकी आँखें खुल गईं लेकिन डर के मारे उसने फिर बंद कर लीं। खून का शोर अभी तक उसके कानों के पर्दे फाड़ रहा था। उसने फिर आँखें खोलीं और फौरन चारपाई से उठ बैठी। सूरज काफी चढ़ आया था।

उसे महसूस हुआ जैसे सारा मकान आदमियों से घिरा हुआ है और हर तरफ से खून की आवाज़ें आ रही हैं।

वह फौरन कमरे से बाहर निकली। सारा गाँव बचन सिंह के घर के इर्द-गिर्द खड़ा था, जिसे पुलिस ने हथकड़ी लगा रखी थी। उसकी माँ अपने आप को पीट-पीट कर रो रही थी। एक तरफ से आवाज़ आई, "बचन सिंह ने तीन खून कर दिए हैं, एक रंडी का, एक बूढ़े पंडित का और तीसरे दूल्हे के भाई करमचंद का।"

"हैं! तीन खून! और बचन सिंह ने?" सुंदरी की आँखों के सामने अंधेरा छा गया। उस वक़्त पुलिस बचन सिंह को ले जा रही थी।

मकान से निकल कर भीड़ को चीरती हुई सुंदरी बदहवास सी होकर बचन सिंह से जा लिपटी और एक चीख मारकर उसके कदमों में बेहोश होकर गिर पड़ी। भीड़ आगे निकल गई और वह उसी तरह पड़ी रही।

पृष्ठ 157

बचन सिंह को यह सब कुछ सपना सा मालूम हो रहा था लेकिन सुंदरी का हाल देखकर उसका दिल हाथ से जाता रहा। उसने कई बार पीछे घूम कर देखा। एक-दो बार खड़े होने की भी कोशिश की, लेकिन सिपाहियों के धक्कों ने उसे कोई पेश न जाने दी। पल दो पल में राह सुनसान हो गई।

सारे गाँव में खबर फैल गई, "बचन सिंह ने एक रात में तीन खून कर डाले!"

****

कुछ देर बाद जब सुंदरी को होश आया तो उसने अपने आप को मिट्टी में लथपथ रवानी वाले कमरे में पाया। रवानी के कुछ आदमियों ने उसे बेहोशी के आलम में उठाकर यहाँ पहुँचा दिया था। नज़दीक ही कई और आदमी भी थे। वह उठी और उस वक़्त फिर कहीं से उसके कानों में आवाज़ पड़ी,

"बचन सिंह ने तीन खून कर दिए हैं!"

सुंदरी की आँखों के सामने तारे नाचने लगे। उसे ऐसा मालूम होता था जैसे किसी बम ने उसके वजूद को रेज़ा-रेज़ा करके उड़ा दिया हो। पाँच मिनट तक वह उसी हालत में पड़ी रही। उसके दिमाग में सोचने की ताकत नहीं थी। उसके बाद उसकी आँखों के सामने अंधेरा छा गया और वह दोबारा बेहोश हो गई।

पता नहीं वह कितनी देर तक इसी तरह पड़ी रही। जब उसे दूसरी बार होश आया तो उसे यह मालूम होता था जैसे उसने बचन सिंह की गिरफ्तारी की खबर सपने में सुनी है।

वह पागलों की तरह उठकर दीवानपुर की तरफ जाने वाली सड़क पर चल दी। कई लोगों ने उसे रोका मगर वह तांगा जा रहा था, वह उस में बैठ गई।

बचन सिंह के घर पहुँच कर उसने देखा कि बचन सिंह की माँ चारपाई पर बेहोश पड़ी थी और कई पड़ोसिनें उसे होश में लाने की कोशिश कर रही थीं।

सुंदरी पागलों की तरह हर एक की तरफ देख रही थी लेकिन उसने कुछ भी न पूछा और न ही उसे किसी ने बुलाया। इतने में बचन सिंह की माँ की आँखें खुल गईं। सुंदरी भाग कर उसके करीब गई।

सदा कौर ने जब सुंदरी को सामने देखा तो उसका चेहरा गुस्से से लाल हो गया। बाजुओं से झटका देकर उसे दूर धकेलती हुई वह बोली,

"चली जा यहाँ से, कमज़ात! दफा हो जा, काले मुँह वाली! सारे झगड़े तेरी ही वजह से हुए हैं। जिस दिन से तेरा जला हुआ मुँह देखा था, उसी दिन से मेरा बेटा मिट्टी में म ईल गया है —करम जली, न तू आती और न मेरी दुनिया लुटती। जा, दफा हो जा। परमात्मा दोनों जहानों में तेरा मुँह काला करे!"

इस तरह कहती हुई सदा कौर इतने जोश में आ गई कि चारपाई से उठकर उसे मारने दौड़ी।

सुंदरी किसी और वक़्त ऐसी बातें सुनती तो पता नहीं क्या गुज़रती। लेकिन उस वक़्त उसने इन बातों को इस तरह बर्दाश्त किया जैसे एक जंगल में रहने वाला शेर जो कभी किसी चीज़ को नज़दीक नहीं फटकने देता था, अब पिंजरे में बंद होकर बंदरों और रीछों को अपनी नकल उतारते देख कर ठंडे दिल से सह लेता।

पृष्ठ 158

वह उलटे पांव लौटकर थाने की तरफ भागी।

जिस तरह शरीर पर पत्थर की चोट लगने से तुरंत दर्द महसूस नहीं होता, बल्कि कुछ देर बाद जब जख्म ठंडा पड़ता है तो आदमी दर्द से बेचैन हो जाता है, उसी तरह सुंदरी को रास्ता चलते हुए अपनी हालत का अंदाज़ा हुआ।

"हैं! खून के मुकदमे में?" यह बात जैसे अभी-अभी उसके ज़हन में आई। उसकी हालत उस समय उस हिरनी की तरह थी, जिसके सामने एक नहीं, कई शिकारी निशाना बांधे खड़े हों और पीछे जंगल में आग लगी हो, दाहिनी तरफ दरिया बह रहा हो और बाईं तरफ कोई बस्ती हो!

उसने जब एक बार फिर से अपनी हालत पर गौर किया तो वह डर से कांप उठी। उसका प्रीतम, जिसका वजूद उसके लिए सारे संसार के राज के बराबर था, खून के झूठे मुकदमे में फंस चुका था। उसकी माँ बेचारी कहीं की नहीं रही थी। उसके सगे संबंधी जो उस समय उसके इर्द-गिर्द हमदर्दी के तौर पर मगरमच्छ के आंसू बहा रहे थे, वे सब कच्चे धागे के सहारे थे, जो मोतीचूर के लड्डू की तरह हाथ लगाते ही टूट गए। इससे बढ़कर यह भी कोई आश्चर्य की बात नहीं थी कि सारा गांव जो पहले ही बचन सिंह का दुश्मन हो रहा था, अब वास्तव में बचन सिंह को खूनी स्वीकार कर लेता।

वह अपने आप को ऐसी नाव में सवार महसूस कर रही थी, जिसे किसी मगरमच्छ ने काबू में कर लिया हो और नाव लहरों के चक्कर में फंसी लड़की की तरह घूम रही हो। रोडू का दम दम था, उसे जालिमों ने पहले ही खा लिया था , माँ को भी, जो घटाटोप अंधेरे आसमान में एक बार बिजली की तरह चमक कर गायब हो गई। इसके अलावा उसे यह भी मालूम था कि रवानी में भी उसे रहने नहीं दिया जाएगा, क्योंकि पाल सिंह और उसकी पार्टी के लोग उससे डरते थे। यही वजह है कि बचन सिंह के हम-ख्याल होते हुए भी रवानी के लोगों ने उस समय उसकी कोई मदद नहीं की। यहाँ तक कि जो लोग बढ़-चढ़कर बचन सिंह की हिमायत का दम भरने वाले थे, उन्होंने भी कानों में रुई देकर रास्ता बदल लिया।

इस सारी हालत का अंदाज़ा लगाकर सुंदरी सोचने लगी,

"अब मेरा यहाँ रहना बेकार ही नहीं, खतरनाक भी है।" लेकिन जाऊं कहां और फिर कब, जब मेरा सब कुछ मौत के मुँह में पड़ा है? दीवानपुर के लोग पहले ही मुझे नफरत की निगाह से देखते हैं, या फिर नीच और अछूत समझते हैं।

उसे आज पहली बार इस बात का एहसास हुआ कि औरत जात किस कदर कमज़ोर और बेसहारा है। इन ख्यालों में डूबी वह कई मंसूबे बनाती-मिटाती रही, लेकिन किसी भी नतीजे पर न पहुँच सकी। सबसे बड़ा दुख उसे यह था कि वह अपने प्रीतम की कोई मदद नहीं कर सकती। उसे अपने आप से नफरत होने लगी।

पृष्ठ 159

और उस का यही दिल चाहा कि किसी और दुख को देखने से पहले ही अपनी ज़िंदगी का खात्मा कर ले। इस तरह करने से सारे दुखों से उसकी जान छूट जाएगी। लेकिन अंदर की किसी पोशीदा ताकत ने उसे ऐसा करने से बाज़ रखा। वह बार-बार सोचती,

"मेरी माँ ने कितनी जल्दबाज़ी की!"

अगर उसने अपने दुश्मनों को मारकर खुदकुशी ही करनी थी तो कोई चिट्ठी ही लिखकर रख जाती, जिससे दूसरों पर मुसीबत न पड़ती!

इन्हीं ख्यालों में खोई हुई सुंदरी थाने पहुँची। उसने बचन सिंह से मुलाकात करने की बहुत कोशिश की, लेकिन पुलिस के धक्कों के सिवा उसे कुछ भी हासिल न हो सका।

सारा दिन वह इसी तरह परेशान होती रही। गांव के कई रसूख वाले आदमियों के पास जाकर माथा रगड़ा, मिन्नतें कीं कि किसी तरह पुलिस वालों से कहकर एक बार बचन सिंह से मुलाकात करा दी जाए, लेकिन उसकी किसी ने न सुनी। जहां जाती झिड़कियां या फिर ताने मिलते। बस यही दो चीज़ें उसके पल्ले पड़ीं। आखिर होती हुई परेशान हाल वह अपनी कोठरी में जा रही।

एक पूरा दिन उसने इस तरह गुज़ारा जैसे एक परिंदा जो अभी-अभी आसमान में उड़ रहा था, किसी ने अचानक उसके पंख तोड़कर आग में फेंक दिया हो। रात को वह भूखी और प्यासी पड़ी रही। आज उसे किसी ने न बुलाया और उसे इसकी ज़रूरत भी नहीं थी।

सुबह होते ही उसे बाहर से किसी की आवाज़ आई। यह एक पुलिस का सिपाही था, जिसके हाथ बचन सिंह ने एक चिट्ठी भेजी थी। चिट्ठी देकर सिपाही फौरन चला गया और सुंदरी अंदर आकर पढ़ने लगी:

"सुंदरी जी,

आह! जिस बात का सपने में भी ख्याल नहीं था, वह हो गई।" दिल की सारी उमंगों और ख्वाहिशों पर जैसे एक बार ही ओले पड़ गए। "मेरे पकड़े जाने की वजह से आपके दिल की जो हालत होगी, यह मुझसे छिपी नहीं है।" उफ किस कदर जलन है, जैसे दिल में भट्टी सुलग रही हो। "जब मैं देखता हूँ कि अपनी हीरे जैसी महबूबा, जिसको मैंने बड़ी मुश्किलों से इसे हासिल किया था, उसे अपनी मालाओं म्कें जड़कर गले में पहनूंगा, वह हीरा खाक में मिल रहा है और दुनिया... आह! अहमक दुनिया की नज़रों में इसकी कीमत एक फूटी कौड़ी भी नहीं हैं।"

"सुंदरी जी, काश! मैं आपको एक बार देख सकता।"

लेकिन मैं बहुत बदनसीब हूँ। "मेरे ऐसे बदनसीब के नसीब में इतनी बड़ी खुशी कहां?" सुंदरी जी, आपके खत के वह अल्फाज जिनको पढ़कर मैंने हंसकर टाल दिया था, आज लफ्ज़-ब-लफ्ज़ सच निकले। आपकी वह फूल और हवा वाली मिसाल एक गहरा फलसफा थी, जिसे मैं आज ही समझ सका हूँ।

मेरी देवी! दिल कह रहा है कि अब हम हमेशा के लिए बिछड़ने लगे हैं। अंदर से कोई चीज़ गवाही दे रही है कि मिलन का सुख हमारी किस्मत में नहीं था, जितना हमें मिल चुका है। यह मुकदमा मुझ पर इकट्ठे तीन खून का बनाया गया है। सुंदरी जी, यह कोई मामूली मुकदमा नहीं है जिससे बचने की उम्मीद कर सकूँ। गांव वाले जिस ढंग से यह मुकदमा खड़ा कर रहे हैं और जो कुछ मेरे मुताल्लिक मेरे सुनने में आया है, अगर वह सच है तो समझिए कि मेरा आपका मिलन बस इतना ही था।

लेकिन सुंदरी जी! क्या आप को भी मेरी सच्चाई में शक है? क्या मेरे खूनी होने के लिए आपका दिल भी गवाही देता है? मुझे भले ही शक सारी दुनिया कातिल ठहराए, अदालत भी मुझे खूनी मानकर फांसी पर लटका दे, मुझे कोई दुख नहीं होगा। लेकिन सुंदरी जी, अगर आप भी मुझे खूनी समझेंगी तो मेरे लिए कयामत होगी। ज्यादा लिखने का वक्त नहीं है। यह खत आप तक पहुंचाने के लिए भी बहुत मुश्किल से इंतज़ाम किया है, यह आदमी फिर आपके पास आएगा। खत का जवाब इसे छुपाकर देना क्योंकि बेचारे को अपनी इज्जत और नौकरी का भी खतरा है।

इसके साथ ही आज एक खत ज्ञानी जी को लिख रहा हूं। वह आजकल हरद्वार में ठहरे हुए हैं। वह फौरन आकर आपको अपने साथ ले जाएंगे। दीवानपुर के करीब रहना भी आपके लिए खतरे से खाली नहीं है।

एक बात और बताऊं, अगर आप अपनी खैर चाहती हैं तो मेरे साथ मुलाकात करने की कोशिश न कीजिएगा। खत वगैरह मैं किसी न किसी तरह लिखत ही रहूँगा , बस चिट्ठियों को ही मुलाकात समझिएगा। जानती हैं, आपको देखकर मेरा क्या हाल होगा? मेरे सब्र का बांध टूट जाएगा, यहां तक कि मौत आने से पहले ही मैं मर जाऊंगा। इसके अलावा आपका हाल भी मुझसे कुछ कम नहीं होगा।

मैं देखना चाहता हूं कि आप इस इम्तिहान में अपने दिल को किस कदर साबित कदम रखती हैं। असल में सुंदरी जी, यह बात मैं लिख तो रहा हूं, लेकिन मेरी अपनी हालत भी बहुत खराब है। थाने की घड़ी का एक-एक घंटे बाद टन करना मुझे यूं महसूस होता है कि उसके हर एक घंटे के साथ मेरे लिए कोई नई मुसीबत खड़ी हो रही है। दिल में दर्द उठता है और कलेजा मुंह को आने लगता है। क्या बताऊं सुंदरी जी, मैं आपको अपने दिल का हाल! मैं आपको तो धैर्य रखने को कह रहा हूं, लेकिन यहां मुझे धैर्य देने वाला कोई नहीं। अच्छा! किस्मत में जो लिखा है वह होकर ही रहेगा। इस वक्त मुझे महसूस हो रहा है कि जैसे मैं सच में आपसे बातें कर रहा हूं और उनसे इतना सुख मिल रहा है कि पल दो पल के लिए दुनिया के सारे दुख, भविष्य के दुख, ये सब चीज़ें मुझसे दूर हो गई हैं।

आपका--- बचन सिंह

पृष्ठ 161

चिट्ठी पढ़ते-पढ़ते सुंदरी के चेहरे पर कई रंग आए, कई रंग गए। आखिर में पहुँचने पर उसका माथा चमक रहा था, आँखों से दृढ़ता झलक रही थी और एक तरह का विश्वास उसकी रग-रग में दौड़ रहा था। वह फौरन उठी और कलम-दवात लेकर लिखने बैठ गई:

मेरी ज़िंदगी के मालिक!

चिट्ठी पढ़ी, आप इतनी जल्दी घबरा गए? एक मर्द और वह भी बेकसूर होते हुए भी घबराए किस बात से? किसी दुख के नज़रिए से या मेरे ख्याल करके?

अरे मेरे भोले प्रीतम, इस बात का दोबारा जिक्र न करना। मेरा दिल, जो आपके साथ पहली मुलाकात के वक्त फूल की तरह नाजुक था, वह बाबा जी की मौत और आप पर जुल्म होते देख कठोर हो गया था, मगर आपकी चिट्ठी पढ़ने के बाद तो यह फौलाद का बन गया है!

प्रीतम, अगर दुनिया की निगाह में मेरी कीमत फूटी कौड़ी भी नहीं, तो मैं खुद इस स्वार्थी और मक्कार दुनिया को कौड़ी के चार-चार के बराबर भी नहीं समझती। क्या कहा कि आप मुझे सुखी नहीं बना सकते? यह आपकी भूल है प्रीतम। जो सुख आपने मुझे दिया है, वह सिर्फ मेरे ही हिस्से में आया है। जब मैंने अपनी चिट्ठी में फूल और हवा की मिसाल दी थी, तब मैं मोहब्बत की राह में अनजान थी, लेकिन अब मैं इसकी अहमियत से, इसकी बुराई से सिर्फ वाकिफ ही नहीं हो गई, बल्कि इसे अपनी ज़िंदगी का सहारा बना चुकी हूँ। यही वजह है कि किताबें अब मुझे अर्थ और अनुभव से खाली मालूम होती हैं।

मेरे मालिक! पहले मेरी मोहब्बत आपके जिस्म से थी, जिसकी वजह से मुझे खतरे थे। लेकिन अब मेरा प्रेम आपकी रूह से है, इसलिए अब मुझे कोई परवाह नहीं और मैं जानती हूँ कि कयामत तक आप को मुझसे कोई छीन नहीं सकता।

मेरे सरताज! आप किस ख्याल से घबरा रहे हैं, मौत से? तो क्या, इस मौत से, जिसे दुनिया ज़बान में मरना कहते हैं, असल में इसका नाम ज़िंदगी की मंज़िल का पड़ाव है? मालूम होता है ज़िंदगी की मंज़िल के इस पड़ाव की आपको कद्र नहीं और या फिर खबर ही नहीं है। मेरे सरताज, जहां जाकर हम एक रूह हो जाएंगे, जहां पहुँच कर दुनिया की नफरत से भरी आँखें हमारे लासानी प्रेम में रुकावट नहीं डाल सकेंगी और जहां पहुँचकर हमें मोहब्बत का वह तख्त नसीब होगा, जिसके बाद हमारे एक-दूसरे के गले में पड़े बाजूओं को न इन्द्र और न ब्रह्मा ही..

पृष्ठ 162

जुदा नहीं कर सकते, क्या आप इसे मौत का नाम देते हैं? यह नाइंसाफी है मेरे प्रीतम, घोर नाइंसाफी! क्या आपका दिल मानता है कि हम हमेशा के लिए बिछड़ रहे हैं? नहीं, मेरे प्रीतम नहीं। मेरा दिल कह रहा है कि हम हमेशा के लिए दो से एक हो रहे हैं।

आपकी सच्चाई और इस पर मुझे शक है? यह एक अनहोनी बात है। मैंने न सिर्फ आपको बेगुनाह समझती हूँ, बल्कि यह भी जानती हूँ कि असली कातिल कौन है। लेकिन यह किसे बताऊं, क्या मेरी बात का कोई एतबार करेगा? मेरा यकीन है कि अनवर (नूर) ने ही उन दोनों को कत्ल करके खुदकुशी की है। जब मैं उसके साथ बातें करने के बाद चली आई, तो अनवर ने दोबारा उनको बुलाया होगा और उसके बाद यह वारदात कर दी। लेकिन मैं बार-बार यही सोच रही हूँ कि इस सच्चाई को अदालत में किस तरह ज़ाहिर करूँ?

ज्ञानी जी को आपने बुला भेजा है। यह अच्छा किया, लेकिन आपको मौत के मुँह में छोड़कर उनके साथ हरिद्वार चली जाऊं, यह मेरे लिए नामुमकिन है। क्या मैं आपको बचाने के लिए कुछ भी न कर सकूँगी? बेशक मैं जानती हूँ कि मेरे जैसी लाचार और कमज़ोर लड़की ऐसे कामों में कभी लायक नहीं हो सकती। लेकिन क्या मैं आपके शुरू किए हुए सुधार के काम को अधूरा छोड़ दूंगी? अगर ज़्यादा नहीं कर सकती, तो अपने कलम के ज़ोर से ही अपने मुल्क में सुधार की ऐसी तूफानी लहर ले आऊंगी, जिसकी जद में आकर समाज का कूड़ा-कर्कट बह जाएगा।

लेकिन मेरे स्वामी! आपका दिल इस कदर कमज़ोर है, इस बात का मुझे कभी ख्याल नहीं था। दिल को मज़बूत कीजिए और डर और खौफ को पास न फटकने दीजिए। मैं आपसे मुलाकात करने के लिए कल से कोशिश कर रही थी। आपने मिलने से रोका है, लेकिन एक बार मिलने की ख्वाहिश पूरी करने के लिए मैं माफ़ी चाहती हूँ।

प्रीतम! इम्तिहान में मज़बूत रहने के लिए मुझे ताकीद कर रहे हैं, लेकिन मेरी तरफ से बेफिक्र हो जाइए, मैं अपनी आप पर दिल को तसल्ली दे रही हूँ। मेरे सरताज, अगर मुझे सुखी रखना चाहते हैं, तो मेरे सुखी होने का राज़ इसी बात में है कि इसके जवाब में आप पूरी हिम्मत और हौसले से डटे हुए दिखें। हमेशा के लिए आप मेरे वजूद में जज्ब हो चुके हैं।

आपकी --सुंदरी

(29)

जिस दिन से बचन सिंह गिरफ्तार हुआ था, सुंदरी ने पढ़ने-लिखने का काम नहीं किया, न ही उसे अपने तन-बदन की होश रही। वह सुबह से लेकर शाम तक कभी किसी के दरवाज़े, कभी किसी के घर भागी-दौड़ी फिरती, कभी वकीलों के पास, कभी मुंशियों के घर, कभी गवाहों की मिन्नतें करती।

उसे खाने-पीने या कपड़े बदलने की भी सुध नहीं थी। लेकिन इतना कुछ करने पर भी उसे कहीं से कामयाबी की उम्मीद नहीं दिखी। बचन सिंह की माँ की तरफ से भी उसके रिश्तेदारों की अंदर ही अंदर यही कोशिश थी कि बचन सिंह को बेदखल कर उसकी जायदाद और ज़मीन पर कब्ज़ा कर लें।

दूसरी तरफ पाला सिंह भी इसी तलाश में है कि कौन सा वक़्त आए जब सुंदरी को हासिल करके वह अपने घर का दरवाज़ा खोले। उसके रास्ते की रुकावट काफी हद तक दूर हो चुकी थी। पाला सिंह की साज़िश से सारा खेल ऐसा बना था कि बचन सिंह के बचने की कोई उम्मीद बाकी नहीं रही थी।

पुलिस की कार्रवाई मुकम्मल हो चुकी थी और ज़ेर-ए-दफा 302 बचन सिंह का चालान हो चुका था। सेठ रलाराम और उसके बेटे ने पुलिस के पास बयान दिया कि बचन सिंह नूर का मुजरा रोकने के लिए हमें कई तरह की धमकियां दे रहा था। लेकिन जब 'हम' ने उसका कहा माना तो कहा गया, "अच्छा, मैं इसे दूसरी तरह रोकूंगा!"

पाला सिंह ने लिखवाया: "वाकये से एक दिन पहले बचन सिंह मुझे मिला था और कहता था कि मुझे कोई ऐसा आदमी बताओ जो डेढ़ सौ रुपये में तीन खून कर सके, लेकिन जब मैंने उसे मना किया तो कहने लगा कि मैं खुद सब कुछ कर लूँगा।"

इसके अलावा पाला सिंह के साथियों में से किसी ने कहा, "मैंने उस रात को उसे नूरा के दरवाज़े के चक्कर लगाते देखा था।"

किसी ने कहा, "मैंने सुबह के वक़्त उसे कुएं पर बिगड़े हुए कपड़े धोते देखा था।"

और किसी ने कहा, "हादसे वाली रात को मैंने उसे खुद नूर के चौबारे पर जाते देखा था , करमचंद और पंडित जी भी नूर की बैठक में कुछ मशवरा करने के लिए मौजूद थे।"

इसके अलावा एक लोहार ने , वह छुरा जो लहू से भरा हुआ नूर के चौबारे से मिला था, देखकर कह दिया, "मेरा ही बनाया हुआ है और बचन सिंह मुझसे ले गया था।"

सारा मुकदमा ही बचन सिंह के खिलाफ था। सुंदरी ने सबसे पहले वकील से, जो बचन सिंह की माँ ने खड़ा किया था, अपनी और नूर वाली मुलाकात का सारा हाल बताने का इरादा किया, लेकिन इससे पहले उसने यह सारा वाकया बचन सिंह को बताना ज़रूरी समझा।

दो दिन की भाग-दौड़ के बाद सुंदरी को मुलाकात की इजाज़त मिल गई।

पृष्ठ 164

(30)

जेल की सलाखों में बचन सिंह बंद था। जिस सिपाही की मदद से इसने सुंदरी को खत भेजा था, उसी की मदद से आज बचन सिंह से सुंदरी की मुलाकात का वक्त तय हुआ था।

शाम के पांच बजे का वक्त था। मुलाकात वाले कैदियों को कोठरियों से निकालकर गलियारे के करीब सलाखों वाले बरामदे में लाया गया। इनमें बचन सिंह भी मौजूद था।

सलाखों में से झांकता हुआ बचन सिंह किसी का इंतज़ार कर रहा था। उसने सुंदरी को दूर से आते देखा। वह कलेजा पकड़कर बैठ गया। सुंदरी की हालत उस वक्त अवर्णनीय थी। उसके जिस्म में जैसे खून का निशान तक नहीं था, चेहरे का रंग बिल्कुल मुर्दे जैसा था। वह इस तरह लड़खड़ाती हुई चली आ रही थी जैसे अब गिरी, अब गिरी।

"सुंदरी जी, आप का वह हौसला कहां गया है? आप तो मुझे अक्ल दे रही थीं!"

बचन सिंह ने सलाखों से हाथ निकालकर सुंदरी का बाजू हिलाते हुए कहा। लेकिन सुंदरी को होश ही नहीं था कि उससे क्या कहा जा रहा है। इतने दिनों तक वह यही समझ रही थी कि उसका दिल बहुत मजबूत है। उसने एक आंसू भी नहीं बहाया था, लेकिन बचन सिंह से सामने होने की देरी थी कि उसकी आंखों से आंसुओं की नदियां बह निकलीं। शायद ये इतने दिनों से रुके पड़े थे।

"सुंदरी जी, वक्त बहुत थोड़ा है।" बचन सिंह ने उसे दिलासा देते हुए कहा। सुंदरी को अपनी गलती का एहसास हुआ। उसके आंसू एक दम बंद हो गए और आंखें पोंछती हुई बचन सिंह की तरफ देख कर बोली, "मैंने बहुत वक्त ज़ाया कर दिया है"।

बचन सिंह ने खांसकर अपनी आवाज़ को ठीक करते हुए कहा, "नहीं, सिर्फ पांच- मिनट हुए हैं। बीस मिनट अभी बाकी हैं। सुंदरी जी! इसी वजह से मैंने आपको लिख भेजा था कि मुझसे मुलाकात करने का कोई फायदा नहीं होगा"।

"लेकिन मैं क्या करती," सुंदरी ने हिचकी लेकर कहा, "एक काम के लिए मिलना ज़रूरी था"।

"कौन सा काम है?"

"मैंने आपके साथ धोखा किया है। असली बात आपको नहीं बताई।"

"क्या मतलब?"

इसके जवाब में सुंदरी ने अनवर से मुलाकात की बातें जो उसने बचन सिंह से छुपा रखी थीं, कह सुनाईं। सुन कर बचन सिंह हक्का-बक्का रह गया। उसका अब तक यही ख्याल था कि उसको फंसाने के लिए पाला सिंह ने ही यह काम किया है और ये तीन खून पाला सिंह और उसके गिरोह ने ही किए हैं। तब भी उसे इस बात की हैरानी थी कि अगर उसने फंसाने और अनवर के जेवर आदि लूटना ही पाला सिंह का मकसद था, तो उसने करमचंद और पंडित राधेश्याम का खून क्यों किया? लेकिन यह सोच कर शक मिट गया था कि शायद ये दोनों शरीफ आदमी वहां पहुंच गए होंगे और पाला सिंह ने इन दोनों का भी काम तमाम कर दिया होगा।

पृष्ठ 165

लेकिन आज सुंदरी के मुंह से इस मामले की असलियत सुनकर कि अनवर ने ही पहले उन दोनों का खून करके फिर अपनी छाती में छुरा मार लिया होगा, बचन सिंह कांपने लगा। इसके अलावा सुंदरी की मां अनवर (नूर) के भयानक अंजाम ने उसके होश ही गुम कर दिए थे, इतनी देर तक उसके मुंह बात न निकल सकी।

"आज बचन सिंह मुझे रंडी की बेटी समझ रहा है," इस ख्याल से सुंदरी की आंखें नीची हो गईं।

उधर बचन सिंह भी सुंदरी के महसूस करने को समझ रहा था। इसी वजह से वह इस सिलसिले में और बात चीत नहीं करना चाहता था। वह बोला, "अच्छा, जो हुआ सो हुआ। लेकिन सुंदरी जी, ज्ञानी जी अभी नहीं आए?"

"नहीं, शायद आज शाम तक आ जाएं।"

"तो आप सुबह की गाड़ी से उनके साथ चली जाएंगी न?"

"नहीं, मैं अभी नहीं जा सकती।"

"क्यों?"

"मुझे अदालत में बयान देना है।"

"क्या बयान?"

"यही जो आप को बताया है, इसकी मदद से मैं आपको बेकसूर साबित करूंगी।"

बचन सिंह को हंसी आ गई। वह बोला, "सुंदरी जी! आप की इन बातों का कौन एतबार करेगा? हां, अगर कभी अनवर ने इस हरकत के बारे में कोई लिखा हुआ नोट छोड़ जाती या मरते हुए पुलिस के

पास इस किस्म का बयान लिखवा जाती तो शायद कुछ हो सकता था। लेकिन अब तो सिवाय इसके कि लोग हंसी उड़ाएंगे और कोई फायदा नहीं होगा"।

सुंदरी जोश में बोली, "यही कह कर मेरी हंसी उड़ाएंगे कि मैं सुंदरी, एक रंडी की बेटी हूं। एक नहीं हजार बार कहने दो, मुझे इसकी कोई परवाह नहीं"।

"नहीं सुंदरी जी, मैं नहीं बर्दाश्त कर सकता कि आप का यह भेद खुले। अगर आप का मुझसे सच्चा प्यार है तो इस भेद को छुपाए रखिए। दूसरी बात यह कि अदालत आपके इस बयान को काबिल-ए-कुबूल नहीं मानेगी। इसकी ताईद के लिए आप..."

पृष्ठ 166

के पास कोई सबूत नहीं। कुछ देर सोचने के बाद बचन सिंह बोला, "लेकिन मुझे हैरानी है कि वह कोई तहरीर क्यों न छोड़ गई?"

"जहां तक मेरा ख्याल है तहरीर वह कुछ नहीं छोड़ सकती थी क्योंकि ऐसा करने से मेरा ज़िक्र भी आता था लेकिन शायद वह ये नहीं चाहती थी कि लोगों को यह पता चले कि सुंदरी उसकी बेटी है। दूसरे उसे इस बात का क्या पता था कि उसकी इस हरकत का नतीजा आप को ही..." कहते-कहते सुंदरी का गला भर आया और वह कुछ बोल न सकी।

दोनों में मुश्किल से इतनी ही बातें हुई थीं, दुख भरे दिलों के लिए कई अफ़साने अभी सुनाने बाकी थे कि मुलाकात का वक्त खत्म होने की घंटी बजते ही सारे कैदी अपनी मरज़ी से या सिपाहियों के धक्कों से मुलाकात की जगह छोड़ कर चल दिए।

बचन सिंह के सामने खुलने के लिए सुंदरी के दिल में दुखों के जो अंबार पड़े थे, यूं ही रह गए।

बचन सिंह से अलग होते वक्त उसकी आंखों के सामने अंधेरा सा आ गया था और उसे पता ही न चला कि किस वक्त बचन सिंह उसकी आंखों से दूर हट गया या जाते हुए उसने जो आखिरी जुमले कहे थे, वे क्या थे?

(31)

ना-उम्मीदी - हर तरफ ना-उम्मीदी ही ना-उम्मीदी! जहां तक सुंदरी की नज़र और तसव्वुर की पहुंच थी, सुंदरी को मायूसी ही मायूसी दिखाई दे रही थी। ज्ञानी जी भी दो-दूसरे दिन आ गए। मुकदमा चूंकि अमृतसर की अदालत में चल रहा था, इसलिए ज्ञानी जी और सुंदरी दोनों अमृतसर में रहकर मुकदमे की पैरवी करने लगे। दीवानपुर का रुख करना सुंदरी के लिए बेमतलब और खतरनाक था।

बचन सिंह का मुकदमा निचली अदालत में चल रहा था और इसका आखिरी फैसला क्या होगा? यह सब की आंखों के सामने था। क्यों कि मुकदमे की शक्ल ही ऐसी बन चुकी थी कि मुजरिम के बचने का कोई रास्ता बाकी नहीं रह गया था। मुजरे की मुखालफत के सिलसिले में बचन सिंह की कई दिनों की दौड़-धूप उसके खूनी होने की सबसे बड़ी वजह समझी गई। इसके अलावा कत्ल वाली रात बचन सिंह का अनवर के दरवाज़े के चक्कर काटना भी साबित हो चुका था और यह अकेला सबूत ही सौ सबूतों के बराबर था। ऊपर से पाला सिंह और उसकी पार्टी की वजह से छोटी गवाहियों ने रही-सही कसर भी पूरी कर दी।

वारदात कैसे हुई! उस रात जिस वक्त सुंदरी अनवर के यहां से वापस चली गई थी, उस वक्त अनवर ने अपना एक साज़िंदा भेज कर करमचंद और पंडित राधेश्याम को बुला भेजा था। अनवर का बुलावा दोनों के लिए एक रहमत की तरह था। दोनों उसकी कयामगाह पर सर के बल गए। अनवर ने दोनों को मौत के घाट उतारने से पहले प्रेम का खूब नशा पिलाया। कुछ तो वे दोनों पहले ही शराब के नशे में मदहोश हो रहे थे और उसने इस पर और पिलानी शुरू कर दी। आखिर जब वे नशे में चूर हो गए तो अनवर ने अपने छुरे से एक-एक करके दोनों की ज़िंदगी का दिया गुल कर दिया और तीसरे वार से अपना...

पृष्ठ 167

रोज़ की तरह जब अना (नौकरानी) अनवर की कोठरी के अंदर आई, कमरे का नज़ारा देख कर उसने ज़ोर की चीख मारी जिस को सुन कर कई लोग ऊपर आ गए। आहिस्ता-आहिस्ता वहां काफी भीड़ इकट्ठी हो गई। सारा कमरा खून से लथपथ था और तीनों लाशें इसमें तैर रही थीं।

पाला सिंह और उसके साथियों को जब पता लगा, उनकी खुशी का कोई ठिकाना न रहा। वे पहले ही पुलिस ले आए और इस खूनी नाटक के लिए बचन सिंह को कटघरे में खड़ा किया गया।

खून क्यों हुआ और किसने किया? इस बात का राज़ सिवाय सुंदरी के और किसी को मालूम नहीं था। लेकिन पचासी फीसदी लोगों का शक बचन सिंह पर ही था। यकीन की वगह क्यों था? सिर्फ इस

ख्याल से कि अनवर को उसने समाज सुधार के जोश में कत्ल कर दिया होगा लेकिन दूसरे दोनों से उसकी कोई जान-पहचान न थी, न अदावत थी, तो उनको कत्ल क्यों किया? लेकिन लोगों का यह शक इस तरह दूर हो गया और वे बचन सिंह को ही मुजरिम समझने लगे कि जब कुछ गवाहों ने बयान दिया कि पंडित राधेश्याम और करमचंद अनवर के मकान पर उस दिन होने वाले मुजरे के सिलसिले में सलाह मश्वरा करने गए थे कि बचन सिंह ने अनवर का खून कर के छुरा हाथ में लिए लौटा तो वह खुल जाने के डर से उसने उन दोनों को भी मार लिया। बेचारी सदा कौर को फिक्र की वजह से एक कदम कचहरी में था और दूसरा वकील के दफ्तरों में।

बचन सिंह के वकील ने सुंदरी की शहादत को सफाई के गवाहों में दर्ज कर लिया। जब बचन सिंह पर जुर्म की फर्द लगी तो सुंदरी की गवाही हुई। उसने शुरू से आखिर तक जो कुछ हुआ था, सब बयान कर दिया। लेकिन मुकदमे के सिलसिले में उसकी लंबी कहानी का कुछ भी मतलब न समझा गया।

अनवर कौन थी, पंडित राधेश्याम और करमचंद की चाल-चलन कैसे थे, अनवर को किन वजूहात की बिना पर रंडी की ज़िंदगी अख्तियार करनी पड़ी; सुंदरी ने अपनी अक्ल के मुताबिक उन बातों पर रोशनी डालने की कोशिश की। लेकिन सुंदरी के पास इन बातों की सच्चाई का क्या सबूत था? जिन से सुंदरी के बयान की ताईद होने की उम्मीद की जा सकती थी, वे तीनों कत्ल हो चुके थे। इसके अलावा वह चौथा चौधरी भी सुंदरी के बयान के मुताबिक अनवर के हाथों मारा जा चुका था। अब अगर कोई ज़िंदा गवाह बाकी बचा था तो वह ताराचंद था, जिसके बारे में किसी को कुछ पता नहीं था कि वह ज़िंदा है या मर चुका है, वह कहां है?

सफाई के वकील ने बड़ी मायूसी में सुंदरी से कहा, "लड़की! अगर तेरा बाप (ताराचंद) मौजूद होता तो..."

पृष्ठ 168

हो सकता है इस मामले में कुछ मदद मिल सकती। अब कभी अगर तुम उसे ढूँढ लो तो बहुत अच्छा हो।"

बाकी रही यह बात कि खून किसने किया? इस सिलसिले में तो सुंदरी की गवाही की कोई कीमत नहीं समझी जा सकती थी। बेशक सुंदरी ने अपनी गवाही में साफ़ बता दिया था कि उसकी माँ (नूर) ने इन दोनों को मारने के लिए उसके सामने कसम दोहराई थी, लेकिन अदालत को क्या पता कि दोहराई थी

या नहीं। सुंदरी खुद तो वारदात के वक्त घटनास्थल पर मौजूद नहीं थी। अदालत ने सुंदरी के सारे बयान को बनावटी कहानी या पागलपन ही ख्याल किया।

मतलब यह कि सुंदरी के बारे में सब कुछ जानते हुए भी उसकी गवाही का मुजरिम को कुछ फायदा न पहुँच सका और आखिर मुकदमा सेशन के सुपुर्द हो गया।

सुंदरी को सारी भाग-दौड़ में अगर कोई चीज़ मिली तो वह यह कि पहले लोग उसे अछूतों की लड़की कहते थे, अब रंडी की लड़की कहने लगे।

अदालती कानून दौलतमंदों का नौकर और गरीबों का मालिक है। वह अमीरों के हुक्म पर चलता है और गरीबों को अपने हुक्म में रखता है।

मुकदमे के दौरान कई बार बचन सिंह, सुंदरी, सदा कौर और ज्ञानी जी से मुलाकात हुई, जिनका दर्दभरा हाल लिखकर हम पाठकों को दुखी नहीं करना चाहते।

सेशन अदालत ने कुछ पेशियों के बाद बचन सिंह के लिए फांसी का हुक्म सुना दिया। बदनसीब सदा कौर के लिए यह नाकाबिले-बर्दाश्त हमला था और यह खबर सुनते ही उसके होश-ओ-हवास कुछ देर के लिए जवाब दे गए।

बचन सिंह के वारिसों की तरफ से हाईकोर्ट में अपील दायर कर दी गई।

सुंदरी के लिए यह मामूली चोट नहीं थी लेकिन उसके अंदर बदले की आग भड़क रही थी, इसकी गर्मी ने उसे लड़खड़ाने न दिया और उसका दिल और भी मज़बूत हो गया।

(32)

अमृतसर की एक छोटी सी गली में मकान किराए पर ले लिया गया और सुंदरी ने रहना शुरू कर दिया था।

बचन सिंह को बचाने की सब कोशिशें बेकार साबित हुईं। फांसी के हुक्म के खिलाफ हाईकोर्ट में अपील की जा चुकी थी, लेकिन सुंदरी जानती थी कि यह भी महज एक रस्म की तरह है। इसका भी कुछ फायदा नहीं होगा।

ताराचंद को ढूँढने की ख्वाहिश उसके दिल में दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही थी, लेकिन यह हवा में लाठी चलाने वाली बात थी। उसे रह-रह कर अपनी बेबसी पर गुस्सा आ रहा था कि उसने अनवर से ताराचंद का हुलिया तो पूछ लिया था, लेकिन उसकी पहचान के बिना वह उसे किस तरह ढूँढने में कामयाब हो सकती थी? अनवर से उसे इतना ही पता लगा था कि ताराचंद तब सियालकोट के किसी सरकारी दफ्तर में नौकरी करता था। उसी बिना पर उसने सियालकोट जाकर दफ्तरों में घूम-घूम कर

कई दिन ज़ाया किए, लेकिन आज अठारह-उन्नीस बरस पहले की बातों का अता-पता उसे कहां से मिलता। उधर से भी सुंदरी को मायूस ही लौटना पड़ा।

पृष्ठ 169

लेकिन सुंदरी ने दिल नहीं छोड़ा। उसने दौड़-धूप बराबर जारी रखी। साथ ही कुछ पैसे कमाने के ख्याल से उसने काफी दिनों से छोड़ा हुआ लिखने का काम दोबारा शुरू कर दिया। वह दिन-रात किसी न किसी काम में लगी रहती थी। खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने का उसे होश ही नहीं था। हाईकोर्ट के फैसले का वह बड़ी बेताबी से इंतज़ार कर रही थी और इस इंतज़ार में उसने कई महीने गुज़ार दिए। इन्हीं दिनों में उसकी कई कहानियां पंजाबी रसायलों (पत्रिकाओं) में शाया हुईं, जिन्होंने एक गुमनाम अदीब (लेखक) के नाम को शोहरत की बुलंदियों पर पहुँचा दिया।

ज्ञानी जी, सुंदरी का बड़ा ख्याल रखते थे। हर वक्त उसे रूहानी उपदेश देकर उसके दिल को ठंडा रखने की कोशिश करते थे, लेकिन सुंदरी के अंदर जो हिंसा की आग जल रही थी, उस पर कुछ असर नहीं होता था। सुंदरी का जिस्म दिन-ब-दिन कमज़ोर होता जा रहा था, लेकिन उसका दिल और सख्त और बे-लचक होता जा रहा था। उसे जैसे सारी दुनिया से नफरत हो गई थी, ज़िंदगी उसे नाकाबिले-बर्दाश्त और बे-मानी साबो-जह महसूस होती थी।

अचानक एक बार उसके सब्र का प्याला छलक पड़ा जब एक दिन उसे बचन सिंह की चिट्ठी मिली। बचन सिंह के हाथ का लिखा हुआ पता देखकर उसने धड़कते दिल से लिफाफा खोला और चिट्ठी की पहली सतर "सुंदरी जी, आखिरी प्यार", पढ़ते ही उसका सर चकराने लगा लेकिन उसने फ़ौरन खुद को संभाला और चिट्ठी पढ़नी शुरू की।

"अपील नामंज़ूर हो गई है और फांसी का दिन भी मुकर्रर हो गया है। आने वाला मंगल-वार..."

सुंदरी के हाथों से चिट्ठी गिर पड़ी। उसके हाथ-पांव में ऐंठन आ गया। लेकिन उसने हिम्मत करके एक बार फिर दिल को कड़ा किया। ज्ञानी जी के रूहानी उपदेशों ने उस वक्त उसकी मदद की और उसने आगे पढ़ना शुरू किया।

"आह सुंदरी जी! जानते हैं उस वक्त मेरे दिल की क्या हालत है? कोई भी नहीं जान सकता है। इस बदनसीब की जो मेरी जैसी हालत से गुज़रा हो। उफ़! ये दुनिया कितनी डरावनी मालूम हो रही है। सलाखों वाली कोठरी में और वे मामूली कैदियों वाली नहीं, फांसी की कोठरी में होने पर भी मुझे ऐसा लगता है कि मैं यहां की गंदगी से आज़ाद हूँ और अपने आप को इस दुनिया के ऊपर-पड़ा (ऊपर से) देख रहा हूँ। एक के बाद दूसरे के बाद तीसरा नज़ारा आंखों के सामने फैलता जाता है। कौन से नज़ारे? वही जो होश संभालने..."

पृष्ठ 170

के बाद से आज तक देख चुका हूँ।

"जब सुपरिंटेंडेंट ने मेरी कोठरी में आकर मुझे पहली बार फांसी का हुक्म सुनाया था उस वक्त मेरी क्या हालत हुई? उस के मुँह से ये चार हरफ निकलते ही मेरी दुनिया का ढांचा ही बदल गया। उस वक्त कोठरी की दीवारें, छत, सलाखों वाले दरवाज़े और फर्श वगैरह सब फांसी का शोर मचाकर मेरे कान फाड़ रहे थे। बाहर संतरी बंदूक कंधे पर रखे मुँह ही मुँह में गुनगुनाता हुआ इधर से उधर आ-जा रहा था। वह भी जैसे फांसी का राग अलाप रहा था। सामने वाले शहतूत के पेड़ पर कौए बोल रहे थे, जैसे उनको भी फांसी के लफ्ज़ के सिवा और कुछ याद नहीं था।

"मैं सर से लेकर पाँव तक कांप रहा था। लेकिन नहीं, मैं कांप नहीं रहा था और न ही मेरा कोई अंग कांपता हुआ मालूम होता था, लेकिन मैं अंदर से कुछ इस तरह महसूस कर रहा था जैसे मैं कांप रहा हूँ। मेरा दिल व दिमाग, मेरा तसव्वुर, मेरा ख्याल, हर एक चीज़ कांप रही थी। फर्श, छत, सामने का आंगन और बाहर के दरख्त, सब कांप रहे थे।

"कई घंटे तक मेरी यही हालत रही। फिर आहिस्ता-आहिस्ता दूसरी तस्वीर मेरी आंखों के सामने आई। वह थी एक भूली-भटकी देवी की तस्वीर जिस का रंग सरसों के फूलों की तरह पीला था, जिस का जिस्म किसी डॉक्टर की डिस्पेंसरी में रखा हुआ हड्डियों का ढांचा था लेकिन उस के अंदर से कोई चमक पैदा हो रही थी और बस वही चमक मेरे दिल को काबू किए दे रही थी। उसे देखते ही मुझ पर सा तारी हो गया। मुझे याद ही न रहा कि मुझे मौत की सज़ा हो चुकी है। और यह थी मेरी सुंदरी!

"दूसरे ही लम्हे वह तस्वीर गायब हो गई और मेरी आंखें फांसी का फंदा देख रही थीं और उस के करीब ही एक काले और डरावने मुँह वाले जल्लाद को जो बड़ी मेहनत से फांसी के रस्से पर तेल लगा कर उस पर किसी चीज़ की तह चढ़ा रहा था। इस नज़ारे को देख कर मुझ पर पहले की तरह कपकपी तारी हो गई। मेरा दिल और कई तरह के ख्यालों के बहाव में बह गया। मेरा दिल घबराई हुई आवाज़ में जैसे जल्लाद से कह रहा था, "मेरे दोस्त! ज़रा ठहर जा। इतनी जल्दी न कर। अभी मेरे कई काम अधूरे हैं। इन्हें खत्म कर लेने दे। मैं ज़्यादा देर नहीं लगाऊंगा। बस फौरन ही आऊंगा।"

लेकिन जल्लाद ने और जल्दी करते हुए कहा,

"मेरे पास अपना काम खत्म करने की जल्दी है और तुझे अपना काम खत्म करने की" और फिर जल्द-जल्द रस्से को तेल लगाते हुए परत सी चढ़ाने लगा।

"मेरा दिल उस का जवाब सुन कर मायूस हो गया। मेरा हाल उस मुसाफिर जैसा था जिस को अभी तक मनौ सामान रेल पर चढ़ाना हो और गाड़ी ने व्हिसल दे दी हो और गार्ड बाबू ने हरी झंडी..."

"आह सुंदरी जी! आप ने कभी किसी खत में इस मौत की जो तारीफ की थी। उस के असर में भी कुछ वैसा ही"

पृष्ठ 171

महसूस करने लगा था। लेकिन आह, फांसी का हुक्म सुनते ही आप के सारे उपदेश भूल गए। ये मौत पहले से भी हज़ार गुना डरावनी बन कर मेरे सामने आ खड़ी हुई।

"मैं ने आप से कहा था कि मुझसे मुलाकात न करें इससे मेरी तकलीफ और बढ़ जाएगी लेकिन अब हालत वह नहीं रही। मुझे महसूस होता है कि मेरे सारे दुखों का इलाज ही आप हैं। बस मरने से पहले एक बार और सिर्फ एक बार आप से मिलना चाहता हूँ। मुझे उम्मीद है कि आप का मिलना मेरे लिए इतना फायदे मंद होगा कि मैं आराम और खुशी से मर सकूंगा।

"सुंदरी जी! ये बातें कौन लिख रहा है? ये दिलो-दिमाग से उठ रही हैं और कौन सी चीज़ दिमाग में बैठी हुई तरतीब से इन्हें कलम के हवाले कर रही है? इतने छोटे से दिल और दिमाग में इतना कुछ किस तरह समा रहा है? क्या यह चार गज़ की रस्सी अपने एक झटके से इस सब का खात्मा कर देगी? क्या इस ज़रा से फंदे से आंखों की नहरें, जो उस वक्त उफान आए हुए दरिया की तरह बह रही हैं एक दम सूख कर बंजर हो जाएंगी? क्या यह हाथ जो बिजली की सी तेज़ी से कलम चला रहा है, ठीक आज से छठे दिन लकड़ी के छिलके से रह जाएंगे? अपने के मंदिर में जो आसमानी मूर्ति बैठी है और जिस की मैं रोज़ ही प्यार के फूलों की भेंट चढ़ा कर पूजा करता हूँ, वह मूर्ति अब ज़ुल्म की एक हथौड़े की चोट से चकनाचूर हो जाएगी।

"ओह! मैं कितना मूर्ख हूँ। घर में लगी आग को चुल्लू भर पानी से बुझाने की कोशिश की तरह मैं ये कौन सी राम कहानी शुरू कर दी है।

"सुंदरी जी! बस करता हूँ। ये दुखों भरे अफसाने खत्म होने वाले नहीं। जिस को सचमुच प्यास लगी हो, उसे पीने में सनों पानी पीने से भी इस की प्यास नहीं बुझती। मेरा आप का साथ बस इतने ही अरसे के लिए था। लेकिन नहीं, ये तो कयामत तक रहेगा।

"देखिये सुंदरी जी। आप की उस चिट्ठी का मतलब मैं तब नहीं समझा था, अब समझ में आया है। क्या आप मेरे मरने के बाद जीना नहीं चाहतीं। मैं आप से आखिरी गुज़ारिश करता हूँ कि हरगिज़ ऐसा न

करें। लेकिन आप अगर किसी और तरह नहीं मानेंगी तो मैं आप को एक बात की याद दिला दूँ कि आप की ज़ात पर एक दुखी हस्ती का बोझ है। मेरी बे-आसरा माँ, जो इस वक्त ज़िंदगी और मौत के दरमियान लटक रही है। बस जब तक आप उस की तरफ से बेफिक्र नहीं हो जातीं तब तक आप को कोई हक़ नहीं ऐसा करने का। जब कि हम ने लाखों बरस तक ठहरना है तो फिर यह मुख्तसर सी दूरी बर्दाश्त करनी बड़ी बात नहीं। मैं आप का इंतज़ार करूँगा लेकिन आप अपना फर्ज़, जो आप के जिम्मे कर चला हूँ; पूरा किये बगैर मेरे पास नहीं आ सकतीं।"

पृष्ठ 172

"सोमवार को मेरी घरवालों से मुलाकात होगी और मंगलवार को आप से। इस लिए मंगलवार की सुबह ज्ञानी जी को साथ लेकर यहाँ पहुँच जाएं। और सुंदरी जी! हमारी मुलाकात काफी देर के लिए होगी। सुपरिंटेंडेंट ने खास मेहरबानी से इस का वादा किया है।"

"आह सुंदरी जी! क्या मैं चिट्ठी खत्म कर दूँ? यह काम मुझे इस कदर मुश्किल मालूम होता है जैसे चिट्ठी खत्म होने के साथ ही मेरे लिए सारी दुनिया ही खत्म हो जाएगी और मेरे मरने के लिए इस दुनिया में कुछ भी नहीं रह जाएगा। कागज़ खत्म हो चुका है। हाशिये पर भी जगह बाकी नहीं रही। लफ्ज़ों से लफ्ज़ मिलाकर इतना कुछ ही लिख सका हूँ। सुपरिंटेंडेंट आ कर खड़ा इंतज़ार कर रहा है कि जल्दी चिट्ठी बंद कर। सुपरिंटेंडेंट के आने का वक्त हो गया है।"

"आप की मोहनी सूरत को दिल में बसा के - मेरी सुंदरी जी - मैं चिट्ठी खत्म करता हूँ। आखिरी प्यार।"

आप का,-- बचन सिंह

फांसी का हुक्म होने से आज तक बचन सिंह दिन-रात ख्याली महल बनाना और ढाता रहा। कई किस्म के ख्यालात उसके दिल में दरिया की उफान की तरह आते और चले जाते। आख़िर आंखों के सामने वही फांसी वही मौत बस दो ही चीज़ें रह जाती थीं। लेकिन आज जब कि फांसी से पहले का आखिरी दिन है उसके दिल में कोई वलवला (उमंग) नहीं मिल रहा। सारी ताकतें उबल उबल कर जैसे ठंडी हो गई हैं और सिर्फ एक मौत की तस्वीर उसके सामने है। उसे यूं मालूम होता है जैसे फांसी लेने से पहले ही वह मर चुका है और मरने के बाद की दुनिया में जा बसा है। साथ वाली बैरक में दो तीन कोल्हू चल रहे थे। उन की झीं झीं की आवाज़ें उसे इस तरह लगतीं जैसे कोई विधवा अपने शौहर की मौत पर गिरिया-ओ-ज़ारी कर रही हो। कोठरी के एक कोने में एक टेढ़ी सी तसवीर थी लेकिन उसे यूं

दिखाई पड़ता था जैसे कोई माँ अपने मरे हुए बेटे का सर ज़ानुओं (घुटनों) पर रखे बैन (शव के पास बैठ कर रोना और बोलना) कर रही हो। सामने वाले मैदान में कभी कभी दो चार चिड़ियां चीं-चीं करती उड़ती दिखाई देती थीं और उसे लगता था जैसे मौत उसके पीछे पड़ी हो और वह डर के मारे उससे जान बचाती फिर रही हों।

लाहौर सेंट्रल जेल की इस तंग व तारिक (अंधेरी) कोठरी में ही उसे अपनी बदनसीब माँ का ख्याल आया जो कल ही उससे मिलने आई थी, फिर सुंदरी का ख्याल आया जिसे आज आना था। वह अपनी सलाखों वाली तंग कोठरी में बैठा हुआ सोच रहा था। अब सुंदरी गाड़ी से उतरी होगी। बाबू की तरफ देखते हुए उसके पतले हाथ कांप रहे होंगे। उसकी आंखों में आंसू भरे होने की वजह से रास्ता साफ नहीं दिखाई दे रहा होगा। अब ज्ञानी जी ने उसे धीरज दिला कर तांगे में बिठाया होगा। अब तांगे जेल की तरफ दौड़ रहा होगा। सड़क के किनारे खड़े दरख्त उसके सामने

पृष्ठ 173

से हो कर जब पीछे की तरफ भागते दिखाई देते होंगे तो उन को वे माजी (अतीत) के सुखों का रूप समझ कर कह रही होंगी,

"जाओ मेरे साथियों जाओ- हमेशा के लिए जाओ।"

टांगा अब जेल के दरवाज़े के सामने होगा। सुंदरी की नज़र पहले काले फाटक पर पड़ेगी जो सोग (शोक) मनाता, मातम करता हुआ मालूम होता होगा। दरवाज़े के सामने टहलते हुए लाल पगड़ी वाले सिपाही को वह मौत के फ़रिश्ते यमराज का दूत समझेगी। शायद सुंदरी यह नज़ारा नहीं देख सकेगी और बे-होश...

इसी वक्त उसे भारी बूटों की चाप सुनाई दी और वह उठ खड़ा हो गया। बाहर एक अंग्रेज़ सुपरिंटेंडेंट, एक डॉक्टर, दो इंस्पेक्टर और बहुत से सिपाही खड़े थे।

कोठरी का दरवाज़ा खुला और किसी के कुछ कहे बगैर ही बचन सिंह समझ गया कि फांसी का वक्त हो गया है।

उसने हथकड़ियाँ देख कर खुद-ब-खुद बाजू आगे फैला दिए और एक सिपाही ने उसके दोनों बाजू पीछे की तरफ ले जाकर हथकड़ी लगा दी। सब के सब उसे आगे ले कर चल पड़े।

बचन सिंह ज़मीन पर चल तो रहा था लेकिन उसे लगता था जैसे ज़मीन उसके पाँवों के नीचे नहीं है। उसे महसूस होता था जैसे हवा में चल रहा है। इस वक्त उसे अपना सर दिमाग से खाली महसूस हो रहा था और सब्ज़ (ठंडे) दिल के बगैर। फिर भी अभी कोई ऐसी ख्वाहिश उसके अंदर ज़िंदा थी जो उसके लाश से जिस्म को चुभकी भर जाती थी। उसकी आंखें पत्थर हो चुकी थीं लेकिन अब भी कुछ

और देखना चाहती थीं। हथकड़ी में उसके हाथ अंगुलियों से रस्सी को छू कर यह महसूस करना चाहते थे "ये लोहा है या गोश्त।"

अब बचन सिंह अपने आप को एक ऐसी जगह खड़ा देख रहा था जिसे आज तक उसने नहीं देखा था। लेकिन बगैर देखे तसवीर ही तरह उसकी नज़रों के सामने रही थी। यह थी फांसी वाली जगह -!

एक बार तो बचन सिंह उस जगह को देख कर एड़ी से चोटी तक कांप गया। लेकिन उसकी यह हालत फौरन बदल गई - अब उसकी आंखों के सामने कुछ भी नहीं था। सिर्फ अंधेरा था - गहरा अंधेरा -!

उसे कुछ पता नहीं था कि वह कितनी देर वहाँ खड़ा रहा। इसी वक्त उसके कानों में आवाज़ आई "वेल मिस्टर! बचन सिंह कोई बात कहना चाहता है?"

इस का जवाब दिया किस ने? उसने या किसी और ने? इसका उसे कुछ पता नहीं था। उसके बाद फिर पहली आवाज़ आई "अच्छा उनको बुलाओ।"

यह बात बचन सिंह के कानों में पड़ी। जैसे दोबारा उसके होश-ओ-हवास कुछ देर के लिए लौट आए। थोड़ी देर बाद उसे अपने पीछे किसी की चीख की आवाज़ सुनाई दी। आवाज़ को पहचान कर उसने फौरन मुड़ कर...

पृष्ठ 174

देखा। यह सुंदरी थी, जिसे ज्ञानी जी कंधे का सहारा दिए उसकी तरफ ले आ रहे थे। ज्ञानी जी की गुज़ारिश पर अफ़सर ने हाथ की हथकड़ी खोल दी।

सुंदरी अब बचन सिंह के सामने खड़ी थी। वह सारा ज़ोर लगाकर अपने आप को होश में रखने की कोशिश कर रही थी। ज्ञानी जी ने एक हाथ में बचन सिंह का हाथ थमा रखा था और दूसरे में सुंदरी का। वे दोनों तड़पते नज़रों से एक-दूसरे की तरफ देख रहे थे। उनकी आंखें एक-दूसरे की आंखों में गड़ी हुई थीं और एक-दूसरे की आंखों की पुतलियों में उन्हें अपने वजूद की ही मध्यम सी झलक दिखाई दे रही थी। बस और कुछ नहीं, सिवाय इसके कि बचन सिंह सुंदरी की आंखों में छुपा बैठा था और सुंदरी बचन सिंह की आंखों में।

उसी वक्त सुंदरी को अपनी गर्दन पर किसी ठंडी-ठंडी चीज़ के लगने का एहसास हुआ।

उसने देखा ज्ञानी जी ने एक रूमाल की गांठ खोलकर एक-एक फूलों का हार दोनों की गर्दन में डाल दिया। वह ये भी देख रही थी कि उसका हाथ बचन सिंह के हाथ में है। इन दोनों को अपने हाथों में लेकर ज्ञानी जी कह रहे थे:

"ऐ दो जहान के मालिक! इस जोड़ी की मोहब्बत कयामत तक कायम रहे और ये स्वर्ग में इकट्ठे होकर हमेशा शादी-शुदा ज़िंदगी गुज़ारें।"

उस वक्त अंग्रेज़ अफ़सर ने अपने सर से टोपी उतार ली। बाकी के सिपाहियों ने, जो सब मुसलमान थे, सर नीचे करके एक आवाज़ में कहा, "आमीन-आमीन।"

उसके बाद दोनों के जिस्मों में कुछ ज़िंदगी की लहर दौड़ी और वे दोनों एक-दूसरे से लिपट गए। एक मिनट, दो मिनट, पांच मिनट। आख़िर दस मिनट हो गए लेकिन उनके बाज़ू ढीले न हुए।

सुपरिटेंडेंट का इशारा पाकर ज्ञानी जी ने कहा,

"काका बचन सिंह, बेटी सुंदरी- मेरे बच्चों।"

लेकिन उन्होंने एक-दूसरे को न छोड़ा। शायद दोनों के होश-ओ-हवास जवाब दे चुके थे। आख़िर ज्ञानी जी ने सुंदरी का बाज़ू पकड़ते हुए कहा,

"मेरी बच्ची!"

और सुपरिटेंडेंट ने बचन सिंह का बाज़ू पकड़ कर कहा, "मिस्टर बचन सिंह!"

तब जाकर उनके बाज़ू ढीले पड़े। बचन सिंह मदहोशी की हालत में खड़ा था। तब एक आदमी ने उसे सर से एक लंबा काला कोट पहना दिया। सुंदरी गिरने ही लगी थी कि ज्ञानी जी ने उसे थाम लिया। फिर सुपरिटेंडेंट के हुक्म से सुंदरी के लिए एक चारपाई लाई गई।

पृष्ठ 175

इसके बाद जब सुंदरी को होश आया तो रात का अंधेरा हर तरफ फैल चुका था। इंजन की छक-छक, यात्रियों के शोर, खोमचे वालों की चीखें, मिठाई वाले की आवाज़ें और बीड़ी-सिगरेट के धुएं के बदलाव से उसने अंदाज़ा लगाया कि वह रेलवे स्टेशन पर है और यह मुसाफिरखाना (वेटिंग रूम) है।

सुंदरी बैठ गई और बैठते ही उसने पानी मांगा। ज्ञानी जी लोटा लेकर पानी लेने चले गए। सुंदरी को कुछ ही देर में आज का वाकया याद आ गया। उस वक्त उसे अपना सर इस तरह मालूम होता था जैसे मनौ (बहुत) भारी हो गया हो। इसमें कोई सोच, कोई तसव्वुर या कोई ख्याल बाकी नहीं था। अपने कंधों पर उठाया हुआ ये बोझ पत्थर से उसे तकलीफदेह मालूम होता था! मैं क्या से क्या हो गई? आज

मैं सब कुछ खोकर दुनिया में अकेली और बेसहारा हूँ, इस बात का भी उसे ख्याल नहीं था बल्कि उसकी हालत उस छत जैसी थी, जिसे सहारा देने वाला स्तम्भ गिर गया हो।

वह इसी तरह पागल सी, पथराई नज़रों से इधर-उधर देखती रही। इतने में ज्ञानी जी पानी ले आए। पानी पीने से उसके जिस्म में कुछ ताकत आई और आहिस्ता-आहिस्ता उसके दिमाग की रुकी हुई मशीन फिर हरकत में आने लगी। इसके साथ ही उसे दुनिया का नक़्शा बदलता हुआ मालूम हुआ। वह इस तरह महसूस कर रही थी कि वह किसी बोझ के नीचे दबी जा रही है।

बचन सिंह से आखिरी मिलने की झलक उसके सामने आई लेकिन बहुत फीकी सी, शर्म की दीवार की तरह।

"उनको फांसी लटका दिया गया।" ये ख्याल आने की ही देर थी कि वह चीख मारकर दोनों हाथों से मुँह छुपाकर बेंच पर बल लेट गई।

ज्ञानी जी से ये सुनकर कि उसके शौहर को आज ही फांसी पर लटका दिया गया है, बहुत से मुसाफिर उसके इर्द-गिर्द इकट्ठे होकर उसे हौसला देने की कोशिश कर रहे थे।

सुंदरी उस वक्त रोना चाहती थी लेकिन रो नहीं सकती थी। उसे रोना ही नहीं आता था। उसके जिस्म से जो आग की लपटें उठ रही थीं, उन्होंने शायद उसके आंसुओं को भी खुश (सूखा) कर दिया था।

वह फिर उठी और मुसाफिरखाने से बाहर चली गई। अपने इर्द-गिर्द के मुसाफिरों को जहां तक उसकी नज़रे जा सकती थीं, उसने ध्यान से देखा। हर एक आदमी से उसे दुश्वार, घात और दुश्मनी की बदबू आ रही थी। वह ख्याल कर रही थी कि परमात्मा ने जो कुछ भी बनाया है, सब उसे तबाह करने के लिए बनाया है। और ऊपर आसमान की तरफ देखने से उसे लगता था कि ये जो काले-काले बादल इधर-उधर घूम रहे हैं, सिर्फ वही इसके साथ सच्ची हमदर्दी के इज़हार के लिए काले रंग का मातम का लिबास पहने हुए हैं। कहीं-कहीं तारे ठिठुर रहे हैं, जो शायद उसकी बुरी हालत बर्दाश्त न करने की वजह से बादलों के नीचे छिपे जा रहे थे। ऊंचे कद के धुंधले दरख्त भी सर हिलाकर उसके दुख

पृष्ठ 176

में शरीक हो रहे थे। यह कायनात (सृष्टि) उसके लिए मातम की सराय बनी हुई थी!

उसके जिस्म में एक दम कोई बिजली सी दौड़ गई। अपने इर्द-गिर्द खड़े लोगों की तरफ कहर भरी नज़र से देखती हुई बोली,

"क्या देखते हो? अभी पेट नहीं भरा मेरा लहू पीकर , अच्छा और जितना ज़ोर लगता है लगा लो। अब इससे ज़्यादा मेरा और क्या बिगाड़ोगे। अब तो तुमने मेरा कुछ बाकी ही नहीं छोड़ा। मेरा सब कुछ खाकर हज़म कर गए हो अभी।"

ज्ञानी जी ने उसका बाज़ू पकड़कर एक तरफ ले जाने की कोशिश करते हुए कहा, "बेटी होश में आ, अपने आप को संभाल।"

मुसाफिर उसके इर्द-गिर्द से हट गए और ज्ञानी जी इसके सर पर हाथ फेरते हुए बोले, "बेटी इस तरह की हरकतें करने से तो अपनी जान भी खतरे में डाल लेगी। जो कुछ होना था..."

सुंदरी उनकी बात पर हंसती हुई बोली, "क्या कहा पिताजी? मेरी जान खतरे में है? नहीं, मैं अभी नहीं मरूंगी। अभी मेरे करने के बहुत काम हैं। उनको खत्म करने से पहले मैं नहीं मरूंगी। हां सच पिताजी, उन का दाह संस्कार?"

"वो हो चुका है। तुझे होश में लाने की बहुत कोशिश की गई थी। लेकिन..."

"खैर कोई हरज नहीं।"

उसके बाद वे दोनों अमृतसर जाने वाली गाड़ी में जा बैठे।

अमृतसर पहुँचकर जब दोनों मुसाफिरखाने से बाहर निकले तो सुंदरी ने ज्ञानी जी से कहा, "पिताजी मैं आप को और बांधना नहीं चाहती। कुछ दिनों के लिए मुझे अकेली छोड़ दीजिये।"

"अकेली छोड़ दूँ?" ज्ञानी जी ने हैरानी से उसकी तरफ देखते हुए पूछा "क्यों बेटी?"

"मैं दीवानपुर जा रही हूँ।"

"लेकिन वहां तुम्हारा काम है?"

"आप को पता नहीं। वो अपनी माता जी का बोझ मुझे सौंप गए हैं। मैं कुछ अरसा उनकी माता जी के पास रहूँगी।"

"तो चल मैं तुझे छोड़ आता हूँ।"

"नहीं पिताजी, मैं अकेली जाऊँगी।"

काफी खींचतान के बाद ज्ञानी जी को उसका साथ छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़ा। आखिर यही फैसला हुआ कि सुंदरी दीवानपुर चली जाए और ज्ञानी जी एक दिन अमृतसर होकर वापस चले जाएं।

स्टेशन से बाहर निकलकर सुंदरी अपने भविष्य के बारे में कई तरह की बातें सोचती हुई दीवानपुर की सड़क पर चल दी। अब उसका दिल ठहर गया था। उसे हर लम्हे बचन सिंह की याद आती थी लेकिन यह याद उसको रुलाती नहीं थी। जिस तरह लोहे को ज्यों-ज्यों आंच लगती है, वह और चीजों की तरह पिघलने के बजाय और सख्त होकर मज़बूत बन जाता है। उसी तरह सुंदरी का दिल बचन सिंह की मौत के बाद और अधिक मज़बूत और खतरनाक हो गया था।

भविष्य के किसी खतरे या दुःख की तो जितनी तकलीफ दे होती है, उतनी डरावना उसका हाल नहीं होता। ठंडे पानी के तालाब में नहाने से पहले आदमी उसमें दाखिल होने से डरता है लेकिन एक आधा डुबकी लगाने के बाद फिर चाहे कितनी देर पानी में खड़ा रहे, उसे तकलीफ मालूम नहीं होती। सुंदरी को अब उतना दुःख नहीं था जितना आने वाले वक्त का ख्याल था। दूसरी बात यह कि चोटें और ज़ुल्म बर्दाश्त करना अब उसकी आदत बन चुकी थी।

सदाकौर ने उस दिन सुंदरी की हद से ज्यादा बेइज्जती की थी लेकिन बचन सिंह के हुक्म के सामने उसे सब कुछ भुलाना पड़ा। वह दीवानपुर पहुँचकर सबसे पहले सदाकौर के घर की तरफ गई। रात के आठ बज चुके थे जब उसने सदाकौर के घर का दरवाज़ा खटखटाया।

अंदर से आवाज़ आई "कौन है?"

सुंदरी ने धैर्य के साथ जवाब दिया, "जी! मैं हूँ सुंदरी।"

उसे इस बात का पता था कि सदाकौर पहले से भी ज्यादा उसकी बेइज्जती करेगी। जब बचन सिंह के जीते जी उसने ये हाल किया था तो फिर परमात्मा ही मालिक है। लेकिन सब कुछ बर्दाश्त करने के लिए उसने अपना दिल पक्का कर लिया था।

दरवाज़ा खुला और हाथों में दीया उठाए सदाकौर उसे सामने दिखाई दी। उसकी निगाहें इतनी कमज़ोर हो गई थीं कि दिन के वक्त भी ही आदमी को पहचानना मुश्किल था। सुंदरी उसे मुखातिब करने के लिए बे-चैन थी। वह इंतज़ार कर रही थी कि सबसे पहले सदाकौर के मुँह से कौन सी बात निकलती है लेकिन वह हैरान रह गई जब उसने सदाकौर को दोनों बाज़ू अपनी तरफ फैलाकर यह कहते हुए सुना:

"मेरी दुखी बच्ची! मैं सदके जाऊं।"

सुंदरी उसके पैरों में गिर पड़ी। सदाकौर ने उसे प्यार से उठाकर गले से लगा लिया और रोती हुई बोली, "बेटी! आज तेरा सुहाग लुट गया।"

वह और कुछ न बोल सकी और फूट-फूटकर रोने लगी। नूरजहां से मिलने के बाद आज दूसरी बार सुंदरी

के दिल में माँ के लिए मोहब्बत उमड़ी थी।

बचन सिंह ने कल आखिरी मुलाकात में सुंदरी के मुतल्लिक (बारे में) अपनी माँ का दिल साफ कर दिया था और फिर हमेशा के लिए सुंदरी को ही बचन सिंह की अमानत समझकर सीने से लगाकर रखने की ताकीद की थी। ये सब बातें सदाकौर ने उसे एक-एक करके सुनाईं। सुंदरी ने भी अपने दुखों की कहानियां सुनानी शुरू कीं। एक-दूसरे पर दुख ज़ाहिर करके उन्हें यूं मालूम हुआ जैसे बचन सिंह ज़िंदा है।

आधी रात दोनों ने दुख भरी बातें करते हुए गुज़ारी। दोनों अपने दिल में यही सोच रही थीं कि अगर परमात्मा उस से न मिलता तो मेरा क्या हाल होता, मैं कैसे ज़िंदा रहती?

इस के बाद बातों-बातों में ही सुंदरी को ये भी पता चला कि सदाकौर का पैसा धेला पहले ही खत्म हो चुका था लेकिन इस मुक़दमे में उस का ज़ेवर तक बिक चुका है और कुछ ज़मीन भी गिरवी रखी गई है और जो कुछ भी बचा है, वह रिश्तेदार दबाने की फिक्र में हैं क्योंकि क़ानूनी तौर पर वे उस के वारिस हैं। सदाकौर उस वक्त कोठरी की मोहताज भी बैठी थी, सूखी रोटी लगे या नहीं, इस में भी शक था।

इस के अलावा सदाकौर की ज़ुबानी सुंदरी को ये भी पता चला कि पाला सिंह उस के देवरे और जेठों को भड़का रहा है कि वह लगे हाथों फौरन जीवा सिंह की ज़मीन पर कब्ज़ा कर लें और इस तजवीज़ पर अमल करने की तैयारियां भी शुरू हो गई हैं।

सुंदरी के ज़ख्मी सीने पर एक और चोट लगी। उस की नस-नस उस वक्त पाला सिंह से बदला लेने के लिए तड़प रही थी, बे-चैन हो रही थी। यहां तक कि उस के लिए वहां ठहरना मुश्किल हो गया। बचन सिंह से किए गए क़ौल (वादे) और उस पर ली हुई सदाकौर की ज़िम्मेदारी, सब कुछ वह भूल गई। थोड़ी देर बाद जब सदाकौर सो गई तो सुंदरी दबे पाँव उठी और खिड़की में रखी दियासलाई उठाकर घर से बाहर निकल गई।

उस वक्त रात के बारह बजे का वक्त था। अंधेरी रात ने हर तरफ काला परदा फैला दिया था। जिस कोठरी में पाला सिंह अपनी चंडाल चौकड़ी के साथ रहता था, वह जगह सुंदरी की देखी-भाली हुई थी। वह आहिस्ता-आहिस्ता वहां पहुँच गई। कमरे के पीछे जहां से दीवार में एक बड़े सुराख के रास्ते अंदर का सब हाल देखा जा सकता था, वहां वह छिपकर बैठ गई। अंदर दीये से तेल का दिया जल रहा था जिस की रोशनी में सुंदरी ने देखा। पाला सिंह और उस के दोनों साथी शराब पीते हुए हांक रहे थे। वीर सिंह कह रहा था,

"सांप भी मर गया और लाठी भी बच गई"।

पाला सिंह बोला, "लेकिन तुम ने सचमुच उसे जीवा सिंह के घर जाते देखा था कि ऐसे ही नशे में बड़बड़ा रहे हो"?"

पृष्ठ 179

"कसम गुरू की, मैंने अपनी आंखों से देखा है"!

"तो अब बच नहीं सकते, कल ही काबू कर लो, यह भी रोज़-रोज़ का झंझट खत्म हो"!

"लेकिन भाई रखेगा कहां उसे"?"

"पागल! है बहुत-सी जगहें, कम हैं क्या! कल इसे उड़ा ला तू"!"

"लेकिन भाई! कचहरी में उस ने बयान दिया था कि मैं रंडी की बेटी हूँ"।"

"ओह! छोड़ परे बेकार की बातें, सिखों को क्या! इस तरह के वहमों से , आप तो गुरू का नाम लेकर रात को उसे लाने की कोशिश करो"!"

"यही राय है, जीवा सिंह के घर के पीछे जहां दीवार कच्ची है, उसे तोड़..."

"बस, बस! ठीक है"!"

सुंदरी को समझने में देर न लगी कि ये बातें और तैयारियां किस सिलसिले में हो रही हैं। थोड़ी देर तक वे इसी तरह के सलाह-मशवरे करते रहे और आखिरी पीते-पीते वहीं पड़कर सो गए। इतनी देर में सुंदरी ने इधर-उधर से सूखी घास इकट्ठी करके दो-तीन गट्ठर बना लिए। आखिर उस ने अपना काम शुरू कर दिया।

****

थोड़ी ही देर बाद ये झोंपड़ा तेज़ी से जल उठा, जिस की लपटों के शोलों से दूर-दूर तक रोशनी फैल रही थी और सारा गांव तेज़ी से भागता आ रहा था।

पास ही खड़ी सुंदरी पागलों की तरह हंस रही थी। आज उसके चेहरे पर इस तरह की भयानक हंसी थी जिससे शायद मौत भी डरकर कांप उठे।

सारे गांव में शोर मच गया। लोग फौरन आए लेकिन उनके पहुँचने से पहले ही छत की सारी लकड़ी दीवारों को छोड़कर नीचे आ गई।

"अभी यहीं थीं," कहते हुए कुछ लोगों ने आग बुझानी शुरू की और बाकी मलवे को पकड़ने के लिए इधर-उधर भाग निकले।

किसी ने बताया कि एक ने उसे दरिया की तरफ भागते हुए उसने देखा है। सब लोग उधर की तरफ दौड़े। जंगल की झाड़ियों में झांकते हुए वे दूर निकल गए।

इतने में आवाज़ आई, "वह देखो, वह जा रही है! दरिया की तरफ!"

पृष्ठ 180

लोग पुल की तरफ भागे। लेकिन अंधेरे में कुछ पता न चल सका। थोड़ी देर बाद पुल से आवाज़ आई:

"मैं हूँ खूनी, आओ मुझे पकड़ लो, जिस की हिम्मत है। दो जानों के बदले में मैं तीन जानें लेकर जा रही हूँ। मैंने किसी बेगुनाह की बददुआएं नहीं लीं। उनको मारा है जिन्होंने मेरे सर का ताज उतारकर पांवों से रौंद डाला था और मेरे बूढ़े बाप का लहू पिया था। याद रखो ज़ालिमों, एक सती के जीते जी उसे विधवा बनाने वाले के हौसले से नहीं बच सकते। सारे गांव तो बागी हो ही गया, जिन्होंने झूठी गवाहियां दे मेरे मालिक की जान ली और मेरे बूढ़े बाप के कातिलों को बचाया। अभी तो असल कातिलों को ही उनके किए की सज़ा मिली है। आओ मुझे पकड़ लो।"

लोगों ने देखा कि सामने ही दरिया के पुल पर खड़ी सुंदरी हाथ हिला-हिलाकर और चिल्ला-चिल्लाकर यह सब कुछ कह रही थी।

उस वक्त पुलिस भी मौके पर पहुँच गई। आगे-आगे पुलिस के सिपाही और पीछे-पीछे गांव के लोग पुल की तरफ बढ़े। उन्हें बड़ी हैरानी हुई जब उन्होंने देखा कि सुंदरी उसी तरह खड़ी है। वहां से ज़रा भी नहीं हिली।

सारी भीड़ पुल पर जा पहुँची, लेकिन सुंदरी अब भी अपनी जगह पर खड़ी लोगों को धिक्कार रही थी। जैसे ही पुलिस के सिपाही ने उसे पकड़ने के लिए उसकी तरफ बढ़े, उसने धड़ाम से दरिया में छलांग लगा दी। सब लोग हाथ मलते रह गए।

पुल के ऊपर से ही लोगों ने देखा कि खामोश बह रहे दरिया में उसके गिरने से पानी ने एक ज़ोरदार उछाल मारी और जिस जगह सुंदरी गिरी थी वहां पानी की सफेद लहरें ऊपर को उभरीं और फिर वहीं खामोश हो गईं। लालटेन नीचे लटकाकर और आंखें फाड़-फाड़कर लोगों ने काफी देखने की कोशिश की लेकिन सुंदरी का कोई निशान न मिला; वह हमेशा के लिए उनकी आंखों के सामने से गायब हो गई थी!

सुंदरी को सबने छलांग मारते देखा था, लेकिन यह कोई नहीं कह सकता था कि वह मर गई या किसी किनारे लग गई।

कुछ दिनों बाद सुंदरी का हुलिया देकर पुलिस वालों ने इश्तहार शाय किया और उसे पकड़ने या उसका पता देने के लिए इनाम मुकर्रर किया गया। पुलिस और इर्द-गिर्द के गांवों के लोग उसकी तलाश करने लगे।

पृष्ठ 181

अधूरे अध्याय का बाकी हिस्सा

किताब के शुरू में पाठकों को पढ़ाया है कि रात के वक्त गेस्ट हाउस में एक मुसाफिर बाबू शामदास के कमरे में बैठा उसे एक नॉवेल का मसौदा पढ़कर सुना रहा था। नॉवेल काफी बड़ा था लेकिन बाबू शामदास एक ही बार में सारा नॉवेल सुनना चाहता था।

मुसाफिर सुनाता गया और शामदास सुनता गया। उसे सुनने में रात गुज़र गई।

उस वक्त जब मुसाफिर ने लगभग सारा नॉवेल खत्म कर लिया। शायद एक आधा अध्याय ही बाकी था तो सुबह के सूरज की किरणें कमरे में दाखिल हो चुकी थीं।

मुसाफिर अध्याय के आखिरी पृष्ठों को तरतीब देने लगा और उन्हें ठीक करने में उसे कई मिनट लग गए, क्योंकि ये अध्याय के पृष्ठ कागजों पर लिखे हुए थे। कुछ स्कूल की कापियों के एक तरफ के खाली हिस्सों और बाकी अखबारी सफहात (पृष्ठों) के हाशियों पर वगैरह पर।

सफहात तरतीब से रख लेने के बाद मुसाफिर ने उन्हें पढ़ना लगाना तो उसकी नज़र शामदास के चेहरे पर पड़ी। शामदास की आंखों से आंसुओं का सावन बरस रहा था। उसका रंग मुर्दा सा पीला पड़ गया था और उसके होंठ कांप रहे थे।

"हैं!" मुसाफिर ने हाथ वाला कागज नीचे रखते हुए कहा, "आप रो रहे हैं श्रीमान जी? ये कोई ऐसी ज़बरदस्त ट्रेजेडी तो नहीं थी।"

शामदास के कानों में जैसे यह आवाज़ पड़ी ही नहीं। उसके आंसुओं का सैलाब ज़रा भी न रुका।

"अच्छा, ये आखिर अध्याय रहने देता हूँ। और फिर ये अभी अधूरा है।" कहते हुए मुसाफिर अपनी कॉपी पर रखे पन्ने को समेटने लगा।

"नहीं, नहीं!" आंखें पोंछकर अपने आप को संभालते हुए शामदास बोला, "सुनाइये! अब मैं बिल्कुल ठीक हूँ।"

और उसने मुसाफिर का हाथ—जो कागज समेट रहा था—पकड़कर कहा, "ओह! अफसोस, कितनी दर्दनाक कहानी है ये!"

मुसाफिर ने आखिरी अध्याय के मेले से कागज उठाए और पढ़ना शुरू किया।

पृष्ठ 182

(पिछले घटनाक्रम के दो साल बाद)

गुप्तेश्वर को केवल नाम से ही लोग जानते थे। उसे शक्ल से कोई नहीं पहचानता था। थोड़े ही समय में, केवल दो वर्षों में, वह बहुत प्रसिद्ध हो गया था।

प्रकाशक और संपादक विशेष रूप से उसे देखना चाहते थे, लेकिन कोशिश करने के बावजूद वे उसे ढूंढ नहीं सके। गुप्तेश्वर द्वारा छपने वाला हर लेख उन्हें डाक के माध्यम से प्राप्त होता था और साथ ही यह भी लिखा होता था कि उसका पारिश्रमिक जो भी उचित हो, फलाने पते पर भेज दिया जाए।

वह जितना हो सके, उसका पारिश्रमिक सदाकौर, विधवा सरदार जीवा सिंह, ग्राम दीवानपुर, जिला अमृतसर के पते पर भेज देता था। कई बार लोगों ने इस पते पर पत्र लिखकर गुप्तेश्वर की तलाश की, लेकिन वहां पूरे गांव में गुप्तेश्वर नाम का कोई व्यक्ति नहीं जानता था। जिस महिला के पास पैसे जाते थे, उसे भी कोई संतोषजनक जवाब नहीं मिलता था, जिससे गुप्तेश्वर का पता चल सके।

गुप्तेश्वर अमृतसर में भगता वाले दरवाजे के अंदर आठ आने एक महीने के कमरे में रहता था। किसी से बात करते हुए किसी ने उसे नहीं देखा था। दिन में हर समय कमरे का दरवाजा अंदर से बंद करके वह लिखता रहता और रात-रात भर शहर के बाहर बगीचों और वीरान इलाकों में घूमता रहता था। कई बगीचों के मालियों ने उसे कुछ बुदबुदाते हुए सुना था। कई उसे 'मस्त' के नाम से पुकारते थे।

कभी-कभी वह ऐसी जगहों पर घूमता था जहां लोगों की ज्यादा भीड़ हो। कई बार वहां से गुजरते लोगों को अजीब तरह से सवाल करने लगता था। ज्यादा लोग उसकी बकबक की परवाह किए बिना अपने रास्ते पर चल देते थे और कई उसके पास खड़े भी हो जाते थे।

उसकी कोठरी में आदमी की तरह जीवन बिताने के लिए भी सामान नहीं था। एक कमरे में सोने के लिए घास के ऊपर एक टाट का टुकड़ा बिछा हुआ था और दूसरे कोने में तीन ईंटें जोड़कर एक चूल्हा बनाया हुआ था, जिसके पास ही एक छोटा सा तवा, एक मिट्टी की आटा गूंधने वाली परात, और कुछ जंगली लकड़ियां और ईंधन पड़ा हुआ था। जहां उसके सोने की जगह थी, वहां एक ईंट खड़ी थी, जिस पर एक मिट्टी का दिया रखा हुआ था। उसी जगह बैठकर वह घुटनों पर एक लकड़ी की तख्ती रखकर लिखा करता था।

उसकी कोठरी के आसपास तांगे की मरम्मत करने वाले कई मुसलमान लोहार, एक दो बैल गाड़ी बनाने वाले...

पृष्ठ 183

...तरखान और हलवाइयों की दुकानें थीं।

आज सुबह ही वह अपने कमरे में बैठकर लिख रहा था। उसने घुटनों पर एक फटा पुराना कंबल बिछा रखा था, मालूम होता था वह रात भर रजाई का काम भी इसी से लेता था। उसके दाहिनी ओर बहुत से रद्दी कागज पड़े थे, जिनमें से एक तरफ स्कूल के बच्चों की लिखावट थी और दूसरी तरफ काली, तेज़ी से फैली हुई स्याही से नीला हो रहा था।

शाम हो चुकी थी। सारा दिन लिखते रहने के बाद वह कलम हाथ से रखकर लिखे हुए कागजों को उठाकर खड़ा हो गया। दरवाजे में आकर उसने एक-दो अंगड़ाइयां लीं। कमर सीधी की और हाथ की उंगलियों को घुमाकर चटकाने लगा। कागज गिनने के बाद उसने आज का लिखा हुआ सारा लेख सरसरी नज़र से पढ़ा और एक बार उसके मुंह से निकला:

"यह लेख। बस यही अंतिम अध्याय होगा और इसका भी बहुत थोड़ा हिस्सा बाकी है। इसमें आज ही खत्म करूंगा और इसके बाद हमेशा के लिए इस दुख भरी जिंदगी से छुटकारा हासिल कर लूंगा। लेकिन आह! मेरा दूसरा काम हजार कोशिश के बावजूद खत्म नहीं हो सका। खैर नहीं, हुआ तो मेरा क्या कसूर है, और वह होना भी नामुमकिन है जब मैंने ऐसे अंधेरे में ही तलवारें चलाईं। अच्छा! किस्मत में इस काम से सफल होना नहीं लिखा था। बस, इस नामुमकिन काम के लिए मैं और समय बर्बाद नहीं कर सकता, काफी परेशान हो चुका हूँ"।

इसके तुरंत बाद ही कुछ सोचकर वह गहरी सोच में डूब गया, जैसे गाड़ी चलने के बाद मुसाफिर को याद आए कि पैसों वाला थैला उसके पास नहीं है। कागजों के न होने से इसका भी यही हाल हुआ।

उसने हाथ वाले कागजों की पोटली बनाकर उसी कोने में जहां पहले से लिखे हुए बहुत से कागज जमा थे, रखकर और खुद उसके नीचे बाजू रखकर कंबल ओढ़कर लेट गया।

शहर में पैसा ही सब कुछ होता है। पैसे के बिना सांस लेना भी मुश्किल होता है और उसके पास पैसा नहीं था। वह सुबह उठते ही घर से निकल पड़ा, जैसे नुचे हुये परों वाला परिंदों चोगे (खाने) की तलाश में।

इसके अलावा दूसरी मुसीबत यह कि सर्दी का मौसम और सुबह का वक्त। गरीब को इस ज़बरदस्त सर्दी में बचाने वाला एक लंबा सा फटा हुआ कोट था, जिसके बटन टूटे हुए और काज फटे हुए थे। ठंड से बचने के लिए उसने दोनों सिरों में छेद बनाकर धागे डाल लिए थे। उसके तन पर एक घुटनों तक

लंबा कच्छा था। घुटनों से नीचे उसकी टांगें नंगी थीं, जो मिट्टी, धूल और तेल से इतनी गंदी हो रही थीं, जैसे रेलवे शेड में काम करने वाले मजदूरों की होती हैं। यही हाल उसके मुंह और हाथों का...

पृष्ठ 184

था लेकिन इसके गोरे रंग पर ये मेल ज़्यादा बुरी नहीं लगती थी। पांव से वो नंगा था जिनकी घाईयां फट रही थीं।

वह सर्दी से कांपता हुआ कागजों की तलाश में कई जगह फिरा लेकिन सब बेकार। उसे अपने और अपनी किस्मत पर सख्त गुस्सा आ रहा था। जब वह मायूस होकर घर की तरफ लौटा तो अपने अंदर की आग से अंदर ही जल रहा था। कोठरी के पास आकर एक बार उसका दिल चाहा कि इस अधूरी किताब को चूल्हे के हवाले करके साथ ही अपनी दुखभरी जिंदगी का खात्मा कर ले। वह इस काम के लिए तैयार भी हो गया। यहां तक कि सारे कागज इकट्ठे करके उसने चूल्हे में रख दिए लेकिन जब उसने टाट के नीचे से दियासलाई की डिबिया उठाई तो वह खाली थी। इससे उसे और भी गुस्सा आया। अब वह आग या दियासलाई की तलाश में फिर घर से निकला।

इसके साथ ही इसके ख्यालों ने बदलना शुरू किया। वह कितनी ही देर दीवार से कमर लगाए दरवाजे के सामने खड़ा सोचता रहा। फिर अंदर दाखिल हुआ और वैसे ही सारे कागज चूल्हे में से निकाल कर वापस उसी कोने में रख दिए जहां से उसने उठाए थे और खुद एक मर्तबा फिर किस्मत आजमाने के लिए घर से निकला।

रास्ते में उसे एक उस्ताद जुआरी की याद आई। उसने उसके पास जाकर एक रुपया उधार मांगा। उसे रुपया मिल गया और रुपये लौटाने के इकरार के बाद...।

वह सीधा घर आया। सारे कागज समेट कर अपना पल्लों के नीचे दबाया और रेलवे स्टेशन पर जा पहुंचा। इसके कुछ घंटे बाद वह लाहौर के बाजारों में फिर रहा था। नाउम्मीदी का जाल उसके चारों तरफ बना हुआ था।

इसका मसौदा किसी ने नहीं खरीदा। एक तो रद्दी कागजों का ढेर देखकर और दूसरे इसका अपना डरावना हुलिया देखकर एक दो शहरों ने इसके नॉवेल की जो कीमत देनी चाही, वह इसे और दिल शिकस्त करने वाली थी। दस-पंद्रह रुपये।

काश कि वह लोगों को बता देता कि वह गुप्तेश्वर है तो लोग उसके पांवों की खाक को माथे लगाते लेकिन वह ऐसा नहीं कर सकता था। सफर की तरह ही वह हर मुमकिन तौर पर खुद को छुपाए रखना चाहता था।

वापस लौटते वक्त उसके पास एक चुवन्नी बाकी थी और वह भी खोटी। इसलिए वह बिना टिकट ही गाड़ी में बैठ गया। वहां गाड़ी के तख्ते पर अखबार के कुछ पन्ने पड़े थे। पास बैठे एक बाबू से पेंसिल मांग कर वह अखबार के हाशिए पर अपने अधूरे अध्याय का आखिरी हिस्सा लिखने लगा। लेकिन वह अभी अधूरा ही था...

शामदास की आंखों से अब तक आंसू जारी थे। उसने गौर से देखा। गुप्तेश्वर जिस वक्त इन कागजों को पढ़ रहा था, ये अखबार के रद्दी कागज थे और उनके हाशिए पर पेंसिल की तहरीर थी। कहीं भी कोई जगह खाली नहीं थी। उस वक्त मुसाफिर के हाथ में सबसे आखिरी वर्क था। वही अखबारी कागज— इसके...

पृष्ठ 185

हाशिये से ऊपर की सतह में पढ़ने के बाद मुसाफिर रुक गया और उसे तिपाई पर रख दिया। यह अध्याय अभी अधूरा था।

किताब खत्म करने के बाद मुसाफिर ने एक बार फिर बाबू शामदास की तरफ देखा। उसके चेहरे का पीलापन बढ़ता जा रहा था। गुप्तेश्वर हमदर्दी भरे लहजे में बोला, "मेरा ख्याल है जागते रहने की वजह से आपकी तबीयत ज्यादा खराब हो गई है। अब आप आराम कीजिए ज़रा"।

"नहीं नहीं। आप पढ़ते जाइये," बाबू शामदास ने गहरी सांस भरते हुए कहा।

"बस," गुप्तेश्वर ने जवाब दिया, "यह खत्म हो चुका है। इसका आखिरी अध्याय अभी अधूरा है जैसे..."।

"खत्म हो गया?" शामदास ने दिल के किसी पोशीदा दर्द को छुपाते हुए कहा, "और कितना बाकी है अभी?"।

"बहुत थोड़ा," यह कहकर गुप्तेश्वर ने फिर उसके परेशान चेहरे की तरफ देखा।

बाबू ने पूछा, "लेकिन गुप्तेश्वर साहब! एक बात मैं और पूछता हूँ। इस नॉवेल का प्लाट आपके दिमाग की उपज है क्या..."।

बीच में ही गुप्तेश्वर बोल पड़ा, "जी नहीं। यह एक ऐसा वाकया है जो सच्चा और हकीकत है। और मैंने इसे किसी से सुना था। मैंने तो सिर्फ इतना किया है कि इसे नॉवेल की शक्ल में पेश कर दिया है। नॉवेल के ऐसे कच्चे प्लाट बड़े कारआमद साबित होते हैं। ये नॉवेल में जिंदगी भर देते हैं"।

बाबू ने हाथ के पसीने रुमाल से पोंछते हुए कहा, "लेकिन क्या आप बता सकते हैं कि यह हाल आपने किससे सुना था?"।

"जी खुद सुंदरी की जुबानी"।

"अच्छा। यह सब कुछ सुंदरी ने खुद आपको सुनाया था? वह आपको कहां मिली थी, और कब मिली थी?" कहते हुए शामदास के पसीने छूट गए।

"जी एक गांव में"।

"और आपने इसकी कहानी को नॉवेल के रूप में ढाल दिया"।

"हां, मुझे यह मौज़ू बहुत अच्छा लगा था"।

बाबू के चेहरे पर गुस्सा झलकने लगा। अपने एहसासात को छुपाते हुए वह बोला, "माफ कीजिए। आप जैसे बड़े पाए के अदीबों को भला इसकी क्या ज़रूरत थी, जबकि आप तसव्वुर से ही इससे अच्छा प्लाट बना सकते हैं"।

"ठीक है। लेकिन इस हकीकी प्लाट से मुझे ज़्यादा कामयाबी की उम्मीद थी"।

पृष्ठ 186

"माफ करना। मेरी आदत बहुत बुरी है कि मुंह पर सच कह दिया करता हूँ। जहाँ आपकी अदबी काबिलियत ने मुझे खरीद लिया है वहां आपकी ये बात ज़रा हल्की सी लगती है। आपने तो वो बात की है जिसके लिए कहा जा सकता है कि एक बार एक माहिर तैराक पानी में तैरता हुआ अपने करतब दिखा रहा था। अपनी तैराकी के कमाल दिखाने के लिए वो हद से ज्यादा जोर लगा कर जब उठा सीधा होकर तैरने लगा तो उसका नतीजा ये हुआ कि सांस टूट जाने की वजह से वो डूब ही गया और उसकी मौत हो गई। पेट में पानी भर जाने की वजह से जब काफी देर तक वो पानी की सतह के नीचे ही डूब रहा तो तमाशाबीन उसे इस कमाल समझ कर खुशी से तालियां बजाते हुए कह रहे थे,

'बड़ा कमाल का तैराक है, इतनी लंबी डुबकी?'

जब उसकी लाश फूल कर पानी की सतह पर तैरने लगी तो लोग और खुश होकर और फख्र से एक दूसरे से कहने लगे,

'देखो भैय्या! हूबहू मुर्दे की तरह तैर रहा है। जैसे सचमुच ही मर गया हो!'

इसी तरह वो बेचारी बदनसीब लड़की जिसकी जिंदगी का हर लम्हा चोट पाने वाला था, उसकी जिंदगी से आपने ये नाजायज फायदा नहीं उठाना चाहिए था। किसी ने सच ही कहा है कि बकरा रोए अपनी जान को और कसाई रोये अपने गोश्त को।"

"इसलिए ऐ मेरे मेहरबान गुप्तेश्वर साहब! मुझे माफ करना। ये बात आप के फन को धब्बा लगाने वाली है और इससे आपकी संगदिली भी जाहिर होती है। आपको चाहिए था कि इस बदनसीब लड़की की कुछ मदद करते न के उसके गर्म आंसुओं और सर्द आहों को सच कराने का ही आप ये सब करने की फिक्र में हैं।"

आंखें नीचे किये गुप्तेश्वर बोला, "वाकई ये मेरी गलती थी। लेकिन मेरे दिल ने मुझे मजबूर किया इसलिए मुझे ऐसा करना पड़ा।"

बाबू बोला, "फिर कोई ऐसी बुरी बात नहीं। ये तो सिर्फ तजुर्बा होता है जिससे कोई गलती नहीं होती। लेकिन मालूम होता है सुंदरी ने मरने से थोड़ी ही देर पहले आपको ये हाल सुनाया होगा।"

"जी हां, डूबने से सिर्फ एक-दो दिन पहले उसने अपनी सारी राम कहानी मुझे सुनाई थी।"

"और फिर आपको उसके दरिया में डूबने का हाल कैसे पता चला?"

"उन दिनों मैं उसी गांव में ठहरा हुआ था।"

शामदास के जिस्म से जैसे कोई उसके गोश्त को संसी से उखाड़ रहा था। उसकी नस-नस, अंग-अंग में दर्द हो रहा था।

वो ज़रा ठहर कर बोला, "आफरिन! जिंदा बाद गुप्तेश्वर साहब! आपने कमाल कर दिखाया। हां तो ये जो बाकी सफहे (पृष्ठ) लिखे हैं, मेरा ख्याल है इन सफहात में आप अदीब की हैसियत से अपनी जान पहचान करवाना चाहते हैं? लेकिन ये सफहे आज जरूर लिख लेना। एक अर्ज़ और भी है जो उम्मीद है नामंजूर करके मेरा दिल नहीं तोड़ेंगे और वो ये कि अपना कयाम आज से इस खादिम के पास ही रखिये ताकि आपकी नेक सोहबत में इस..."

पृष्ठ 187

गोनहगार की बाकी जिंदगी भी संवर जाए। और फिर इस बदनसीब के मुताल्लिक और भी जो कुछ आप जानते हैं मुझे बताइए।"

गुप्तेश्वर ने खुशी से जवाब दिया, "यह मेरे लिए खुशकिस्मती की बात होती अगर मैं इसे पूरा कर सकता।"

"क्यों, इसका मतलब?"

"मतलब यह कि इस नॉवेल के अधूरे अध्याय की तरह मेरी जिंदगी का नॉवेल का भी आखिरी अध्याय ही बाकी है।"

"मैं आपके कहने का मतलब नहीं समझा - आप - आप?"

"जी हाँ, मेरे जीने के लिए अब कोई जगह है और न वक्त। मैं - एक..." कहता हुआ गुप्तेश्वर फिर रुक गया और उसके बाद शामदास के दोबारा पूछने पर भी और कुछ न बता सका।

बड़ी देर खामोश रहकर गुप्तेश्वर बोला:

"मैं आपको एक तकलीफ और देना चाहता हूँ।"

"इसे मैं अपनी खुशकिस्मती समझूंगा। फरमाइये, मेरे लिए क्या हुक्म है?"

कुछ देर चुप रहकर गुप्तेश्वर बोला, "आप मुझे इंसानी शक्ल में मुजस्सम फरिश्ता नज़र आते हैं। मेरे दिल में आपके लिए कितनी इज़्ज़त है, बयान नहीं कर सकता। मैं आपको एक बहुत बड़ी जहमत देना चाहता हूँ। मेरा ख्याल है ऐसे नेक कामों के लिए ही कुदरत ने आप जैसे इंसानों को दुनिया में भेजा है। क्या आप मेरा एक काम करेंगे?"

उसके जुमले सुनकर बाबू शामदास की नज़रें ज़मीन में गड़ गईं। वह बोला, "सारी उम्र के लिए मुझे अपना गुलाम समझिये। जिस खिदमत के भी काबिल मुझे समझते हैं, इसके लिए मुझसे पूछे बिना ही अपने हुक्म की तामील करा सकते हैं। लेकिन परमात्मा के लिए मेरे लिए ये तारीफ भरे जुमले इस्तेमाल न कीजिये। मैं एक हकीर और गहरे ज़मीर वाला आदमी हूँ। अपनी जिंदगी में मैंने ऐसे-ऐसे गुनाह किये हैं.... सबसे बड़ा गुनाह जो मुझे कभी नहीं भूलेगा, अगर कभी आप सुन लें तो आपके रौंगटे खड़े हो जाएं। इसलिए मैं कहता हूँ कि मैं इस तारीफ के काबिल नहीं हूँ, आप ही इस के हकदार हैं।"

ममनून होकर गुप्तेश्वर की आंखों में पानी आ गया। वह शुक्रिया अदा करते हुए सर झुकाकर बोला, "आप मुझे बहुत ऊँचा बता रहे हैं। मैं तो उसका हजारवां हिस्सा भी अपने आप में नहीं पाता। आपकी इस शाइस्तगी, शराफत और खुलूस ने मेरे दिल पर असर डाला है।"

"मेरे लिए आप परमात्मा का रूप हैं।" गुप्तेश्वर ने आंखें नीची कर लीं।- मेरा एक काम करेंगे ?

बाबू बोला, "हाँ जल्दी हुक्म कीजिये।"

गुप्तेश्वर बोला, "एक तो यह कि किसी तरह मेरा वो रुमाल मंगवा दीजिये, जो लाहौर में मैं झ्योर के तंदूर पर दे आया था। लाहौर रेलवे स्टेशन के ठीक सामने उसकी दुकान है। दूसरे अगर इस नॉवेल के छपाने का कोई इंतजाम हो सके और उसकी जो आमदनी हो, वो इसी पते पर भेज दीजियेगा जिसका मैंने नॉवेल के आखिरी अध्याय में ज़िक्र किया है।"

बाबू शामदास का जिस्म उस वक्त गोश्त का नहीं जैसे लकड़ी का बना हुआ था। उसकी आंखें उस वक्त गुप्तेश्वर की आंखों में गड़ी हुई थीं।

जैसे कोई रास्ता भूलने के बाद फिर ठीक रास्ते की तरफ लौटता है। गुप्तेश्वर की बातों के रुख को शामदास बदलते हुए बोला, "माफ कीजियेगा, मेरा ध्यान दूसरी तरफ चला गया था। हाँ, क्या फ़रमा रहे थे आप?"

मुसाफिर ने अपनी दोनों मांगों को दोहराया।

शामदास अपने अंदर मचल रहे बेचैनी को संभालते हुए बोला, "सर आंखों पर। मुझे आपके इन दोनों हुक्मों की तामील से बड़ी खुशी होगी। वो क्या नाम पढ़ा था आपने? माई सदाकौर? वो आपकी कोई रिश्तेदार है?"

"जी हाँ।"

"और आपका दौलत खाना?"

"दौलत खाना तो मेरा इस वक्त आपके पैरों में है। इसलिए मैं इसे गरीब खाना नहीं कह सकता।"

"ये तो आपकी ज़रा-नवाज़ी है। लेकिन दरअसल आप कहां के रहने वाले हैं?"

गुप्तेश्वर ने कागज इकट्ठे करते हुए बात टाल दी, "मेरा ख्याल है आप काफी थक गए हैं। इसलिए थोड़ा सा आराम कर लीजिये। आपको काम पर भी जाना होगा।"

"नहीं, आज तो इतवार है। खैर ये बातें फिर सही।" ज़रा सा ठहर कर बाबू ने फिर पूछा, "हाँ वो रुमाल मैं खुद ही जा कर ले आता हूँ। तंदूर वाले का पता तो आपने बता ही दिया है।"

गुप्तेश्वर ने इस पते को दोहराते हुए कहा, "बाबूजी, आप यहां कितनी अर्से से रहते हैं?"

"सत्रह-अठारह साल हो गए हैं।"

"तब तो इस शहर में आपको अच्छा खासा जानते होंगे।"

"जी हाँ, आपकी मेहरबानी से मुझे काफी लोग जानते हैं।"

पृष्ठ 189

गुप्तेश्वर ने उम्मीद भरे लहजे में कहा, "तो क्या आप एक आदमी को तलाश करने में मेरी मदद कर सकते हैं? मैं उसे ढाई साल से ढूंढ रहा हूँ लेकिन आज तक उसका कोई पता नहीं चल सका। और आप यह सुन कर मेरी अक्ल पर हंसेंगे कि मैंने उसकी शक्ल भी आज तक नहीं देखी, न ही उसके बारे में कुछ पता है। अगर शक्ल ही पहचानता तो शायद अब तक तलाश कर ही लेता।"

बाबू ने कहा, "आप उसके बारे में जो कुछ जानते हैं मुझे बता दीजिये। मेरा ख्याल है कहीं न कहीं से उसकी खबर ही जाएगी। रेलवे के काम में मैंने तो नए-नए आदमी से वास्ता पड़ता रहता है। दुनिया का कौन सा आदमी है जो रेलवे के मुलाज़िमों की आंखों के सामने से न गुजरता हो। आप उसके बारे में जो कुछ जानते हैं जल्दी बता दीजिये।"

गुप्तेश्वर ने कहा, "मैं सिर्फ उसका नाम ही जानता हूँ और कुछ नहीं।"

"उसका नाम क्या है?"

"नाम उसका तारा चन्द है....।""हैं! ये क्या? मालूम होता है रात भर जागते रहने की वजह से आपकी तबीयत ज्यादा खराब हो रही है। मेरा ख्याल है इन बातों को अभी यहीं रहने दीजिये और आप लाहौर भी आज न जाइये। रुमाल के सिलसिले में फिर कभी देखा जाएगा। अब थोड़ा आराम कर लीजिये। आपका रंग एक दम पीला पड़ गया है।"

रुमाल से पसीना पोंछ कर और खांसी कर आवाज़ ठीक करते हुए बाबू फिर बोला, "नहीं, आप फिक्र न कीजिये। मुझे कई बार इस किस्म की घबराहट हो जाती है लेकिन यह अभी ठीक हो जाएगी। हाँ, वो तारा चन्द पहले कहां रहता था?"

"पहले वह सियालकोट में रहता था," बाबू के चेहरे की तरफ देख कर शर्माते हुए जी। आपकी आवाज़ थरथरा रही है। उठ कर चारपाई पर लेट जाइये।

बाबू शामदास की घबराहट पहले से ज्यादा होती जा रही थी। वह रुमाल से अपने आप को हवा देते हुए बोला, "वो..... उसे तो मैं बहुत अच्छी तरह जानता हूँ।"

शामदास का चेहरा उस वक्त मुर्दे की तरह हो रहा था। उसके हाथ थरथरा रहे थे और उसकी सांस इस तरह चल रही थी जैसे वह कोई मरीज हो।

"जानते हैं? बहुत अच्छी तरह!"

गुप्तेश्वर ने ये अल्फाज़ इस तरह आपे से बाहर होकर कहे जैसे किसी को कोई गुमशुदा खज़ाना मिल जाए।

पृष्ठ 190

वह अपनी खुशी को न रोकते हुए उठ कर खड़ा हो गया और जल्दी से बोला, "मेहरबानी करके जल्दी बताइये। वह कहां रहता है? क्या आप मेरी उससे मुलाकात करा सकते हैं?"

बाबू ने कहा, "एक नहीं, सौ बार। वह मेरी अच्छी तरह पहचान का है।"

पागलों की तरह आंखें फैला कर गुप्तेश्वर के चेहरे की तरफ देखते हुए बाबू शामदास ने कहा।

गुप्तेश्वर अपनी बढ़ती खुशी और दिल की हलचल को रोकते हुए जल्दी से पूछने लगा, "वह कहां रहता है, क्या काम करता है?"

"वह लाहौर में रहता है और एक सरकारी दफ्तर में मुलाज़िम है।"

"तो फिर मेहरबानी से आज ही मेरी उससे मुलाकात करा दीजिये। किस वक्त कराएंगे?"

"मेरा ख्याल है मैं शाम को उसे साथ ही ले आऊंगा।"

"ओ मेरे हमदर्द और मेहरबान दोस्त! हज़ार बार शुक्रिया, लाख करोड़ बार शुक्रिया। आपने मुझे गुलाम बना लिया है। आपने मेरी जिंदगी की एक बहुत बड़ी मुश्किल हल कर दी। बेशक मुझे आपकी थकान और तबीयत की खराबी की भी काफी फिक्र है, फिर भी यह अर्ज करने से खुद को रोक नहीं पा रहा कि आज ही मेरी उससे मुलाकात करा दीजिये। चाहे आपको कितनी ही तकलीफ क्यों न उठानी पड़े।"

कुछ देर आराम करने के लिए वे दोनों लेट गए। लेकिन सारी रात जागते रहने के बावजूद दोनों को नींद न आई।

खाने का वक्त होने पर बाबू के नौकर ने रोटी पकाई जो नहाने धोने से फारिग होकर दोनों ने खाई।

****

नॉवेल का अधूरा अध्याय मुकम्मल करने की ताकीद करके सवा बारह बजे वाली गाड़ी से शामदास लाहौर चला गया।

गुप्तेश्वर के चेहरे पर आज ऐसी कामयाबी की खुशी झलक रही थी जैसी सारी जिंदगी उसे नसीब नहीं हुई थी। आज का दिन भी काफी था, लिखने के लिए वक्त भी मुनासिब था और जगह भी अच्छी थी। उसके दिल को भी इतनी खुशी कम और बेश ही मिली होगी लेकिन आज उसके पास लिखने के लिए कुछ भी बाकी नहीं था। आज शिकार खेलने का सारा सामान मौजूद था लेकिन उसका शिकार खेलने

का शौक ही जैसे खत्म हो गया था। रोटी खा कर वह चारपाई पर लेट गया लेकिन होने वाली मुलाकात की फिक्र ने उसकी नींद उड़ा रखी थी।

वह बड़ी बेचैनी से उस वक्त का इंतज़ार करने लगा जब उसका यह मेहरबान मुलाकाती ताराचंद को साथ लाने...

पृष्ठ 191

का वादा किया था। उसने ये छह सात घंटे मिनट और सेकंड गिन-गिन कर गुजारे। उसकी नज़र सामने लटके क्लॉक पर पड़ती रही।

आखिर पांच बज गए। गुप्तेश्वर दरवाजे के बाहर जाकर टहलने लगा। जब भी सामने के मोड़ से कोई तांगा इस तरफ आता तो उसका दिल धड़कने लगता। कई तांगे आए और गुजर गए। उसकी बेसब्री हर लम्हा बढ़ती जा रही थी।

आखिर एक तांगा आया। लेकिन बाबू शामदास अकेला ही उतरा। लेकिन उसने गुप्तेश्वर के दिल की बेकरारी को फौरन भांप लिया और बोला, "वह आ रहा है!"

गुप्तेश्वर की जान में जान आई। उसने पूछा "कहां?"

बाबू उस वक्त हांफ रहा था। उसके चेहरे पर हवाइयां उड़ रही थीं और उसका सारा जिस्म कांप रहा था।

गुप्तेश्वर को उसकी हालत देख कर बड़ी फिक्र हुई। उसने पूछा, "क्या बात है? आपकी ये हालत क्यों हुई है? आपकी तबीयत ठीक नहीं है क्या?"

बाबू ने अपनी घबराहट को छुपाने की कोशिश करते हुए बनावटी हंसी हंस कर कहा, "नहीं कुछ नहीं। गाड़ी में देरी थी इसलिए बस से ही आ गया। रास्ते में एक एक्सीडेंट हो गया। लारी एक दरख्त से टकरा गई और कई लोगों को चोटें आईं। मुझे कोई चोट तो नहीं लगी लेकिन हादसे को देख कर मेरे दिल की घबराहट काफी बढ़ गई है।"

गुप्तेश्वर ने घबरा कर कहा, "तो चलिए। अंदर चल कर आराम कीजिये। मैं नौकर से कहता हूँ, गर्म-गर्म दूध ले आए और..."।

उसकी बात काट कर बाबू बोला, "नहीं श्रीमान जी। ऐसी कोई बात नहीं है। ऐसी कोई बात नहीं है। मैं तो स्टेशन तक जा रहा हूँ। हमारे जनरल मैनेजर ने आज किसी जाती काम से यहां से गुजरना है इसलिए मेरा और कई दूसरे बाबुओं का वहां होना ज़रूरी है। ये लीजिये रुमाल।"

रुमाल गुप्तेश्वर को दे कर वह और कोई बात कहे बिना ही तांगे पर जा बैठा और बोला:

"ताराचंद सवा छह बजे आएगा। आप यहीं उसका इंतज़ार कीजिये। मेरा ख्याल है वह पौने पांच की गाड़ी से आएगा।"

तांगा सड़क पर दूर आंखों से ओझल हो गया।

सवा छह के बजाय सात हो गए। लेकिन ताराचंद अभी तक न आया। गुप्तेश्वर दरवाजे में खड़ा सड़क पर गुजरने वाले हर आदमी को बड़े गौर से देख रहा था।

अंधेरा बढ़ता जा रहा था। उसी वक्त गुप्तेश्वर ने देखा एक लंबे कद का आदमी दरवाजे में आकर खड़ा हो गया और पूछने लगा, "बाबू शामदास का घर यही है?"

पृष्ठ 192

गुप्तेश्वर समझ गया कि यही ताराचंद है। वो बोला, "आइये, क्या आप का नाम ही ताराचंद है?"

"जी हां," कह कर वो जल्दी से अंदर आ गया।

गुप्तेश्वर ने बैठक में पहुँच कर उसे कुर्सी पर बैठने का इशारा किया। ताराचंद ने और कोट पहना हुआ था और शायद आंखें खराब होने या धूप की वजह से धूप का चश्मा भी लगा रखा था। सर की पगड़ी सी उसने बड़े बे-ढंग से बांधी हुई थी और कोट का कॉलर उठा रखा था जिससे पता चलता था कि सर्दी से वो बहुत डरता है। दोनों कितनी ही देर चुप-चाप आमने-सामने कुर्सियों पर बैठे रहे।

आखिर गुप्तेश्वर ने ही इस चुप्पी को तोड़ते हुए पूछा, "क्यों जी, आप ही ताराचंद हैं?"

वो बोला तो नहीं लेकिन सर हिला कर उसने हां में जवाब दिया।

गुप्तेश्वर ने फिर कहा, "तो क्या मैं आज तक आप की ही तलाश में भटक रहा हूँ। दूसरे लफ़्ज़ों में क्या आप का ही हो पाने के लिए मैं आज तक ज़िंदा हूँ?"

ये कहते-कहते गुप्तेश्वर की आवाज़ में तेज़ी आ गई और उसकी आंखें लाल हो गईं। ताराचंद पर इसका कुछ भी असर न हुआ और वो इसी तरह नीरसता से बोला, "मैं आप का मतलब नहीं समझा।"

गुप्तेश्वर अब गुस्से से कांप रहा था। उसकी रग-रग से तशद्दुद (हिंसा) फूट रहा था। वो अपने आप से बाहर होकर बोला, "ओ-शैतान? तुम मेरा मतलब नहीं समझे? ठीक है। मैं तुम्हें मतलब समझाने के लिए ही तो इतनी मुद्दत से ढूँढ रहा था।"

ताराचंद फिर बोला, "लेकिन क्या कोई और बात शुरू होने से पहले मैं आप का तारुफ (परिचय) जान सकता हूँ?"

"क्यों नहीं," गुप्तेश्वर ने कड़क कर कहा, "क्या तुम किसी सुंदरी नाम की औरत को जानते हो?"

"जानता हूँ, लेकिन आप का उससे क्या रिश्ता है?"

"रिश्ता बताने के लिए ही तो मैं आप को ढूँढ रहा था। हां तो वो तेरी क्या लगती थी?"

"वो मेरी घरवाली थी।"

"और वो अब कहां है?" ताराचंद ने कोई जवाब न दिया।

गुप्तेश्वर ने फिर पूछा, "क्या तुम उस के बारे में जानते हो कि वो ज़िंदा है या मर चुकी है?"

इसी तरह बेफिक्र बैठे हुए ताराचंद ने कहा, "मैं ने सुना है कि वो मर चुकी है।"

"तुम ने किस से सुना?"

पृष्ठ 193

ताराचंद चुप रहा।

गुप्तेश्वर फिर कड़का, "नहीं, तू झूठ है, तू शैतान है। तुझे उस के मरने की कोई खबर नहीं और तुझे उस की फ़िक्र करने की भी ज़रूरत नहीं थी। तुझे सिर्फ इतना ही पता है कि तू ने उसे मौत के मुंह में पड़ा छोड़ कर घर से निकल गया था। उस के बाद उस की क्या दुर्दशा हुई? क्या तुझे कुछ पता नहीं?"

ताराचंद सिर से पांव तक कांप रहा था। उस के मुंह से कोई बात नहीं निकली।

गुप्तेश्वर के लिए अब गुस्से की हालत में बैठना मुश्किल हो गया। वो तड़प कर कुर्सी से उठ खड़ा हुआ।

दोनों मुट्ठियाँ भींच कर शेर की तरह उस की तरफ लपका।

उस की गर्दन पर मज़बूत हाथ डाल कर और दूसरे हाथ से उस के कंधे से कोट को पकड़ कर ज़ोर से झिंझोड़ते हुए बोला, "बद-ज़ात। मक्कार। क्या तेरा ख्याल है कि इस तरह ढोंग करने से मैं तुझे ज़िंदा छोड़ दूंगा? याद रख, दुनिया की कोई ताकत इस वक्त तुझे मेरे हाथों से नहीं बचा सकती।"

दांत पीसते हुए, उस को धकेलते हुए कोट के नीचे से एक तेज़ और चमकीली कटार निकाल कर,

"तेरी छाती में मार कर तेरा लहू बहाऊंगा, तब कहीं जा कर मेरी आग बुझेगी और मेरा दिल ठंडा होगा। बेशक मैं ये भी जानता हूँ कि बाबू शामदास जैसे अज़ीम इंसान के मकान पर तेरे जैसे चंडाल आदमी को ला कर मैं उन के साथ ज़बरदस्त नाइंसाफी की है। इस पाक जगह पर तेरा नापाक लहू बहा कर मैं और भी गुनाहगार हूँगा लेकिन इस वक्त मुझे इन बातों की ज़रा भी परवाह नहीं। मुझे भरोसा है कि जब मेरे बुज़ुर्ग बाबू शामदास को तेरी शैतानी हरकतों का पता चलेगा तो न सिर्फ वो

मेरी गलती को माफ़ कर देंगे, बल्कि मुझे शाबाशी भी देंगे कि मैं ने एक पापी चंडाल को मार कर धरती का बोझ हल्का किया है।"

"बता। जल्दी बता... खैर तू कुछ नहीं बताना चाहता तो मुझे इस के पूछने की भी ज़रूरत नहीं। मेरे लिए सिर्फ इतना ही काफी है कि तू मेरी माँ का कातिल है। उस की इज़्ज़त का लुटेरा है। शैतान! अगर मरने से पहले कुछ कहना चाहता है तो जल्दी बोल। मैं तुझे पांच मिनट देता हूँ।"

ताराचंद इसी तरह कांप रहा था। उस की आंखें ज़मीन पर थीं। ऊपर की बातें कई बार गुप्तेश्वर के दोहराने पर भी उस ने कोई जवाब न दिया।

गुप्तेश्वर ने फिर बिजली की तरह कड़क कर कहा:

"ओ ज़ालिम! सुन और कान खोल कर सुन। एक ऐसा आदमी जो एक बेसहारा औरत के साथ धोखा कर के उस को जाल में फँसा कर उस की इज़्ज़त को मिट्टी में मिलाते वक्त कुछ भी शर्म नहीं करता और फिर फटी-हालत में उस को और उस की मासूम बच्ची को दर-दर की ठोकरें खाने के लिए और सारी दुनिया की मुसीबतें झेलने के लिए छोड़ कर चला जाता..."

पृष्ठ 194

है और आखिर बेचारी को शर्म व हया त्याग कर रंडी बनना पड़ता है, इस जैसे बदचलन को इंसान कहलाने का कोई हक नहीं और न ही उसे ज़िंदा रहने का हक है।"

ताराचंद पत्थर का बुत बना बैठा था।

गुप्तेश्वर ने फिर पूछा, "क्या ऐसे मौज़ी (पीड़ा देने वाले) को ज़िंदा रह कर धरती का बोझ बढ़ाना का हक है? इस बात का फैसला मैं तुझ पर ही छोड़ता हूँ। बता, जल्दी बता, क्या ऐसे गुनाहगार को ज़िंदा बचना चाहिए?"

उस ने सिर हिला कर नहीं में जवाब दिया।

"तो क्या मरने के लिए तू तैयार है?"

उस ने सिर हिला कर हां में जवाब दिया।

"तो फिर तैयार हो जा।"

कह कर गुप्तेश्वर ने कटार निकाली। अगर ताराचंद की जगह कोई और होता तो उसे देख कर ही उस का दिल दहल जाता।

उस वक्त कमरे में काफी अंधेरा हो चुका था। ये सोच कर कि निशाना गलत न बैठे, गुप्तेश्वर ने झुक कर हाथ रोक लिया और फौरन बिजली का बटन दबा दिया। कमरा जगमगा उठा। उसे ये फिक्र थी कि कहीं ताराचंद न निकल जाए, इस लिए उस ने कमरे की कुंडी भी अंदर से बंद कर ली।

उस की नज़र जब रोशनी में उस पर पड़ी तो उस ने देखा कि ताराचंद कांपते हाथों से कोट और कमीज़ के बटन खोल कर अपनी छाती नंगी कर रहा था। ताराचंद की ये बात देख कर कि जैसे वो पहले ही मरने के लिए तैयार हो कर आया है, गुप्तेश्वर सकते में आ गया। फिर उसे ख्याल आया कि ये शैतान इस तरह मेरा दिल नरम कर के मुझे जान बचाने की कोशिश कर रहा है। उस ने और देर करना मुनासिब न समझा और कटार वाला हाथ दोबारा उठा कर उस की तरफ इतनी तेज़ी से लपका कि जैसे एक ही हमले से उसे ज़मीन पर गिरा दे। लेकिन अभी उस का हाथ उस की छाती तक नहीं पहुंचा था कि उस की नज़र ताराचंद के चेहरे पर पड़ी। गुप्तेश्वर का हाथ आगे बढ़ने के बजाय पीछे हट गया और वो खुद आगे बढ़ा।

गर्दन झिंझोड़ने से ताराचंद की पगड़ी उतर गई और ऐनक की कमानी भी एक कान से उलझ कर उतर गई थी। गुप्तेश्वर ने जब उस के जिस्म को हाथ लगाया तो वो निहायत हवा की तरह बर्फ की तरह ठंडा हो रहा था। गुप्तेश्वर चीख मार कर पीछे हट गया। उस की आंखों के आगे अंधेरा छा गया। दूसरे लम्हे वो आगे बढ़ा और ताराचंद की ऐनक उतार कर उस के चेहरे को देखा।

उस के मुंह से चीख निकली,

"हैं बाबू शामदास जी!"

गुप्तेश्वर की आंखों के आगे सारा कमरा घूम रहा था। उसे ये सब कुछ जादू का खेल मालूम होता था। कितनी ही देर वो इसी तरह खड़ा उस की तरफ निहारता (घूरता) रहा। एक बार फिर उस का कटार वाला हाथ और ऊपर उठा लेकिन फिर नीचे गिर पड़ा।

पृष्ठ 195

अब ताराचंद की छाती से गुप्तेश्वर लगा हुआ था। बाप और बेटी का अनोखा और हैरानी भरा मिलाप —गुप्तेश्वर और कोई नहीं, जमाने की सताई हुई बदनसीब गौरी की बेटी सुंदरी थी!

बाबू शामदास उस के गले से लिपटे आंसू बहाते हुए बोला,

"शैतान बाप की बदनसीब बेटी सुंदरी! तुम अब तक अपने कसाई बाप को देख रही हो?"

उस वक्त शामदास की नज़र फर्श पर पड़ी। वो आहिस्ता से उठा और दूसरे लम्हे वही कटार उस के हाथ में थी। शामदास ने अपनी छाती की तरफ कटार की नोक कर के हाथ पीछे हटाया। करीब था कि कटार उस की छाती को चीरती हुई कमर की हड्डी से जा लगती लेकिन फौरन ही गुप्तेश्वर ने दोनों

हाथों से उस का बाज़ू थाम लिया। उस से पहले ही कटार की नोक उस की छाती को छूती हुई इस तरह थरथरा रही थी जैसे हवा में दिए की लौ कांपती है।

उस के साथ ही उस के कानों में प्यार भरी आवाज़ उभरी,

"पिता जी! बस ये काम न करना, जो होना था वो हो चुका।"

शामदास उस से कह रहा था, "मेरी बच्ची। मुझे माफ़ कर दे। इस ज़ालिम बाप को बख्श दे लेकिन ज़िंदा न रख, मार दे। मेरी बेटी अब मेरा जीना और फिर तुम्हारे सामने ज़िंदा रहना हज़ार बार मरने से बदतर है। इसी वजह से मैं इस हुलिए में तेरे सामने आया था कि तेरे काम में रुकावट न पड़े। सुंदरी जल्दी कर और उस हालत में मुझे ज़िंदा रख कर मेरे गुनाहों की गठरी को और भारी न कर। तू अपना फर्ज़ पूरा कर के अपनी बदनसीब माँ के हुक्म की तामील कर, नहीं तो उस की रूह हमेशा के लिए तड़पती रहेगी और उस का गुनाह तेरी गर्दन पर होगा।"

सुंदरी ने उसे बड़े प्यार से उठाया और चारपाई पर बैठा कर उस के गले में बाज़ू डाल कर बोली,

"पिता जी! मेरा फर्ज़ पूरा हो गया। माँ ने जिसे मारने का काम मुझे सौंपा था, वो मेरे मरने से पहले ही मर चुका है। उस की बुरी आदतें, उस के गुनाह एक-एक कर के सब मर चुके हैं और अब उस की ज़िंदगी एक ऐसे इंसान की ज़िंदगी है जिसे किसी अज़ीम इंसान की ज़िंदगी कहा जा सकता है।"

बाबू शामदास उस वक्त दोनों हाथों में मुंह छिपाए सुबक (सिसक) रहा था।

सुंदरी उस के पास बैठ गई और प्यार से अपना हाथ उस के माथे पर फेरते हुए बोली, "पिता जी! आप जिएं। हज़ार बरस जिएं। आप-की मुझे बहुत ज़रूरत है।"

पृष्ठ 196

बाबू के मुंह से कोई बात नहीं निकल रही थी।

सुंदरी ने फिर कहा, "पिता जी उठिये, उठिये मुझे प्यार कीजिये। मैं आप की सुंदरी हूँ। आह मेरे बाबू, मुझसे दिल भर कर प्यार करो।"

बाबू अपना धैर्य खो बैठा था। वो रो रहा था।

सुंदरी ने उस का माथा चूमा लेकिन उस के मुंह से बात नहीं निकल रही थी। इसके बाद काफी देर तक दोनों एक दूसरे की तरफ देखते रहे। जैसे उनके सारे अंग आंखों का ही काम कर रहे हों।

सुंदरी बोली, "बाबू जी, क्या आप ने मुझे पहले ही पहचान लिया था?"

बाबू खुद को संभाल कर बोला, "बिटिया! पूरी तरह तो नहीं लेकिन शक सा ज़रूर पड़ गया था। लेकिन जब तुम ने रुमाल की मांग की, तो मेरा शक और भी पक्का हो गया और उसके बाद जब तुम ने मेरा ही पता पूछा, तो उस वक्त मैंने तेरी आंखों की तरफ देखा और मुझे यकीन हो गया कि ये गुप्तेश्वर ही सुंदरी है। पूरा मामला उस वक्त साफ हो गया जब मैं ने ये रुमाल देखा।"

सुंदरी को ख्याल आया कि बचन सिंह के फांसी लगने के बाद उसने रुमाल के कोने में ये अल्फाज़ रेशम से बनाए हुए थे,

"बदनसीब सुंदरी के गुमशुदा ताज की आखिरी निशानी।"

अपनी बात को जारी रखते हुए बदनसीब शामदास फिर बोला, "बेटी, असल में तो उस पहचान की शुरुआत एक तरह से उस वक्त से शुरू हो गई थी जब मैंने तुझे स्टेशन पर पकड़ लिया था। तेरी आंखों की तरफ नज़र पड़ते ही तेरी माँ 'गौरी' की तस्वीर सामने आ गई थी। उस की आंखें बिल्कुल तेरी जैसी थीं। दूसरे लफ्ज़ों में कल अठारह-बीस बरस बाद मैंने तेरी ही आंखों में देखा था। लेकिन अक्सर कुछ लोगों के चेहरे एक दूसरे से मिल जाते हैं, इसलिए मैंने इस तरफ ज्यादा गौर नहीं किया। लेकिन बेटी, तेरी सारी जिंदगी की कहानी सुनते हुए इस रुमाल का ज़िक्र तो मैंने कहीं नहीं सुना।"

सुंदरी ने आंखें नीची करके कहा, "पिता जी, क्या आप ने नहीं सुना था? जब बाबे रोडू वाली झोपड़ी में मैं रहती थी तो वो एक दिन आए थे। जिस दिन हमारी बंदरिया गुम हो गई थी। मैं जब रोने लगी तो उन्होंने रुमाल निकाल कर मेरी आंखें पोंछी थीं। ये वही रुमाल है जो उसके बाद से मेरे पास रहा। बस यही उनकी..." कहते-कहते सुंदरी की आंखें छलक पड़ीं और गला भर आया।

बाबू ने ठंडी सांस भर कर फिर पूछा, "लेकिन बेटी, तुम ने तो लिखा है कि सुंदरी दरिया में छलांग लगा कर डूब गई थी?"

पृष्ठ 197

"मैं वाकई डूब गई थी लेकिन मरी नहीं थी। मुझे एक बूढ़े मल्लाह ने दरिया से निकाल कर बचाया था। वो बड़ा नेक आदमी था। मैं उसे कभी नहीं भुला सकती।"

"और बिटिया फिर तुम शहर आ गईं?"

"जी हां।"

"और अपना भेस क्यों बदल लिया?"

"इस की कई वजहें थीं। एक तो पुलिस के डर से, क्योंकि मैंने तीन खून किए थे। दूसरे उन का हुक्म था माँ की परवरिश करने का। इस लिए माँ के वास्ते कुछ पैसे और अदीब बन कर कमाना चाहती थी। तीसरे मैं ये भी चाहती थी कि दीगर किताबों के अलावा मैं अपनी आप बीती भी लिखूं, जिस में अपने

ज़ालिम समाज के 'सफ़ेद ख़ून' की तस्वीर पेश करूं, जिस से दुनिया को कुछ फायदा पहुंचे। और चौथा काम ये था आपको..." कहते-कहते सुंदरी रुक गई और उसकी आंखें नीची हो गईं।

बाबू ने उसके सिर पर हाथ फेरते हुए फिर कहा, "तो बेटी, अब तो तेरे सारे काम पूरे हो गए?"

कुछ देर चुप रहने के बाद सुंदरी बोली, "जी हां सब काम और अब मैं मुतमइन हूँ।"

"तो अब तुम हमेशा के लिए मेरी आंखों के सामने रहोगी ना!"

"हां पिता जी, जब तक ज़िंदा रहूंगी आपके पास ही रहूंगी।"

बाबू ने मोहब्बत से बेबस हो कर कहा, "मैं अपनी बेटी के लिए अभी जा कर कपड़े सिलवा लूंगा और तुम अपना ये भेस बदल लेना।"

"हां पिता जी, मैं कल अपना ये भेस ज़रूर बदल लूंगी और अपने असली रंग में..."

"तुझे इस रूप में देख कर मैं किस कदर खुश हूँगा।"

"पिता जी आप को ज़रूर खुश होना चाहिए। अगर आप का दिल खुश न होना चाहे तब भी खुश होना। एक तो मेरी कामयाबी की खुशी में और दूसरे मेरे असली रूप में जाहिर होने की खुशी में।"

"वाह मेरी भोली बच्ची, मेरा दिल क्यों न खुश होगा। ये भी कोई बात है?"

"वाहेगुरु करे ऐसा ही हो।"

"हां तो बिटिया, अधूरे अध्याय का बाकी हिस्सा।"

"वो कल सुबह आपके सामने होगा।" फिर कुछ देर ठहर कर सुंदरी बोली, "लेकिन आप ने अपना हाल तो कुछ नहीं बताया।"

पृष्ठ 198

"बेटी, मेरे हालात ऐसे गुनाह-आलूदा और बुराइयों से भरे हैं कि तेरे सामने वो मेरी ज़बान पर अभी नहीं आ सकते। शुक्र है कि मैंने तुम्हें नहीं बताए। सिर्फ इतना ही बताता हूँ कि जब मैं तेरी माँ को मौत के मुंह में छोड़ कर और सब कुछ समेट कर भाग आया था तो कुछ दिन भटकने के बाद मुझे रेलवे में नौकरी मिल गई। वो भी इत्तेफाक की बात थी। रेलवे मुलाज़िमों की उन दिनों हड़ताल चल रही थी

और डाक गाड़ी के अलावा सब गाड़ियां बंद थीं। आखिर रेलवे ने काम चलाने के लिए नई भर्ती शुरू की और मुझे इस तरह एक जगह मिल गई। और नाम अपना मैंने इस लिए बदल लिया था कि मेरी पिछली ज़िंदगी ऐसी खतरनाक थी जिससे मुझे कई तरह के खतरे मालूम होते थे। ये भी डर था कि पिछली जालसाजियों और बुरी हरकतों की वजह से कहीं ऐसा न हो कि मुझे अदालत के कठघरे में खड़ा होना पड़े।"

****

इसके बाद शामदास बाजार जाकर उसके लिए कपड़े ले आया। दोनों काफी रात गए तक दुख-सुख की बातें करते हुए सो गए।

सुबह जब शामदास सुंदरी के कमरे में गया तो उसने देखा कि ज़नाना लिबास में लिपटी सुंदरी लंबी तान कर सो रही थी। उसने आवाज़ें दीं लेकिन वो न बोली, न ही हिली-झुली। उसने जब उसके मुंह से कपड़ा हटाया तो सर चकरा गया। सुंदरी आखिरी नींद सो रही थी। उसके चेहरे पर नूर बिखरा हुआ था, होंठों पर कामयाबी की मुस्कराहट थी। कल वाला रुमाल उसकी छाती पर था जिसे उसने दोनों हाथों से कुछ ऐसे ढंग से पकड़ रखा था जैसे अर्से तक बिछड़ने के बाद कोई अपने महबूब का हाथ पकड़ता है। रुमाल का रंग गहरा लाल होने की वजह से बाबू शामदास फौरन न समझ सका और चीज़ इस रंग की ओर और भी गहरा कर रही है। रुमाल के नीचे उसने कल डाला कटार का दस्ता देखा जिससे सारा खेल उसकी छाती में घुसा हुआ था।

बाबू के हलक से चीख निकल गई और वो पछाड़ खाकर गिरने लगा। उस वक्त उसकी नज़र चारपाई पर रखे हुए कुछ कागजों पर पड़ी। ये सुंदरी की आखिरी चिट्ठी थी जो इस तरह थी:

'मेरे मोहतरम पिता जी!

मुझे पता है कि आप बहुत धैर्य और हौसले वाले आदमी हैं और साथ ही रूहानियत से भी वाकिफ हैं। मैं इतनी जल्दी आपसे बिछड़ रही हूँ, इस का दुख आप को कम नहीं होगा। लेकिन पिता जी! अगर सिलसिले में आप मेरी हालत का अंदाज़ा लगाएंगे तो आप के दिल को यकीनन करार आ जाएगा।

आप को पता है, अपनी ज़िंदगी के सरताज के बगैर मैंने आखिरी दो-ढाई साल किस तरह गुजारे हैं,

ये भी उन्हीं के हुक्म की तामील में। उन के हुक्म में ये ताकत थी कि मैं उनसे बिछड़ कर भी अब तक ज़िंदा रही, नहीं तो मेरे लिए बिछड़ कर एक सांस लेनी भी दूभर थी।

लेकिन पिता जी, इतना कुछ होने पर भी एक बात मुझे गम सा देती है। मुझसे एक गुनाह हो चुका है, सिर्फ गुनाह ही नहीं, अपने मालिक के हुक्म की अदूली भी। इसके बदले वाहेगुरु तो मुझे सज़ा देगा ही लेकिन मुझे डर है कि पता नहीं वो मुझे माफ करेंगे या नहीं।

वो गुनाह है पाला सिंह और उसके तीन साथियों की जानें लेना। लेकिन मैं उस वक्त अंधी हो गई थी। गुस्से और हिंसा ने मेरी अक्ल गुम कर दी थी। उन्होंने मुझे समझाने की हद से ज्यादा कोशिश की थी और मैंने समझ भी गई थी लेकिन फिर भी पता नहीं क्या हो गया कि मैं भी सोचने लगी कि उनके खून का बदला लेने का उससे बढ़कर और कोई तरीका नहीं। लेकिन मुझे आज पता चला, पिता जी, आप की तरफ देख कर। मेरी आज आंखें खुली हैं कि बदले लेने का सबसे अच्छा और कुदरती ढंग यही है कि जिस तरह बदले में आपने मुझसे लिया है। यानी किस तरह मेरी तकलीफों को पढ़कर आप की ज़िंदगी का रुख बदल गया है। यही हथियार अगर मैं उन कातिलों पर इस्तेमाल करती और दिल-दिमाग और छुरी की जगह कलम से काम लेती तो न सिर्फ उनकी ज़िंदगी ही बदल जाती बल्कि और भी कई भटकते हुए सीधे रास्ते पर आ जाते। लेकिन गुज़रा हुआ वक्त हाथ नहीं आता। इसलिए पिता जी आप परमात्मा के हुज़ूर में यही प्रार्थना करें कि वो मुझ पर रहम करे।

मेरे लिए उनका हुक्म था कि जब तक उनकी बूढ़ी माँ की तरफ से बे-फिक्र न हो जाऊं तब तक उनके पास न जाऊं। इसलिए पिता जी अब जब आप मुझे मिल गए हैं तो मैं अपनी सास की तरफ से हमेशा के लिए बे-फिक्र हो गई हूँ और यह बोझ आज से आप के कंधों पर है।

इसके अलावा माँ का जो फर्ज़ मेरे जिम्मे था, उसे भी उतार चली हूँ। उस के लहू से जो शांत होना चाहती थी, आप के आंसुओं से उससे भी कहीं ज्यादा शांत होगी। इस की मुझे पूरी उम्मीद है।

चौथा फर्ज़ जो मेरे जिम्मे था वो था अपनी आपबीती को नावल की शक्ल में लिख कर पत्थर-दिल और बे-रहम समाज का जीता-जागता खाका खींच कर देना। ये काम भी पूरा हो गया है। अब मैं अपनी ज़िंदगी के सारे फर्ज़ मुकम्मल करने के बाद इस समाज के सिर पर बोझ होकर अपने प्रीतम के चरणों में जा रही हूँ।

मेरे प्यारे पिता जी! आपने खुद ही रात को कहा था कि मैं बेटी तुझे असली रूप में देखकर खुश हूँगा, इसलिए मुझे उम्मीद है कि आप अपने वादे को ज़रूर निभाएंगे और मुझे मेरे असली रूप में देखकर ज़रूर खुश होंगे।'

मैं ज़िंदा रह कर अपने बाप के साये की ख़ुशी नहीं हासिल कर सकी, लेकिन पिता जी मेरी ज़िंदगी अब उस डोरी की तरह थी जिस के बिना रहा नहीं जा सकता। और फिर टूटा हुआ दिल कितनी चोटें बर्दाश्त कर सकता है? सब से बड़ी बात ये है कि इस वक़्त मैं एक मग़रूर ख़ूनी की हैसियत में हूँ। इस लिए फांसी लगने के बजाय छुरी खाने को ज़्यादा बेहतर समझती हूँ।

मैंने आप से वादा किया था कि जब तक ज़िंदा रहूँगी आप के पास ही रहूँगी। वो आप देख रहे हैं कि मेरा इकरार आख़िर तक सच्चा साबित हुआ है। इस के अलावा अधूरे अध्याय को पूरा करने की भी आप ने कई बार ताकीद की थी। आप जानते हैं कि मेरी किताब और मेरी ज़िंदगी असल में दोनों एक ही चीज़ें हैं। इस लिए जहाँ आज मेरे नावल का अधूरा अध्याय मुकम्मल होता है, इस के साथ ही मेरी ज़िंदगी के नावल का भी अधूरा अध्याय मुकम्मल हो गया है।

मेरे मोहतरम पिता जी! आसीश (आशीर्वाद) दीजिये कि मैं स्वर्ग में जा कर अपने प्रीतम के गले लग कर इस लंबी जुदाई के दुख को भूल जाऊं और हमेशा-हमेशा के लिए अपने सरताज की ख़िदमत करती रहूँ।

मेरे प्यारे पिता जी! आप की बच्ची की तरफ़ से आख़िरी प्रणाम। ज़िंदगी में पहली और आख़िरी बार मिल कर हमेशा के लिए बिछड़ने वाली रास्तें की एक मुसाफ़िर।

-- आप की

सुंदरी

***** समाप्त *****

sjeet